शिव शब्द सागर

[द्वितीय भाग]

महर्षि शिवव्रतलाल जी महाराज

फकीर लाइब्रेरी चैरिटेबिल ट्रस्ट
मानवता मन्दिर, होशियारपुर (पंजाब)

शिव शब्द सागर

[द्वितीय भाग]

(महर्षि शिवब्रतलाल जी महाराज कृत
हिन्दी शब्दों का संग्रह)

संग्रहकर्त्ता

ठा० पदमसिंह गहरवार
हुजूराबाद (आं०प्र०)

सम्पादक

देवीचरन मीतल
लेखराजनगर, अलीगढ़

प्रकाशक

फकीर लाइब्रेरी चैरिटेबिल ट्रस्ट
मानवता मन्दिर
सुतेहरी रोड, होशियारपुर (पंजाब)

प्रथम बार अप्रैल १९७४	सर्वाधिकार सुरक्षित	

मुद्रक : सतीशचन्द्र मित्तल
दयाल प्रिंटिंग प्रेस, लेखराजनगर, अलीगढ़ ।

दो शब्द

"शिव शब्द सागर" का प्रथम भाग पहिले प्रकाशित किया जा चुका है। यह दूसरा भाग प्रस्तुत है। इस भाग की विशेषता यह है कि जहां इसमें बहुत सी धुनों के शब्द हैं वहां दोहा, चौपाई, रमेनी, साखी, लावनी, कुण्डलियां, छन्द, सोहर, सोरठा आदि उच्च कोटि के भावों से परिपूर्ण शब्द हैं जिनको यदि उनकी लय में गाया जाय तो रोमांच होजाता है, मन निमग्न होजाता है अर्थात् समाधि जैसी अवस्था आजाती है। महर्षि शिवब्रतलाल जी महाराज ने यह जीवों के कल्याण के लिये बड़ी ही कृपा की है जिससे मन में प्रेम, भक्ति, ज्ञान और सेवा आदि के भाव जाग्रत हो जाते है। यह पुस्तकें ऐसी हैं जो प्रत्येक घर में होनी आवश्यक हैं और नित्यप्रति पाठ के लिए अत्यन्त उपयोगी हैं।

इस पुस्तक के प्रकाशित करने में कागज का मूल्य लगभग दूना होजाने तथा छपाई, जिल्दबन्दी का व्यय बढ़ जाने के कारण पुस्तक का मूल्य बढ़ गया है मगर फिर भी 'फकीर लायब्रेरी चेरिटेबिल ट्रस्ट' होशियारपुर ने इसका मूल्य लागत मात्र रक्खा है। साथ ही मन्दिर की ओर से इसका कोई मूल्य भी नहीं है। पुस्तक लेने वाला व्यक्ति 'मानवता मन्दिर' को जो चाहे सहायतार्थ दे सकता है।

आशा है प्रत्येक प्रेमी विशेष रूप से सत्संगी भाई इससे लाभ उठावेंगे।

विनीत :

देवीचरन मीतल

शब्द सूची

इ

उ

ए

क

घ

च

छ

ज

ठ

ढ

त

ध

न

प

फ

ब

भ

म

य

र

ल

व

श

स

ह

ज्ञ

शुद्धि अशुद्धि पत्र

पृष्ठ संख्या	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५	१३	अगन	अगम
५	२२	कमी	कभी
६	१५	नन	नैन
८	८	लगाज़ी	लगाजा
१५	३	पिती	पित्टी
१५	३	देविया	देवियान
२१	१६	बलि री	बलिहारी
२६	२३	नहीं जाना	नहीं कहीं जाना
३१	२१	आने	माने ?
३७	१६	तसे	तैसे
३६	अन्तिम	से	में
७६	२४	प्रेम जन	प्रेमीजन
७६	१४	बापें	बायें
८०	६	भीजर	भीतर
८१	७	यमके	चमके
८८	३	बाजन	बाजत
६४	१४	छूट	छूटें
६६	१	सहस	सहज
६८	४	कलीजा	कलेज़ा
६८	१४	स्वाद	सवाद
१००	६	दिन है जहाँ	दिन नहिं जहाँ
१०४	नीचे से दूसरी	कदरानी	कदराई

पृष्ठ संख्या	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१२८	६	कौ	की
१३६	१९	ऊव्रर	ऊपर
१४९	५	निकसल	निकसत
१५५	५	वान	वात
१६०	१	घिदुर	विदुर
१७१	नीचे से दूसरी	पता	पताल
१७२	८	उदासा	उदास
१७२	१८	क ां	कहा
१७९	२	जिहा	जिया
१९२	११	सोया	सोचा
१९२	१५	खदा	खुदा
२४१	५	पड़ा	पढ़ा
२४१	९	ऋृति	श्रुति
२४३	१८	४२३	४३४
२४३	२	उन्मुख	उन्मन
२४३	१३	जिभ्य	जिभ्या
२४६	७	कामतुर	कामातुर
२४९	२	षरख	परख
२४९	९	टौर	ठौर
२५६	८	अमगान	अलगान
२९६	१३	राधस्वामी	राधास्वामी
३०४	६	सुखपति	सुषुप्ति

राधास्वामी दयाल की दया

शिव शब्द सागर

[द्वितीय भाग]

राधास्वामी सदा सहाय

शिव शब्द सागर

द्वितीय भाग

मंगला चरन

नमामि सतगुरुं शान्तं, प्रत्यक्षं सत रूपिणम् ।
प्रसन्न वदनाचयं, सर्व देव समूह मयम् ॥
अचिन्त्या व्यक्त रूपाय, निर्गुणाय गुणात्मने ।
नमस्ते जगदाधारं, निराधारं च केवलम् ॥
गुरु पादोदकं पानं, गुरो रुच्छिष्ठ भोजनम् ।
गुरु मूर्ति सदा ध्यानं, गुरुस्तोत्रं सदा जपः ॥
गुकारश्चान्धकारस्तु, रुकारस्तम निरोधकृत ।
अन्धकारं विना शित्वा, चिन्तां विनाशित्वा दुहेः ॥
गुकारश्च गुणातीतो, रुपातीतो, रुकारकः ।
गुण रूप विहीनत्वाद्, गुरुरित्यभिधीयते ॥
सर्वश्रुति शिरोरत्नः निराजित् पादाम्बजम् ।
यस्य स्मरण मात्रेण, ज्ञानमुत्पद्यते स्वयम् ॥
एवं गुरु पदं श्रेष्ठं, देव नामपि दुर्लभम् ।
ध्रुवं तेषांय सर्वेषाम्, नास्ति तत्वं गुरोपरम् ॥
राधास्वामी गुरोनमि, परम नामं तथैवच ।
सकर्मणा मनसा वाचा, सर्व दाराध्ययेद गुरुम् ॥
शुद्ध चैतन्य चिन्मयम् सर्व, त्रैलोक्य परमं परम् ।
तुर्य्या तुर्य्यातीतं, राधास्वामी वराननम् ॥

राधास्वामी दयाल की दया

बीसवीं धुन

(१)

स्वामी मौज करो तुम ऐसी, कटे दुख दारुन बेरी।
मेहर दया के काज में कुछ, लाओ ना देरी ॥टेक॥
तुम समरथ मेरे साईंयां, मैं दीन अधीना।
मुझ से क्या हो तुम जगत में, अति परवीना ॥ स्वामी०
त्राह त्राह कर त्राह कर, चरनों में आया।
अपना सेवक जान कर, प्रभु कीजे दाया ॥ "
विपत पड़ी सिर आन कर, सब विकल शरीरा।
विनय करूँ कर जोड़ कर, काटो तन पीरा ॥ "
दीन दयाल कृपाल तुम, मेरी यह आसा।
दूर करो त्रय ताप को, दे शरन दिलासा ॥ "
संकट भारी पड़ गया, सूझे नहिं कोई।
राधास्वामी तुम सम दीन हित, कोई और न होई ॥ "

(२)

दुखियों का तू सहारा स्वामी, नाम तेरा है करतारा ॥टेक॥
निर्गुन सगुन रूप प्रभु तेरा, निराकार और साकारा।
वार पार कोई कैसे पावे, वेद कहे अपरम्पारा ॥ दुखियों०
अन्तरयामी घट घट बासी, अविनासी जगदाधारा ॥
जब लग दया दृष्टि नहीं तेरी, जाये न कोई भवजल पारा ॥ "
पतित उद्धारन भव भय तारन, कारन कारज करतारा।
दीनबन्धु करुना के सागर, आगर अद्भुत रखवारा ॥ "

टूटी नाव पड़ी भवसागर, आन पड़ी है मँझधारा।
काढ़ निकारो करुना सिंधु, वेग सुनो मेरी भरतारा ॥ दुखियों०
रात अँधेरी डगर न सूझे, बूड़त हूं भव जल धारा।
राधास्वामी दया के सागर,अब तो करो मेरा निस्तारा ॥ ,,

(३)

गुरु भक्ति रहे मेरे अंग संग, करूँ काल करम को अंग भंग ॥टेक॥
व्यापे नहिं माया मोह आन, निज रूप को बख्शो अपना ज्ञान।
लगे चरन कमल में मेरा ध्यान, चढ़ परमारथ का रंग ढंग। गुरु०
संसार है यह दुर्मति की खान, दुख से हूं मैं दुखित महान।
तुम दाता हो सतगुरु सुजान, बस में करदो मेरा मन मतंग ॥ ,,
घट का पट खोलो दया से आज, साजूँ भक्ति का प्रेम साज।
सुख सम्पत चहुं दिस रहे गाज, सुरत उड़े गगन में ज्यों पतंग ॥ ,,
दुविधा चतुराई जाये नास, रहूं निस दिन पद सरोज पास।
प्रगटे सुख आनन्द हुलास, बाढ़े हिया जिया में उमंग ॥ ,,
चढ़ सहसकमलदल त्रिकुटी आये, सुन्न में गुरु मूरति ध्यान पाये।
बंसी धुन भँवर गुफा बजाये, दिखला दो सतपद का सुरंग ॥ ,,
लख अलख अगम की राह घाट, पहुँचूँ राधास्वामी अघट घाट।
उलटूँ जनम मरन का टाट, घट में मेरे बाजे मोर चंग ॥ ,,

(४)

वह आया आया आया, गुरु रूप में दरस दिखाया दिखाया
दिखाया ॥टेक॥
शब्द स्पर्श गंध रस रूपा, पवन आकाश अग्नि जल कूपा।
आय विराजा जग का भूपा, भेद अपार बताया बताया
बताया ॥वह०
अजर अमर अविनाशी प्यारा, सब में है सबसे है न्यारा।

निराधार वह जगदाधारा, आप को आप लखाया लखाया
लखाया ॥ वह०
घट के घाट पर बैठक ठानी, प्रान के रूप बना है प्रानी।
त्वचा आँख कान मृदु बानी, सब में रमाया रमाया रमाया ॥ ,,
सुरत में शब्द शब्द में सूरत, निराकार साकार की मूरत।
ग्रह नछत्र और रास महूरत, कोई कोई भेद यह पाया पाया
पाया ॥ ,,
दया सिंधु है सहज कृपाला, दीन बन्धु है दीन दयाला।
भक्ति पन्थ का निज प्रतिपाला, राधास्वामी नाम सुनाया सुनाया
सुनाया ॥ ,,

(५)

सतगुरु प्यारे ने बताया भेद निराला हो ॥टेक॥
ना कोई साथी ना कोई संगी, ना कोई सगा न कोई अरधंगी।
माया काल सकल छिनभंगी, सबका छिन में दिवाला हो ॥सतगुरु०
मन मन्दिर में आजा बन्दे, कर कुछ योग विचार के धन्दे।
छूटें करम के दारुन फंदे, घट में भानु उजाला हो ॥ ,,
प्रीति प्रतीत की राह में आजा, झूठे मोह का जाल कटाजा।
बिगड़ी अपनी बात बनाजा, पीजा प्रेम पियाला हो ॥ ,,
तीन ताप की त्याग गलानी, तज असत्त की भरम कहानी।
गुरु गम सत सत ले पहचानी, मार काल सिर भाला हो ॥ ,,
अवसर बीते फिर पछताना, नहीं मिलेगा ठौर ठिकाना।
क्यों तू है मूरख दीवाना, राधास्वामी का मतवाला हो ॥ ,,

(६)

भव का टाट समेट कर भक्ति रस पाया ॥टेक॥
इत से तोड़ा उत को मोड़ा, गुरु चरनन में आया।
संशय चिंता सकल मिटी जब सत पद नेह लगाया ॥ भव का०

कहाँ का आना कहां का जाना, आवागवन नसाया।
अपने घट में ज्ञान प्रकाशा, सहज ही योग कमाया ॥ भवका०
सुमिरन भजन ध्यान गुरु सेवा, सब अन्तर प्रगटाया।
देखा रूप अरूप अगोचर, अनहद तूर बजाया ॥ भवका०
जप तप संयम ध्यान भजन जो, सब का सार लखपाया।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, अब नहिं व्यापे माया ॥ भवका०

(७)

सतगुरु प्यारे ने सुनाया मर्म कहानी हो ॥ टेक ॥
बूझ अबूझ का सार सुझाया, सूझ असूझ की बात बताया।
तब सत पद का भेद लखाया, मिल गया पद निरवानी हो ॥सतगुरु०
सुरत शब्द की राह दिखाई, सन्त पन्थ की डगर चलाई।
सहज ही अब अपनी बन आई, होगये ठौर ठिकानी हो ॥ सतगुरु०
जीव ब्रह्म का रूप पिछाना, उपजा हृदय सत मत ज्ञाना।
घटका मिटा तिमिर अज्ञाना, पाई अगम निशानी हो ॥ ,,
अहंकार मद लोभ त्यागा, क्रोध मोह का टूटा धागा।
सोया भाग आप अब जागा, छूटी आनी जानी हो ॥ ,,
सदस कँवल गढ़ सुरत से तोड़ा, त्रिकुटी ब्रह्म से नाता जोड़ा।
ब्रह्म गुफा माया मद फोड़ा, राधास्वामी धाम लखाई हो ॥ सतगुरु०

(८)

अजी सय्यां से मिलाना होगया ॥टेक॥
बहु दिन भूले मोह भर्म में, भटका खाया कर्म धर्म में।
अब तो रम रहा सत के मर्म में, ठौर ठिकाना होगया ॥ अजी०
तीन ताप से व्याकुल रहता, सुख दुख जग के सिर पर सहता।
कभी माया कभी काल को गहता, अब घट ज्ञाना होगया ॥ ,,
विरह अग्नी में निश दिन जरता, जीते ही जी नित में मरता।
सब का बोझ सीस पर धरता, आँसू बहाना होगया ॥ ,,

सतगुरु मिले दीन हितकारी, काल फंद से दिया छुटकारी।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, गुरु का दिवाना होगया ॥ अजी

(९)

सोच समझ जड़ प्रानी, तेरा नर तन बीता जात रे ॥टेक॥
खान पान निद्रा में भूला, भक्ति भजन अलसात रे।
पल में बिनस जाये यह देही, ज्यों तारा परभात रे ॥ सोच०॥
तीरथ राज समाज गुरु का, क्यों नहीं संगत जात रे।
भूल भरम तज काम क्रोध तज, लख लख यम का घात रे ॥ ,,
भव सागर एक अगम पंथ है, त्रिय तप का उत्पात रे।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, सतपद मग दरसात रे ॥ सोच०

(१०)

गुरु ही तेरे सहाई रे मन, गुरु ही तेरे सहाई ॥ टेक ॥
सपने में तोहि राज मिल्यो है, सम्पत मान बड़ाई।
आँख खुली तब सब ही बिनसे, ज्यों सपना रैनाई ॥ रेमन गुरु०॥
झूठ झूठ में सांचा बरते, सांच से चित न लगाई।
जग असार में मन भरमाया, गुरु मूरत बिसराई ॥ ,,
नन उघार दृष्टि भर देखा, नहीं कोई संगी सहाई।
अन्त अकेला हंस सिधारा, तज अभिमान बड़ाई ॥ ,,
यह जग बालु भीत सम जानो, ज्यों बादर की छांई।
बिनसत देर लगे नहिं याको, ता में कौन भलाई ॥ ,,
अवसर सुगम समय भल आया, मानुष देही पाई।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, ले सतगुरु शरनाई ॥ रे मन गुरु०

(११)

मानुष जनम सुधारो साधू मानुष जनम सुधारो ॥टेक॥
अपनी करनी पार उतरनी, मन में समझ बिचारो।
जैसी करनी वैसी भरनी, जनम जुवा मत हारो ॥ साधु० ॥

धन सम्पत और हाट हवेली, एको काम न आवे।
यह बन्धन है यम की फांसी, अन्तकाल पछतावे॥ साधु०
मात पिता भाई सुत बन्धु, संग न कोई सहाई।
गुरु की दया से काज सँवारो, बनत बनत बन जाई॥ साधु०
अवसर पाया नरतन पाया, दुर्लभ अधिक अनूपा।
कर सतसंग सार कुछ समझो, निरखो अपना रूपा॥ ,,
राधास्वामी राधास्वामी, राधास्वामी गाओ।
राधास्वामी चरनन ध्यान लगाकर, धुरपद जाये समाओ॥ ,,

(१२)

तू फकीर है कैसा गुरु रंग से रंगजा प्यारे ॥टेक॥

सुमिरन ध्यान गुरू का मन में, हरदम सांझ सकारे।
जहाँ देखे तहां गुरु की लीला, या विधि चल भव पारे॥ तू फकीर०
बन परवत नद शैल अपारा, नभ जल थल गुरु रूपा।
यह जग सत्त पुरुष की छाया, सतगुरु भूप अनूपा॥ ,,
साँस साँस में नाम गुरु का, रसना रस को पावे।
मन में पल पल ध्यान सँभारे, सहजे तारी लावे॥ ,,
जो जो करे सो गुरु की सेवा, जो खावे परसादी।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, गुरुमुख रहे समाधी॥ तू फकीर०

(१३)

होजा मेरे प्यारे आज तू फकीर सांचा ॥टेक॥

गुरु की अब पकड़ ओट, त्याग जगत भाव खोट।
सही घनी यम की चोट, अब न लगे आंचा॥ होजा०
सार गह तज असार, झूठी जग की बहार।
सतगुरु को करले यार, सांच मीत जांचा॥ ,,
राधास्वामी राधास्वामी, सतगुरु है तेरे हामी।
राधास्वामी पद नमामी, गह चरन बांचा॥ होजा०

[१४]

आ आ गुरु के शरन फकीरवा ॥टेक॥

तू पपीहा गुरु स्वाँती के जल, गगन गुरु तू बसे रसातल।
शब्द डोर गह गगन मंडल चल, धार हिये गुरु चरन फकीरवा ॥आआ
कथनी बदनी तज मेरे भाई, करनी कर कुछ होये भलाई।
तब रहनी से लव रहे लाई, यह सतगुरु का बचन फकीरवा ॥ ,,
उठत बैठत सोया जागा, मन रहे इष्ट ध्यान में लागा।
उपजे दृढ़ चित में अनुरागा, कर निस दिन यह यतन फकीरवा ॥ आआ
सहस कँवल चढ़ त्रिकुटी आजा, सुन्न महासुन्न तारी लगाजी।
भँवरगुफा में मुरली बजाजा, सत रहे बीन की लगन फकीरवा ॥ ,,
तू सतगुरु का आज्ञाकारी, तू सारी है नहीं संसारी।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, सेवक का यही चलन फकीरवा ,,

(१५)

मोह नींद तज उठ मन पापी, अन्त समय पछताओगा ॥टेक॥

दौलत दुनिया माल खजाना, माया का सब ताना बाना।
इन सबका कुछ नहीं ठिकाना, कोई काम नहीं आयेगा ॥ मोह०
क्या बैठा है फूला फूला, क्यों अपने अज्ञान में भूला।
क्यों संसार हिंडोले झूला, ऊपर नीचे जावेगा ॥ मोह०
सत और असत नहीं पहिचाना, रैन दिवस रहा सोना खाना।
मानुष जनम सार नहीं जाना, यम के जाल बंधावेगा ॥ ,,
यह संसार सपन की माया, झूठा तन मन झूठी काया।
सच्चा जान वृथा भरमाया, दौड़ दौड़ मर जावेगा ॥ ,,
मोह नींद में हो मतवारा, निज स्वरूप का ध्यान विसारा।
राधास्वामी का घट कर दीदारा, जाग जाग फल पाओगा ॥ ,,

(१६)

सैयां मिलने की बिरियाँ आगई ॥टेक॥

यह संसार मेघ की छाया, कभी गुप्त कभी प्रगट जनाया।

दुविधा दुचिताई है माया, सुन धुन और समा गई ॥ सय्यां० ॥
महल रचाया रंग बिरंगी मैं भई कीट पिया भये भृंगी ।
रंग पाये नहीं बनूँ कुरंगी, भेद अगम का पागई ॥ सय्यां०
इस मन्दिर में नौबत झड़ती, भूल भरम में मैं नहीं पड़ती ।
नौ दर छोड़ दसम दर उड़ती, सुन्न अटा सुरत छागई ॥ सय्यां०
विषय भोग की धूर उड़ाई, सार शब्द से लव को लगाई ।
नहीं कहीं आई नहीं कहीं जाई, आवागवन नसाइ गई ॥ ,,
आसा छोड़ी मनसा छोड़ी, काल करम से नाता तोड़ी ।
राधास्वामी चरन से चित को जोड़ी, भरम अज्ञान मिटा गई ॥ ,,

(१७)

एक दिन माटी में मिल जाना ॥ टेक ॥

तेल फुलेल केवड़ा चन्दन, भूषण बसन और काया मंजन ।
वृथा हैं सब सोच समझ मन, यह तन भस्म समाना ॥ एक दिन
चार जना मिल तोहि उठावें, अब घट मरघट ले पहुँचावें ।
भस्मीभूत कर घर फिर आवें, हंस अकेला जाना ॥ ,,
कौड़ी कौड़ी माया जोड़ी, धन सम्पति और घोड़ा घोड़ी ।
बीत गई आयु रही थोड़ी, चेत मैं तोहि चिताना ॥ ,,
लट खोले घर तिरिया रोवे, मात पिता सुत सुध बुध खोवे ।
प्राण बिहीन खाट नर सोवे, या दिन सब ही आना ॥ ,,
भव सागर में गोता खाया, भोग विषय नर जनम गँवाया ।
झूठी माया झूठी काया, इन संग क्यों भरमाना ॥ ,,
ऊँची जाति नाम जग पाया, झूठ साँच कह सब ही बुझाया ।
आप फँसा औरनहु फँसाया, वृथा जनम बिताना ॥ ,,
छिन छिन आयु घटत दिन राती, किसके पूत हैं किसके नाती ।
मरन समय कोई संग न साथी, तोहि अकेले जाना ॥ ,,
माया फांस गले में डारी, काहू बिध उतरे नहीं पारी ।

धन दौलत बंधु सुत नारी, कोई साथ न जाना ॥ ,,
ध्यानी भये मोह नहीं छूटा, ज्ञानी भये भरम नहीं टूटा ।
निस दिन बंधे यमराज के खूंटा, धिक नर पशू समाना ॥ एक दिन

(१८)

मन अन्त काल जब आता है ।

धन सम्पति और मान बड़ाई, साथ नहीं कुछ जाता है ॥टेक॥
किसका कौन पुत्र हुआ उस दिन, कौन बन्धु हित आता है ।
कुटुम्ब कबीला काम न आवे, झूठा जग का नाता है ॥ मन०
बायें तिरिया आंसू बहावे, दायें सुत पितु माता है ।
चलते समय न संग हो कोई, हंस अकेला जाता है ॥ ,,
बस्ती छोड़ मोड़ मुँह सबसे, ऊजड़ ग्राम बसाता है ।
कोई गाड़े कोई मांटी मिलावे, कोई आग जलाता है ॥ ,,
वा दिन की कुछ सुध कर मन में, क्यों भूला भरमाता है ।
जो नहिं चेत करे गुरु संगत, रोता और पछताता है ॥ ,,
काल करम की डगर कठिन है, यम उत्पात मचाता है ।
पंथ न सूझे रात अँधेरी, मारग कौन दिखाता हैं ॥ ,,
इस जग में रहना दो दिन का, जो आया सो जाता है ।
राजा रंक भिकारी पंडित, काल सबन को खाता है ॥ ,,
भज गुरुनाम लाग गुरु सेवा, गुरु संग काज बनाता है ।
राधास्वामी चरन बलिहारी, सेवक गुरु गुन गाता है ॥ ,,

(१९)

मरघट की सुध क्यों भूली है ॥टेक॥

कर्म फांस में जीव फँसाने, छूटन की कोई राह न जाने ।
काल सीस पर डंडा ताने, जनम मरन एक सूली है ॥ मरघट॥
हाथ पांव सब ऐंठन लागे, हिचकी लेत प्रान तज भागे ।
मन इन्द्री न जगाये जागे, काया मध्य में झूली है ॥ मरघट ॥

रोवत मात पिता सुत भाई, काम न आये सगा सगाई।
तिरिया बिलपे लट छटकाई, सूई काल ने गोली है॥ ,,
चार जने मिल खाट उठाया, औघट घाट में ले पहुँचाया।
अग्नी प्रचंड में देह जराया, जैसे धान की पूली है॥ ,,
एक घड़ी घर में नहीं राखे, भय बस भूत प्रेत सब आखे।
बिना बिचारे मुख से भाखे, बुद्धि चक्षु में फूली है॥ ,,
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, कहता हूं यह सोच बिचारी।
गुरु करदे भव सागर पारी, ज्ञान अंकुश दे हूली है॥ ,,

(२०)

महिमा बरनी न जाये, साधु महिमा बरनी न जाये ॥टेक॥
भव सागर एक अगम पंथ है, बूड़े सकल जग जाई।
नौका शब्द बनाया गुरु ने, जन को लीन चढ़ाई॥ साधु०
माया जाल फँसा है भारी, ऋषि मुनी सकल बंधाई।
योग युक्ति की खड्ग हाथ दे, काट दई बरियाई॥ ,,
जड़ चेतन की ग्रंथी अद्भुत, छूटत अति कठिनाई।
गुरु मत ज्ञान से गाँठ खुली है, मन रहा बहु हरषाई॥ ,,
जहाँ देखूँ अज्ञान पसारा, सब ही अविद्या छाई।
ज्ञान कटारी गुरु ने दीन्हीं, ताको मार गिराई॥ ,,
गुरु बल से रिपुदल हम मारे, सतगुरु हुये हैं सहाई।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, गुरु महिमा क्या गाई॥ साधु०

(२१)

बिन गुरु ज्ञान की गम नहीं, साधु ज्ञान है गुरु आधारा ॥टेक॥
करम भरम में जीव फँसाना, भटका बारम्बारा।
जब गुरु मिले तो भेद बतावें, अन्तर देके सहारा॥ साधु०
तीरथ बरत में भरमे प्रानी, सूझे न सार असारा।
जब गुरु मिले तो भेद बतावें, करें सहज छुटकारा॥ साधु०

ज्ञान ध्यान की समझ नहीं है, नहीं बिवेक विचारा।
जब गुरु मिले तो भेद बतावें, होये जीव उपकारा ॥ ,,
योग युक्ति का मर्म कठिन है, क्या कोइ जाने गँवारा।
जब गुरु मिले तो भेद बतावें, यूँ ही हो निस्तारा ॥ साधु०
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, धरा सन्त अवतारा।
जब गुरु मिले तो भेद बतावें,, अन्तर शब्द भंडारा ॥ साधु०

(२२)

लख न परे तेरी माया, स्वामी लख न परे तेरी माया ॥टेक॥
जित देखूँ तित तेरी लीला, धूप अन्ध अरु छाया।
रज सत तम में रहत निरंतर, अगम अनाम अमाया ॥स्वामी०॥
जनम मरन संसार से न्यारा, नहीं आया नहीं जाया।
जीव अजीव में डोलत घूमे, वार पार नहीं पाया ॥ स्वामी०
निराकार सर्वज्ञ निरूपम, रूप प्रेम अरु दाया।
त्राह त्राह तेरो चरन नमामी, काम क्रोध भरमाया ॥ स्वामी०
निर्गुण सगुन सकल तेरी रचना, सब के पार रहाया।
भक्त जनन प्रेम की मूरत, सत संगत कुछ पाया ॥ स्वामी०
बार बार चरनन बलजाऊँ, वारूँ प्राण अरु काया।
आजा घट में मेरे बसजा, निस दिन प्रीत लगाया ॥ स्वामी०

(२३)

नाम दान मोहि दीजो सतगुरु, नाम दान मोहि दीजो ॥टेक॥
अर्पण करूँ तन मन तुझ पर, महिमा तेरी गाऊँ।
सुमिरन ध्यान भजन में नित प्रति, नाम पदारथ पाऊँ ॥ सतगुरु०
अमृत नाम घूँट पिऊँ निस दिन, भोग प्रीत से लगाऊँ।
आपा बिसर सकल जग बिसरूँ, नाम की तारी लाऊँ ॥ सतगुरु०
भोग वासना जग की त्यागूँ, हिये से सकल भुलाऊँ।
प्रीति नाम से लगे मेरी अन्तर, चरन कमल मिल जाऊँ ॥ ,,

(२४)

कैसे मन ठैराऊँ, साधु कैसे मन ठैराऊँ ॥टेक॥
मेरा मन मेरे हाथ न आवे, मन ही मन पछताऊँ ।
सोया मनुआ मोह नींद में, केहि विधि ताहि जगाऊँ ॥ साधु० ॥
कर्म न धर्म ज्ञान नहीं पूजा, भजन में कैसे लगाऊँ ।
मन के मारे बन में जाऊँ, बन तज बस्ती आऊँ ॥ ,,
चंचल मूढ़ निपट अज्ञानी, कहां याको लिये जाऊँ ।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, गुरु चरनन लिपटाऊँ ॥ ,,

(२५)

मेरा मन बांका गुरु चरनन लागा ॥टेक॥
जा दिन चरन कमल गुरु परसे, बढ़ा प्रेम अनुरागा ।
अब नहीं सोवे मोह नींद में, जागा जागा जागा ॥ मेरा मन०
भाव भक्ति में मगन रहे नित, विषय भोग तज भागा ।
केहि विधि आज सराहूं मन को, हंस बना है कागा ॥ ,,
सुरत शब्द की करत कमाई, गावत अनहद रागा ।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, जागा मेरा भागा ॥ ,,

(२६)

कौन तुझे समझावे रे मन, कौन तुझे समझावे ॥टेक॥
धन सम्पत दारा सुत नाती, कोई काम न आवे ।
इनकी मोह मया में भूला, भरम भरम भरमावे ॥ रे मन०
ज्ञानी ज्ञान जाल का लम्पट, योगी सिद्धि दिखावे ।
ज्ञान सिद्धि दोऊ काल के चेरे, यम की फांस फँसावे । ,,
एक तो झूठी भक्ति सिखावे, दूजा करम करावे ।
तीजा वाचक ज्ञान कथे नित, वाक विचित्र सुनावे ॥ ,,
कर्म ज्ञान और भक्ति महातम, इनकी सूझ न आवे ।
यह भी बन्धन वह भी बन्धन, बन्धन बन्ध बन्धावे ॥ ,,

सार शब्द बिन राह न कोई, और बाट भटकावे।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, सतगुरु शब्द लखावे ॥ ,,

(२७)

कौन कुमति उरझाना रे मन, कौन कुमति उरझाना ॥ टेक ॥
दुख में दुखी रहे निस बासर, सुख में रहत भुलाना।
दुख सुख एक एक कर जाना, तब निजरूप लखाना ॥ रे मन
आसा तृष्णा मोह मया मद, काम क्रोध अभिमाना।
इनसे काम सरे नहीं तेरा, मिले न ठौर ठिकाना ॥ ,,
मैं तोहि देऊँ सिखावन गुरु का, मन का चित चिताना।
सुरत शब्द की करले कमाई, मन में मन उरझाना ॥ ,,
नहीं यह जप तप संयम भारी, नहीं यह वाचक ज्ञाना।
सुमिरन ध्यान है घट के भीतर, तिल की ओट असमाना ॥ ,,
गगन मंडल में अनहद बाजे, गगन में राह रुकाना।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, गुरु सूरत हिये आना ॥ ,,

(२८)

अरे मन तेरी गति है न्यारी ॥ टेक ॥
पल में मरे पल ही में जीवे, पल पल होत विकारी।
पल में दाता दानी ठैरे, पल में सहज भिकारी ॥ अरे मन०
डोले गगन मंडल में छण छण, छण में जाये पताला।
छण में दीन दुखी हो जावे, छण ही में प्रतिपाला ॥ ,,
साधक बन बन मांहि लुकाना, गुफा रुचे है न्यारी।
बन को तज बस्ती जब आवे, तब मन है घरबारी। ,,
धर बहुरूप दिखावे लीला, अपरम्पार अपारा।
नाना रंग तरंग बहे नित, गंग जमुन की धारा ॥ ,,
जो कोई याके फंद फँसाना, सौ सौ नाच नचावे।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, गुरु बल मन बस आवे ॥ अरे मन

(२६)

मन की अकथ कहानी साधु, मन की अकथ कहानी ॥ टेक ॥
मन में दुख सुख सभी भरे है, मन है भव की खानी ।
मन ही पितृी और देवियां हैं, मन है पद निरवानी ॥ साधु०
मन है दुखी रंक बिपरीती, मन राजा मन रानी ।
मन योगी और मन संसारी, मन ज्ञाता मन ज्ञानी ॥साधु०
मन ही से उपजी सकल वासना, करम बचन और बानी ।
मन आकाश और पवन अग्नि है, मन पृथवी मन पानी ॥साधु०
गगन चढ़े मन अधर बिराजे, लखे विचित्र निशानी ।
गिरे पताल समन्दर डूबे, काम क्रोध मद सानी ॥ साधु०
कर सतसंग साधु की सेवा, ताके गुन पहचानी ।
राधास्वामी गुरु की दया मेहर से, कछुक मरम हम जानी ॥साधु०

———

(३०)

कुछ सोच समझ मन अपने, यह सब रैन के सपने ॥टेक॥
जग के धंदे काल के फंदे, इन से नहीं छुटकारा ।
क्यों तू सोवे मोह नींद में, जाग भया संसारा ॥ कुछ०
सपने में धन दौलत पाया, राज समाज बड़ाई ।
आंख खुली फिर कुछ नहीं दरसा, यह जग अगमापाई ॥ कुछ०
भरम में भूल भूल भय उपजे, भय से भव उत्पाना ।
निर्भय पद गुरु संगत पावे, तब भागे अज्ञाना ॥ कुछ०
मूढ़ न समझे भेद तत्व का, केहि बिधि कहूं बताई ।
जाके सुमिरे मिले परमगति, नेह न ताहूँ लगाई ॥ कुछ०
साध की संगत गुरु की सेवा, भक्ति पदारथ पावे ।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, बनत बनत बन जावे ॥ कुछ०

(३१)

सब मन की प्रभुताई साधु, सब मन की प्रभुताई ।।टेक।
मन ही आवे गर्भ बास में, जननी गोद खिलाई ।
मन ही धरे किशोर अवस्था, मन ही में तरुणाई ॥ साधु०
मन ही नारी संग भरमाना, विषय भोग लिपटाई ।
मन ही सुत बनिता उपजावे, मन व्यौहार कराई ॥ साधु०
वृद्ध अवस्था मन ही जो व्यापे, भई आलस कदराई ।
मन नहीं मरे मार सब डारे, चिता की आग जराई ॥ ,,
मन ही भजन ध्यान मन सुमिरन, मन ही बुद्धि रहाई ।
काम क्रोध मद लोभ फँसाना, मन में मान बड़ाई ॥ ,,
मन का रूप लखे नहिं कोई, मन सब खेल खिलाई ।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, मन का भेद जनाई ॥ साधु०

(३२)

मन से होजा न्यारा साधू, मन से होजा न्यारा ।।टेक।।
मन से बीज बीज से अंकुर, अंकुर फूले फूला ।
फूल से फल फल मीठा लागा, मीठ मीठ प्रतिकूला ॥ साधु०
मन ब्रह्मा मन विष्णु महेशा, मन माया का रूपा ।
जो कोई मन के बंध बँधाने, सो बूड़े भव कूपा ॥ ,,
देखे अनदेखे को देखें, लेख अलेख विचारा ।
जिये मरे मर मर फिर जीवे, आवागवन मँझारा ॥ ,,
नजर न आवे अगम कहावे, मन काहू नहिं देखा ।
जो कोई देख विचारे मनको, सूझ परे तब लेखा ॥ ,,
दूर से दूर निकट रह सबके, घेरे पास न आवे ।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, अब मन मोहि न सतावे ॥ ,,

——

(३३)

गुरु हैं तेरे पास फकीरवा, गुरु हैं तेरे पास ।।टेक।।
त्याग भरम विचार मन का, छोड़ जग की आस ।
आस कर एक गुरु चरन की, सब से होय निरास ।। फकीरवा
तेरे मन में तेरे तन में, तेरे साँसो सांस ।
गुरु बसें दिन रात प्यारे, धर चरन विश्वास ।। फकीरवा
गुरु नहीं तीरथ बरत में, गुरु न योग अभ्यास ।
ढूँढ़ अपने हृदय में नित, वहां उनका बास ।। फकीरवा
करम में माया है व्यापी, धरम यम की फांस ।
बन में अनबन देखी मन में, भरम था सन्यास ।। फकीरवा०
तेरी चिंता गुरु को होगी, क्यों है तुझको त्रास ।
राधास्वामी चरन गह, अज्ञान का कर नास ।। फकीरवा०

(३४)

सोच समझ कर जतन फकीरवा ।।टेक।।
छिन छिन उमर घटत दिन राती, कभी सांझ कभी प्रभाती ।
माया मोह महा उत्पाती, इनसे लगा मत लगन फकीरवा ।।सोच०
सुख सम्पत धन माल खजाना, इन्हें देख क्यों जिया ललचाना ।
झूठे है सब नाम निशाना, तासों उपजे पतन फकीरवा ।। सोच०
गुरु भक्ति है सब का सारा, देखा सोचा समझ बिचारा ।
जानेगा कोई गुरु मुख प्यारा, मान मान यह बचन फकीरवा ।। ,,
माया मोह जाल अति भारी, तीन ताप से जगत दुखारी ।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, अब बुझी मन की जलन फकीरवा ।।

(३५)

ठगनी तू क्या रूप दिखावे, गुरु भक्त न धोका खावे ।।टेक।।
पांव में घुंगरु हाथ में छल्ले, सुन्दरी पहन रिझावे ।
घर में नाचे थिक थिक थई थई, बाहर ताल बजावे ।। ठगनी०

हाथों में मेंहदी लाये के बाधन, तीन लोक खाजावे।
आँख में सुरमा भरम का डाले, तक तक नजर चलावे ॥ ठगनी०
गले में हार नौलखा पहने, मांग सेंदूर भरावे।
नाक में बेसर कान में झुमके, ठुमके ठुमक फँसावे ॥ ठगनी
कमर करधनी पेच है अड़बड़, लचक के चाल दिखावे।
घूँघट काढ़ हाथ मटकावे, आंखों सेन बुझावे ॥ ठगनी
जोशन बाजू जुगनू पहुँची, छागड़ झांझ सजावे।
पोर पोर से आप बंधी है, बध बध बन्ध बन्धावे ॥ ठगनी
बैरी मारे दाव पेच से, यह हँस तीर चलावे।
रोवे गावे रोये गाय कर, कोई बचन न पावे ॥ ठगनी०
माया जाल कठिन हैं भारी, द्वन्द अनर्थ मचावे।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, सतगुरु आन छुड़ावे ॥ ठगनी

(३६)

आवे जाय सो माया, माया माया साधु ॥टेक॥
अकथ अलौकिक अगम अपारी, वार पार से निस दिन न्यारी।
कभी सुरझी कभी रही उरझारी, माया ने भरमाया ॥ साधु०
कभी सामान्य विशेष कहीं है, कहीं विष्णु और शेष कहीं है।
कहीं ब्रह्मा महेश कहीं है, विरला कोई लख पाया ॥ साधु०
निराकार साकार की खानी, अगुन सगुन के रूप दिखानी।
सत्त असत्त से रही बिलगानी, कहीं धूप कहीं छाया ॥ साधु०
काल रूप होय जग को फाँसा, कभी आस दे करे निवासा।
रूप अरूप का अजब तमासा, निहवेरी निरदाया ॥ साधु०
छिन में गुप्त प्रगट छिन भीतर, दिन में रात रात दिन भीतर।
बाहर गिन गिन गिन गिन भीतर, ऋषि मुनि भेद न पाया ॥ ,,
माया तो घट घट की बासी, अचरज अद्भुत कौतक रासी।
देख वियोग में सहज उदासी, सतगुरु मर्म लखाया ॥ साधु०

सुन दरपन की सुन्दर रानी, लख नहीं परे लखे कोई ज्ञानी ।
मन में बसा फिरे बिलगानी, राधास्वामी आप जनाया ॥ ,,

(३७)

नाम गुरु नित गाओ मेरे साधु, नाम गुरु नित गाओ ॥टेक॥
नाम ही ज्ञान ध्यान पुन नाम ही, नाम ही गाय सुनाओ ।
नाम ही पाट नाम है पूजा, नाम से नेह लगाओ ॥ साधु०
नाम योग और नाम ही मुद्रा, नाम की ताड़ी लाओ ।
नामी नाम में अन्तर नहीं कुछ, भेद अलौकिक पाओ ॥ ,,
नाम की महिमा क्या कोई जाने, नाम जपो जपवाओ ।
नौका नाम नाम पुन खेवट, नाम से तरो तराओ ॥ ,,
नाम दरस और नाम परस है, नाम रूप दरसाओ ।
नाम सेतबंध रामेश्वर, नाम से लंक जिताओ ॥ ,,
लव लगी रहे नाम से निस दिन, नाम पदारथ पाओ ।
जप तप तीरथ सब कुछ त्यागो, नाम की ज्योत जगाओ ॥ ,,
नाम से रूप हिये गुरु दरसे, नाम से अलख लखाओ ।
नाम द्वैत का भर्म बिनासे, पद अद्वैत में आओ ॥ ,,
प्रेम प्रतीत रहे हिये अन्तर, नाम भजो भजवाओ ।
नाम सार है घट के भीतर, नाम की धूनी रमाओ ॥ ,,
नाम अमीरस प्रेम पियाला, अमृत नाम चखाओ ।
नाम की बंसी नाम की मुरली, नाम का शंख बजाओ ॥ ,,
मोर तोर की कठिन जेवरी, नाम से बंध कटाओ ।
रात दिवस गुरु संग रहोगे, नाम की रटन लगाओ ॥ ,,
दाह जगत से चित्त हटा दो, घट में शोर मचाओ ।
राधास्वामी नाम दान है गुरुका, नाम हिये में बसाओ ॥ ,,

(३८)

गुरु नाम का भेद बताया, बताया बताया ॥ टेक ॥
सत्त नाम है सब का सारा, नाम है नामी का है पसारा ।

नामी नाम का है भंडारा, नाम से नामी पाया पाया पाया ॥ गुरु
परा त्याग अपरा चढ़ आया, अपरा जब चित ठैराया।
जड़ चैतन की ग्रंथी खुलाया, हरष हरष गुन गाया गाया गाया ॥ ,,
अन्तर प्रगटी नाम की बानी, सुन सुन सुरत भई मस्तानी।
छूट गई दुबिधा हैरानी, यम की जाल कटाया कटाया कटाया ॥ ,,
त्रिकुटी ओंकार सुन पाई, सुन्न में सुन्न समाध रचाई।
छूट गया जग अगमापाई, दुख का चिन्ह मिटाया मिटाया मिटाया ,,
कुछ दिन जीवन मुक्ति की आसा, फिर विदेह गति लखा तमाशा।
राधास्वामी धाम में किया निवासा, चरन शरन में समाया समाया२॥ ,,

(३९)

नाम अमीरस पाया पाया पाया, गुरु प्रेम पियाला पिलाया२ ॥टेक॥
सहस कमल दल घंटा बाजा, त्रिकुटी ओम् शब्द बहु गाजा।
सारंग साज सुन सुरत गाजा, सोवत मनुआ जागाया जगाया२ ॥नाम॥
भँवर गुफा बंसी धुन पाई, सुन सुन सुरत हर्ष मुस्काई।
माया काल की गई ठकुराई, यम का फंद कटाया कटाया २ ॥ ,,
सतपद बीन मधुर धुन भाई, अलख अगम की रागनी गाई।
राधास्वामी चरन की गही शरनाई, सेवक साँच कहाया ३ ॥ ,,

(४०)

सुमिर गुरु का नाम प्यारे, सुमिर गुरु का नाम ॥टेक॥
चलना है रहना नहीं, चलना निस्सन्देह।
एक दिन ऐसा आयेगा, खेह होयगी देह ॥ सुमिर०
आये हैं जो जायेंगे, जो आये सो जाँय।
साधु वह नर धन्य हैं, जो नहीं आयें न जायें ॥ ,,
मन की सारी कल्पना, बंध मुक्ति का सांग।
इनसे बच कर साधुवा, गुरु भक्ति तू मांग ॥ ,,

दो ही दिन के हैं सभी, कुल कुटुम्ब और मीत।
तज सब बुद्धि विचार से, गह गुरु चरनन प्रीत ॥ सुमिरो०
दुनिया में भूले सभी, राजा रंक फकीर।
अपने ही स्वारथ बँधे, नहिं समझें पर पीर ॥ ,,
रात गँवाई नींद में, दिवस जगत व्यौहार।
अब लग सोच विचार का, हिये न आया बार ॥ ,,
चेत चेत नर चेत ले, चेत चेत दिन रात।
अन्त समय पछतायेगा, यम खूँदेंगे लात ॥ सुमिरो०

(४१)

तुम ही अन्तरयामी, तुम चरन सरोज नमामी ॥टेक॥
राह रुकाना घट का बताया, खटका हिये का छुड़ाया।
डूबत भव जल पार लगाया, भक्ति भाव सिखलाया ॥ तुम०
तुम ज्ञाता तुम ज्ञानी पूरे, तुम ही ज्ञान स्वरूपम्।
करुणा सागर सब गुन आगर, धारा अद्भुत रूपम् ॥ ,,
सत्त पुरुष सत धाम निवासी, सब के घट घट बासी।
सत्य रूप सत पद के दाता, सत चित आनन्द रासी ॥ ,,
सुरत शब्द का पंथ चलाया, मारग अगम बताया।
सुरत में शब्द शब्द में सूरत, सुरत का रूप दिखाया ॥ ,,
अनहद नूर गाज रहा घट में, अलख ध्वजा फहराई।
राधास्वामी चरन शरन बलि जाई, धुरपद आन समाई ॥ ,,

(४२)

गुरु प्यारे ने लखाया पद निरवाना हो ॥ टेक ॥
दृष्टि सृष्टि का भेद बताया, करम धरम विधि सब समझाया।
दया मेहर से चरन लगाया, छूट गया अज्ञाना हो ॥ गुरु०
बहु दिन की सोई सुरत जागी, माया जाल परख हिये भागी।
दुचिताई की दुर्मति त्यागी, मिल गया ठौर ठिकाना हो ॥ ,,

उर्ध मारग की राह दिखाई, सहज किया भव की कठिनाई।
दे निज चरनन की शरनाई, बख्शा नाम खजाना हो ॥ ,,
सुरत शब्द का योग जताया, भक्ति पंथ का मर्म बताया।
घट औघट की ओर चलाया, राधास्वामी पद दरसाना हो ॥ ,,

(४३)

कोई बतादे कैसे गुरु को रिझाऊँ।
गुरु को रिझाऊँ, प्यारे गुरु को रिझाऊँ ॥ टेक ॥
मेरे मन में मेरे तन में, छिन छिन पल पल मेरे पन में।
घर बाहर परवत में बन में, ठौर ठौर गुरु पाऊँ ॥ कोई०
दिन प्रति दिन और सांझ प्रभाती, गुरु मूरति हिये व्यापक पाती।
गुरु है तेल दिया गुरु बाती, आरति किस की सजाऊँ ॥ ,,
पात पात में गुरु का बासा, फूल फूल में गुरु का बिलासा।
अचरज अद्भुत अजब तमासा, क्या मैं फूल चढ़ाऊँ ॥ ,,
मसजिद मन्दिर काबा कासी, सब में रमे गुरु अविनासी।
गुरु सों तीरथ बरत उजासी, अब किस धाम को जाऊँ ॥ ,,
भक्ति सम्पदा गुरु ने साजी, चर और अचर में रहे बिराजी।
मैं तोहि पूछूँ पंडित काजी, केहि विधि ध्यान लगाऊँ ॥ ,,
गुरु तो व्याप रहे घट घट में, गुरु ही बसें घट पट और तट में।
कौन पड़े जग की खट पट में, किसका नाम सुनाऊँ ॥ ,,
निराधार गुरु जगदाधारी, हित अनहित सब के हितकारी।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, निरख निरख हरषाऊँ ॥ ,,

(४४)

गुरु अचरज खेल दिखाया दिखाया दिखाया।
घट अद्भुत रूप लखाया लखाया लखाया ॥ टेक ॥
सार असार सार संसारा, सार में निरखा जगत पसारा।
ईश्वर जीव ब्रह्म विस्तारा, देख देख सुख भाया भाया भाया ॥ गुरु०

वृक्ष में बीज बीज अंकूरी, अन्तर डाल फूल भरपूरी ।
कोई नेड़े कोई दूरी दूरी, भेद अनूपम पाया पाया पाया ॥ गुरु०
अक्षर शब्द शब्द में अक्षर, अक्षर में व्यापा निःअक्षर ।
जो बाहर सोई प्रगटा अन्तर, चहुँ दिस छाया छाया छाया ॥ ,,
माया ब्रह्म ब्रह्म में माया, एक प्रकाश एक निज साया ।
धूप छाँह का मर्म जनाया, भव का फंद कटाया कटाया कटाया ॥ ,,
एक में एक अनेक का मेला, कोई सुहीला कोई दुखीला ।
राधास्वामी सतगुरु ने दिया हेला, चरन शरन में आया३ ॥ गुरु०

(४५)

अरे मन जाना रे जाना ॥टेक॥

तरवर एक दोय फल लागे, एक कड़वा एक मीठा ।
जो पंछी ता फल को खावे, यम ताहि बांध घसीटा । अरेमन०
तरवर एक पक्षी दोय बैठे, एक उजला एक काला ।
एक के गले बिच फाँसी लागी, दूजा रहे निराला ॥ ,,
नारी एक बहु रंगी चंगी, मोहे नर मुनि ज्ञानी ।
ता नारी के आंख न सूझे, रंग रूप की खानी ॥ ,,
बांझ गर्भिणी सुत उपजाया, कुल परिवार बढ़ाया ।
रच प्रपंच ऋषि मुनि भुलावे, भेद न काहू पाया ॥ ,,
गुरु की दया साध की संगत, आंख खुली तब देखा ।
सोच समझ चिता मन बौरे, यह है अटपट लेखा ॥ ,,

(४६)

बात बात में बात साधु, बात बात में बात ॥टेक॥

ज्यों केले के बीच छुपे हैं, पात पात में पात ।
तैसे ही माया के पट में, व्याप रहा उत्पात ॥ साधु०
गुरु की बानी समझ परे जब, तब सत पद दरसात ।
समझबूझ बिन क्या कोई पावे, जनम अकारत जात ॥ ,,

यह प्रपंच है दुख का कारन, समझे से समझात।
पुरुष विवेकी सत संगत में, लख वाको हरषात ॥ साधु०
चिंता दुविधा और दुचिताई, भूल भरम भरमात।
एक भरम में लाख भरम ज्यों, बरस में सांझ प्रभात ॥ ,,
भागहीन नर सूझे नांही, जग भ्रम रूप दिखात।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, मिली मुक्ति की दात ॥ ,,

(४७)

घट अद्भुत राग सुनाया सुनाया सुनाया ॥
सुरत अनहद तूर बजाया बजाया बजाया ॥टेक॥
घंटा शंख सहस दल बाजे, धुन मृदंग नभ त्रिकुटी गाजे।
सुन्न महासुन्न चार गत साजे, सुख आनन्द रचाया रचाया २ ॥ घट
बंसी भँवरगुफा सुन पाई, सतपद नाद बीन चितलाई।
अलख अगम के पार सिधाई, राधास्वामी गाया गाया गाया ॥ ,,
मीठा राग मधुर मृदु बानी, मंगलमय मंगल की खानी।
अचरज अकथ अपार कहानी, धुरपद ध्यान लगाया लगाया २ ॥ ,,
नाचत गावत धूम मचावत, हरखत हरख हरख हरखावत।
गुप्त भेद निज घट में पावत, सार शब्द लख पाया पाया पाया ॥ ,,
भव का द्वन्द सहज में नासा, जग का मिटगया भरम त्रासा।
राधास्वामी चरन शरन की आसा, नर तन सुफल कराया ३ ॥ ,,

[४८]

गुरु मत समझ न आवे साधु, गुरु मत समझ न आवे ॥टेक॥
क्या कोई उसकी महिमा जानी, वह तो अगम अपारा।
करता धरता कहो सो नाहीं, वह ही है करतारा ॥ गुरु०
आप ही दाता आप ही दानी, आप ही बना भिखारी।
आप ही अन बन खेल खिलावे, आप श्याम बनवारी ॥ ,,

आप ही रोगी सोग वियोगी, आप वैद बन आया।
आप ही जोगी जंगम साधू, योग युक्ति बतलाया ॥ गुरु०
निराधार जग का आधारा, सब को देवे सहारा।
जो कोई उसकी शरन में आवे, उसका है रखवारा ॥ ,,
फूल मध्य ज्यों बास बिराजे, आप बना फुलवारी।
आप ही माली आप ही उपवन, सींचे आप कियारी ॥ ,,
चकमक में ज्यों आग समाना, अग्नि मध्य ज्यों पानी।
बिन जिभ्या बानी बहु बोले, बोल बोल निरबानी ॥ ,,
हरी हरी मेंहदी में लाली, लाली बीच अंगारा।
क्या कोई उसका भेद बतावे, कहन सुनन से न्यारा ॥ ,,
मतवारा होय सत सत भाखे, मति सुमति की खानी।
आप ही आप मिले जब चाहे, उसकी अकथ कहानी ॥ ,,
ढूँढ़ा बहुत हाथ नहीं आया, देस देस भरमाया।
दया हुई मन करुणा आई, धर गुरु रूप दिखाया ॥ ,,
शब्द अशब्द शब्द भण्डारा, सार शब्द की रासी।
सबसे न्यारा सबका प्यारा, सबके घट घट बासी ॥ ,,
सुरत बिहंगम चढ़े अधर को, गगन पार पद लीना।
सतगुरु कृपा मौज भई भारी, अलख अगोचर चीन्हा ॥ ,,
औंधा कुवाँ भरा जल निरमल, उलट भरे पनिहारी।
घट के ऊपर घट दरसाना, औघट घाट संवारी ॥ ,,
सुरत निरत की अद्भुत लीला, गुरमुख होय सो जाने।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, निरख निरख मन माने ॥ ,,

[४९]

मन्दिर की शोभा भारी, समझे गुरु आज्ञाकारी ॥टेक॥
खूँट खूँट में देव विराजे, ब्रह्मा विष्णु त्रिपुरारी।
हृदय गुफा जब बैठक कीन्हा, सहज ही लग गई तारी ॥ मन्दिर

घट मन्दिर जो आन समाया, देखा अद्भुत लीला।
रूप रंग रेखा सब दरसा, जड़ चेतन का कैला ॥ मन्दिर
घट के ज्योत में खोले घाँटी,सुख दुख सकल बिनासा।
पद निर्वान निरख बहु हरखा, घन आनन्द बिलासा ॥ ,,
ज्ञान ध्यान जप तप अनुरागा, सबका फल मिला घटमें।
आंख खुली हिये की मेरी, सब प्रगटा तिल पट में ॥ ,,
कोटि ग्रन्थ पढ़ पढ़कर क्या मरना, वृथा योग बिचारा।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी,मिला शब्द रस सारा ॥ ,,

[५०]

घट का भेद अपार है, कोई समझे ज्ञानी ॥टेक॥
घट के भीतर देवी देवा, घट में रहकर करते सेवा।
घट से उपजे भरम के भेवा, घट में तत्व निशानी ॥ घट०
घट में ब्रह्मा घट ही में माया, घट में ज्योती घट में छाया।
घट में क्रोध काम मद माया, घट में सब की खानी ॥ ,,
घट उपजे घट बिनसे छिन छिन, घट में चाँद सूर हैं निसदिन।
घट अभेद और घट ही भिन भिन, घट है अकथ कहानी ॥ ,,
घट समुद्र में लहर उठाई, बुन्द सिंध नहीं रहे अलगानी।
घट से निकस घट माहिं समानी, घट की लीला जानी ॥ ,,
घट आज्ञा घट आज्ञाकारी, घट ही जग घट जगदाधारी।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, सतगुरु मर्म बखानी ॥ ,,

[५१]

अपना आपा सोधो, आपा सोधो मन परबोधो ॥टेक॥
सर्व व्यापी सदा अलेपा, निज घट में नित बसता।
घट ही में ढूँढो तब पाओ, माहीं मिलन का रस्ता ॥ अपना०
नहीं कहीं आना नहीं जाना, नहीं कुछ करना धरना।
अपने आप की सूझ बूझ से, मिटे जनम और मरना ॥ ,,

तीरथ बरत ध्यान और सेवा,यह सब भरम कहानी ।
सतगुरु मिलें तो भेद बतावें, सूझे अगम ठिकानी ॥ अपना०
धोके में सब जगत बँधा है, धोके धोक समाया ।
धोका लोक परलोक भी धोका, धोका माया काया ॥ ,,
अपने हृदय आप विचारो, कौन किसी का भाई ।
अन्तकाल साथी नहिं कोई, झूठे सगा सगाई ॥ ,,
मारग चलते मिले मुसाफिर, नाता बांधा झूठा ।
निज अस्थान में जब सब पहुँचे, नाता रिश्ता छूटा ॥
बिन गुरु ज्ञान न उपजे सत बुधि, जीव अधीन दुखारी ।
गुरु कृपा से बन्धन काटो, राधास्वामी की बलिहारी ॥ ,,

(५२)

दीन मुझे अति प्यारे लागें मैं दीनों का प्यारा ॥टेक॥
जो कोई मेरी शरन में आवे, मैं उसका रखवारा ।
करम धरम की आस न राखे, राखे मेरा सहारा ॥ दीन०
किस का योग कहां का जप तप, कैसा ज्ञान विचारा ।
जो कोई मुझको भजे निरंतर, वह आंखों का तारा ॥ ,,
मैं दीनों के मन में बसता, और है भरम पसारा ।
वह तो मेरे प्राण के प्यारे, मैं उनका आधारा ॥ ,,

(५३)

तेरे भक्तों के बलिहार, साईं तेरे भक्तों के बलिहार ॥ टेक ॥
माया चाम है काया चाम है, चाम है यह संसार ।
जो कोई चाम की दृष्टि मेटे, सच्चा भक्त विचार ॥ तेरे०
इनको त्यागे उनको लागे, छोड़ा नरक दुआर ।
स्वर्गलोक की इच्छा नाहीं, दोनों में नहीं सार ॥ ,,
सार संग जो चहुँदिस भासे, सोई है संसार ।
सार पाये संसार को छोड़ा, सार से राखे प्यार ॥ ,,

दृष्टि सृष्टि का मरम पिछाना, समझा मूल विकार।
आवागवन का टाट समेटा, डाला जग पर छार ॥ तेरे०
एक आस विश्वास गुरु का, दूजा और न कार।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, मेटा द्वन्द पसार ॥ ,,

[५४]

दया करो करतार, मेरा करदो आप सुधार ॥टेक॥
भव सागर में गोता खाती, कभी नीचे कभी ऊपर जाती।
माया नित भरमाती सताती, सूझे वार न पार ॥ दया०
आसा तृष्णा बन्ध बन्धाना, माया मोह फांस लपटाना।
छूटन की कोई विधि नहीं जाना, मन व्यापा हंकार ॥ ,,
बुद्धि नहीं ठिकाने मेरी, चित रहती है हेरा फेरी।
चंचलता ने चहुं दिस घेरी, उरझ रहा संसार ॥ ,,
शरन भी लेना नहीं मैं जानूँ, शरनागत गति नहीं पहचानूँ।
किसको मानूँ किसको न मानूँ, भरम से अब गया हार ॥ ,,
कैसे सच्ची विनती करता, औगुन में नित खपता मरता।
बोझ विपत का सिर पर धरता, अब होगया लाचार ॥ ,,
दिन को खाना रात को सोना, समय पड़े आपति से रोना।
द्वेष बीज घट घट में बोना, यही उत्तम व्योहार ॥ ,,
करम धरम नहीं सुमिरन ध्याना, नहीं भक्ति न विवेक न ज्ञाना।
अब तो दे मुझे ठौर ठिकाना, राधास्वामी की बलिहार ॥ ,,

[५५]

सुनो संत मत सार, मन में अपने करो विचार ॥टेक॥
तिल के अन्दर तेल बनाओ, सुमिरन ध्यान का दिया जलाओ।
गुरु के रूप में नेत्र जमाओ, चढ़ जाओ सहस्रार ॥ मन में०
कुछ दिन पीछे त्रिकुटी आना, गुरु संगत मिल ज्ञान को पाना।
शंख छोड़ मृदंग बजाना, दरस परस ॐकार ॥ मन में०

गुरु का बल ले आगे जाना, सुन्न में सहज समाध रचाना।
मान सरोवर अमी नहाना, सुन सुन रारंगकार ॥ मन में०
सुन्न महासुन्न तज देना, भँवरगुफा की खिड़की लेना।
सतसंगत से चित को सीना, गाना सोहंगकार ॥ मन में०
इसके आगे सतपद बानी, सत सत सत सत सत्य निशानी।
सत की सत्ता बीन में जानी, होजा सत्याकार ॥ मन में०
अलख अगम के पार ठिकाना, संतों का है पद निरवाना।
राधास्वामी राधास्वामी राग पुराना, गाना ममता मार ॥मन में०
जो कोई इतने ऊँचे आवे, माया काल न फिर भरमावे।
आवागवन का बीज जलावे, पार से पहुँचे वार ॥ मन में०

[५६]

मेरी लगन गुरु से लागी ॥टेक॥

प्रेम प्यार अन्तर घट धँस गया, भक्ति रस में पागी।
आनन्द हर्ष हिये में छाया, हुई सच्ची अनुरागी ॥ मेरी०
सारा जगत गुरु में भासा, सुरत निरत उठ जागी।
जहां दृष्टि पड़े गुरु लीला, किसे गहूं क्या त्यागी ॥ मेरी०
सोवत जागत कबहुं न बिसरे, सुनो अनाहद रागी।
राधास्वामी दयाल की दया भई है, मैं होगई बड़भागी ॥ मेरी०

[५७]

अब मैं गुरु के चरन पखारूँ ॥टेक॥

चिंता त्यागूँ दुविधा मेटूँ, काम क्रोध मद मारूँ।
हिये का बासन शुद्ध करूँ तब, चरनामृत मुख डारूँ ॥ अब०
सोवत बैठत नाम का सुमिरन, तरूँ कुटुम्ब सब तारूँ।
यह मेरी पूजा यही बंदगी, काल कर्म को मारूँ ॥ ,,
दुख नहिं व्यापे विपत न आवे, भक्ति भाव चित धारूँ।
राधास्वामी दया से काज बनेगा, बिगड़ी सकल सुधारूँ ॥ ,,

(५८)

कहां चली जाऊँ रे मन अज्ञानी, मैं कहाँ चली जाऊँ ॥टेक॥
तू नहीं समझे न राह में आवे, उठते बैठते द्वन्द मचावे।
भरमे आप सब ही भरमावे, करे आनाकानी रे अज्ञानी ॥ कहां०
एक दशा में क्यों नहीं रहता, क्यों नित आपति बिपति सहता।
ज्ञान अनमोल रतन नहीं लहता, माया मोह फँसानी रे अज्ञानी ॥ ,,
कबहुं अकाश ओर सिधावे, कबहुँ पताल की थाह लगावे।
इससे क्या तेरे हाथ में आवे, भरम भरम भरमानी रे अज्ञानी ॥ ,,
भजे न सतगुरु चरन न सेवे, सुमिरन ध्यान को चित्त न देवे।
भार कष्ट का सिर पर लेवे, भटक भटक भटकानी रे अज्ञानी ॥ ,,
राधास्वामी तेरे सदा सहाई, कर संगत तेरी बन आई।
अब तो सहज में करले कमाई, फिर अवसर नहीं पाई रे अज्ञानी ॥ ,,

[५६]

उलट के घर को जाना, सुरत चढ़ हरष असमाना ॥टेक॥
भ्रूमध्य बैठो चित देकर, शब्द ज्योति ठैराना।
जब गुरु का बल मन में बाढ़े, त्रिकुटी पद चढ़ जाना ॥ उलट०
ओम्कार धुन घट में सुनना, रूप में हिया बसाना।
सुन्न सिखर चढ़ आसन लाना, सहज समाध रचाना ॥ ,,
विधि से करो नित यह करनी, परिचय पा हरषाना।
फिर आगे का पन्थ सुगम है, राधास्वामी धाम पयाना ॥ ,,

[६०]

कैसी करूँ माने नहिं मनुआ ॥टेक॥
दुर्मति दुर्गति से कर प्रीती, सीखी नीच भाव की रीती।
गुरु चरनन की नहीं प्रीती, सार तत्व जाने नहि मनुआ ॥ कैसी०
कामी क्रोधी लोभी मानी, मोह मया के फांस फँसानी।
भजन भाव रहे नित अलसानी, गुरुगम पहचाने नहीं मनुआ ॥ ,,

छिन में गगन आकास को धावे, छिन में सिंध पताल को धावे।
छिन में रोवे छिन में गावे, गुरु की टेक माने नहीं मनुआ ॥ ,,
कभी ज्ञान की बात बतावे, कभी शील की महिमा जतावे।
शील ज्ञान को चित नहीं लावे,राधास्वामी मन आने नहीं मनुआ ॥ ,,

(६१)

आली री गुरु दरस मिला नहीं, कैसे करूँ ॥टेक॥
दर्शन बिन मोहि चैन न आवे, रह रह कर मेरा जिया घबरावे।
विरह की आग की तपन सतावे, रात दिवस यह अग्नि जरूँ री ॥१॥
दिन गये पच्च मास गये सजनी, बरस गया नहीं अवसर मिलनी।
तड़प तड़प विरहा दुख सहनी, इसी सोच में हाय मरूँ री ॥२॥
जल बिन मछली की गति मेरी, गुरु ने दया दृष्टि नहीं फेरी।
चिन्ता ने लिया मन को घेरी, सिर पर बिपत का भार धरूँ री ॥३॥
जीवन की क्या आस सखी री, पल पल साँस दुधारी खिसी री।
क्या जानूँ कब जीव निकसी री, माया काल से अधिक डरूँ री ॥४॥
राधास्वामी दीन दयाल सहाई, जब दी तुमने चरन शरनाई।
दर्शन दे मेरी करो भलाई, तुम्हरे पद लग भव से तरूँ री ॥५॥

(६२)

मेरी सुरत सुहागिन नार, सजनी पड़ी काल के पाले ॥टेक॥
चेत चेत ले चेत ले सजनी, कथनी तज कुछ करले करनी।
करनी से तुझे मिलेगी रहनी, रहनी चित्त बसाले ॥सजनी०
मानुष जनम भाग से पाया, कोटि जनम धोका जब पाया।
सतगुरु अब तो चितावन आया, जीवन सुफल कराले ॥ ,,
भव भय भरम से भई भ्रान्ती, आई चिन्ता भागी शान्ती।
लख गुरु मूरति की तू क्रान्ती, घट में ध्यान जमाले ॥ ,,
सुमिरन ध्यान भजन अभ्यासा, सुरत शब्द का करले विलासा।
अन्तरमुख लख विमल तमासा, बाहरी दृष्टि हटाले ॥ ,,

राधास्वामी दाता सतगुरु ज्ञानी, बख्शें मेहर से पद निरवानी।
छुटे जगत की द्वन्द गिलानी, पाना हो सो पाले॥ मेरी०

(६३)

मेरी प्यारी सुहागन नार, अपने पिया को रिझाले री ॥टेक॥
भाग जगा पिया दर्शन पाया, प्रीतम प्यारे ने अंग लगाया।
शोभा रूप अनूप दिखाया, देर न कर अपनाले री ॥मेरी०
प्रीत प्रतीत के सुन्दर भूषण, अंग अंग साजले तू मन का तन।
तन मन धन कर पिया के अरपन, रूठे पिया को मनाले री ॥ ,,
तू पृथ्वी पिया ऊँचे मण्डल, तू चंचल तेरा पिया है निश्चल।
सुरत शब्द के मारग में चल, महल का उसके पता ले री ॥ ,,
सहस कमल त्रिकुटी के पारा, सुन्न भँवर के धाम से न्यारा।
सतपद में तेरा प्रीतम प्यारा, सीस से चरन लगाले री ॥ ,,
राधास्वामी गुरु ने भेद जताया, सुरत निरत का तत्व बताया।
शब्द सार को निज धुन गाया, सुन सुन मन को चिताले री ॥ ,,

[६४]

बरसत अमी धार नित अन्तर, भीज रही सुरत मतवारी ॥टेक॥
रिमझिम रिमझिम बादर बरसे, एक तार की लगा झरी।
निसदिन बरसे पल छिन बरसे, व्याप रही काया में तरी ॥ बरसत०
ज्योत की सोत से बरसे पानी, नहीं तीखा नहीं खारा वह।
गुरुमुख पिये प्यासा निगुरा, गुरु गम से है न्यारा वह ॥ ,,
बरषा अद्भुत झड़ी अनोखी, बाहर दृष्टि नहीं आवे।
इसकी समझ कोई कोई पावे, जो घट गुरु का ध्यान लगावे ॥ ,,
ऊँचा पिये पिये नहिं नीचा, सुरत बनी असमानी जब।
पृथवी त्याग गगन चित ध्यावे, पावे निर्मल पानी तब ॥ ,,
राधास्वामी सतगुरु पूरे, जीव दीन को चिताया है।
शब्द सुरत की बरषा की धुन, खुली रीति से गाया है ॥ ,,

(६५)

तुम चलो गुरु के संग, रंग देखो अपने अन्तर का ॥टेक॥
घट भीतर ज्योत उजारा, ज्योती झलक अपारा।
अनहद धुन का झनकारा, बाजे मृदंग में ओम ढंग ॥ तुम०
घट भीतर हर्ष हुलासा, आनन्द सुख चैन विलासा ।
नहीं माया काल का त्रासा, मन का नहीं किंचित अंग भंग ॥ ,,
घट भीतर भजन और ध्याना, सुमिरन श्रवण सत ज्ञाना।
साधु दुरबीन निशाना, त्यागो माया का द्वन्द जंग ॥ ,,
घट भीतर धँसकर जाओ, सुन्न मंडल जाय समाओ।
सोई हुई सुरत जगाओ, पियो भक्ति की बहती भंग गंग ॥ ,,
घट भीतर गुफा में आओ, बिगड़ी हुई बात बनाओ।
सतपद राधास्वामी पाओ, दर्शन करो सहित उमंग चंग ॥ तुम०

(६६)

चेत प्यारे चेत के अवसर ॥टेक॥

दिन तो बीता खेल कूद में, रात पेट भर खाया।
आलस निद्रा लगे सताने, कैसा समय गँवाया ॥ चेत०
बालपना गया आई जवानी, गई जवानी आया बुढ़ापा।
रोग सोग तुझे ग्रासा, दुख चहुँदिशा में व्यापा ॥ चेत०
करम के समय करम नहीं करिया, ज्ञान के समय न ज्ञाना।
अब उपासना का है अवसर, चेत जो चतुर सुजाना ॥ ,,
टूटे दाँत ज्योत नहीं आंखी, शब्द सुने नहिं काना।
अब भी तू नहीं समझा भाई, क्या होगया दिवाना ॥ ,,
सुमिरन भजन ध्यान बिसराया, चंचल मन के वस हो।
अब की चेत चेत के अवसर, समय अमोल को मत खो ॥ ,,
कर सतसंग बचन सुन गुरु का, श्रवन मनन निदिध्यासन।
कहता हूं अब सोच समझ कुछ, कर गुरु का आराधन ॥ चेत०

भूल भूल भूला और भरमा, पड़ अज्ञान के पाले ।
अब सुन मेरी अन्तकाल है, राधास्वामी की दयाले ॥ चेत०

(६७)

भाई गुरुमत मनमत में है भेद ॥टेक॥

गुरु मत तो है सतगुरु का मत, मनमत मन मत भाई ।
अहं भाव की जड़ है एक में, दूजा अहम नसाई ॥ भाई०
गुरु गम निरख परख कर चलना, गुरु मत के अनुसारा ।
मनमत चाल चले जो कोई, चित बाढ़े हंकारा ॥ भाई०
माया काल करम की जड़ है अहं में, सतगुरु ने बतलाया ।
जो काई इसके धोके में आया, जीती बाजी गँवाया ॥ ,,
खड्ग की धार चले जो कोई, सँभले कैसे मग में ।
गिरत पड़त कुछ देखन लागे, चोट सहे पग पग में ॥ ,,
राधास्वामी की गुरु मत बानी, साधन साध के साधा ।
गुरु की दया सहारा पाया, मेटा सकल उपाधा ॥ भाई

(६८)

गुरु भक्ति चित धार मनुआ ॥टेक॥

प्रेम प्रीत के रस में पगजा, सुमिरन भजन ध्यान में लगजा ।
काम क्रोध के मग से अलगजा, भक्ति प्यार प्रतीत के लगजा ।
कर जीवन से पार ॥ मनुआ गुरु भक्ति चितधार ॥ मनुआ
कोमल हृदय शान्ति के बैना, अपनी भलाई परख निज नैना ।
समझ सोच सतसंग के सैना, राख विवेक विचार ॥ ,,
राधास्वामी नाम रहे होंठों पर, इस नौके से तर भव सागर ।
नाम प्राप्ति का कुछ साधन कर, गुरुबल होजा पार ॥ मनुआ०

[६९]

भया रे यह मनुआ अति उत्पाती ॥टेक॥

चढ़ा भरम अज्ञान हिंडोला, काम क्रोध का सहे झकोला ।

छिन भर भी नहीं रहे अडोला, भ्रान्ती के बस दिन राती ।। भयारे०
बिंन कारन उतपात मचावे, आप दुखी औरनहु दुखावे ।
करनी कथनी का फल पावे, ऐसा कुबुद्ध मदमाती ।। ,,
समझे नहीं मैं थक कर हारी, निज स्वरूप का ध्यान बिसारी ।
अपना आप बना अपकारी, सचमुच आतमघाती ।। ,,
मिथ्या करनी का फल पाया, है मन पापी फँसा मद मोया ।
क्यों नहीं गुरु की शरन में आया, कुटिल कुचाल कुजाती ।। ,,
राधास्वामी दाता दया विचारो, इस मनुआ को आप सँभारो ।
चाहे जिलाओ चाहे मारो, मैं कहीं आती न जाती ।। ,,

(७०)

सतगुरु दाता दुख से बचा जा ।। टेक ।।
आठ आठ आंसू दिन रोना, रात को तम की नींद में सोना ।
रो सोकर आयु को खोना, अनुचित बान यह मेरी छुड़ाजा ।।सतगुरु
रसना पर निन्दा रस राती, कान को ऐसी ही बात सुहाती ।
यहि बिधि हाय मैं जनम गँवाती, तू सुधार की युक्ति बताजा ।। ,,
पड़ी कुमति दुर्मति के पाले, नित मेरी छाती हूले भाले ।
कौन मेरी यह दशा सँभाले, सतगुरु दाता आके चिताजा ।। ,,
तू सच्चिदानन्द है प्यारे, कितने पतित अधम नित तारे ।
ले अब अपने चरन सहारे, दुखिया का दुख फंद कटाजा ।। ,,
राधास्वामी दीन सहाई, तेरी दया की बजी है बधाई ।
दर्शन मिला मेरी बन आई, हित उपदेश के बचन सुनाजा ।। सत०

(७१)

सतसंग काज बनाई, साधु सतसंग काज बनाई ।।
कहां चन्दन कहां रेंड बापुरो, बास सुबास सुहाई ।
संगत का परताप महातम, चन्दन रेंड कहाई ।। साधु०
कहां गंगा कहां नद और नाले, मैलो नीर बहाई ।

गंगा से मिल गंग भये दोऊ, संगत की अधिकाई ॥　　,,
कहां सुदामा रंक भिकारी, कहां गोपाल कन्हाई ।
उत्तम संग उत्तम बन आयो, संगत की प्रभुताई ॥　　,,
काठ की नाव का बेड़ा बना है, बोझा लोह गड़ाई ।
काठ के संग लोह तरजावे, देखा अचरज आई ॥　　,,
कहां भालु कपि निश्चर पापी, कहां राम सुखदाई ।
राम के संग राम गुन पाया, चहुँ दिस कीरति छाई ॥　　,,
कहाँ कीट निर्बल दुखियारा, कहां भृंगी समुदाई ।
कीट भृंगी भया संगत के बल, महिमा बरनी न जाई ॥　　,,
गुरु का संग करो निस वासर, गुरु के रंग रंगाई ।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, अधम पतित तरजाई ॥　साधु

(७२)

क्यों भरमत डोले प्रानी वह तो तेरे पास में ॥टेक॥
ना वह ज्ञान ध्यान व्रत भाई, ना वह योग अभ्यास में ।
ना वह करम धरम संयममें, ना विरक्त सन्यास में ॥ क्यों०
अर्श फर्श पर पता न पाया, ना कासी कैलास में ।
माया मोह की गम नही उसमें, उदासीन न निरास में ॥ क्यों०
ढूँढत ढूँढत ढूँढ थके जब, अन्तर झुके तलाश में ।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, वह सांसों के सांस में ॥ क्यों०

(७३)

सार तत्व की आसा साधु, सार तत्व की आसा ॥टेक॥
माया छाया छाया माया, छाया माया बासा ।
माया में रहे घोर अँधेरा, तत्व में होत उजासा ॥ साधु०
रात अँधेरी पंथ न सूझे, मन में बसे दुखासा ।
जो कोई ताते नेह लगावे, निस दिन होत निरासा ॥　　,,
तम में तम का भय अति दुस्तर, माया लाये लासा ।

सत पद में प्रकाश घनेरा, कर सत प्रथम निवासा ॥ साधु०
या बिधि यतन करे जो कोई, छूटे जग की त्रासा ।
त्रासा छुटी तो माया नाहीं, तत्व सार जब पासा ॥ ,,
सुख सनेह और भोग विषय में, रहे न तोला मासा ।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, होजा सबसे उदासा ॥ ,,

(७४)

साधु पुरुष पुरुषारथ गाओ ॥ टेक ॥
दुख से छूटो सुख हित लाओ, दुख सुख सकल भुलाओ ।
द्वन्द जगत की मेंट कल्पना, निज स्वरूप चितलाओ ॥ साधु०
तुम नहीं देह न इन्द्री मन हो, इनसे ध्यान हटाओ ।
तुम सच्चिदानन्द की मूरत, अहं ब्रह्म गति पाओ ॥ ,,
अहं ब्रह्म में अहं को त्यागो, ब्रह्म में वृती जमाओ ।
लगे अखंड समाधि सुन्न में, निराधार हो जाओ ॥ ,,
सत्य असत्य का झगड़ा छोड़ो, द्वन्द विचार हटाओ ।
द्वैत प्रपंच को मिथ्या मानो, पद अद्वैत जमाओ ॥ ,,
यह है ज्ञान की मूल अवस्था, ज्ञानवान बन जाओ ।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, आनन्द भोग कमाओ ॥ ,,

(७५)

ज्ञानी का व्यौहार, क्या कोई बरने पार ॥टेक॥
जैसे जल में कमल बिराजे, जल से थल से न्यारा ।
तसे ही ज्ञानी हैं जग में, व्यापे नहीं संसारा ॥ ज्ञानी०
कमठ है पानी के भीतर, रेत में अण्डे देवे ।
दृष्टि सृष्टि का भरम न जाने, दूर से उनको सेवे ॥ ,,
करम करे करता न कहावे, करम का फल नहीं चाखे ।
भोग सोग रोग नहीं लाये, अधर सोहंगम भाखे ॥ ,,

कोई कोई भृंगी कीट फँसावे, अपने रूप बनावे।
कीट न जाने भृंगी करम को, गुरु यूँ शिष्य चितावे ॥ ज्ञानी०
जल में खेले कमल निरंतर, जल थल में मुरगावी।
गोते मारे पर नहीं भीगे, ज्ञानी सोई प्रतापी ॥ ,,
अंग अंग में बहु रंग बहाये, गिरगिट चतुर सुजाना।
किसी रंग में दृढ़ता नाहीं, सो ज्ञानी परमाना ॥ ,,
एक जो कहिये शुक आजारज, गर्भ से माया त्यागी।
दूजे वामदेव ऋषि सांचा, गर्भहि में अनुरागी ॥ ,,
तीजे दत्त महामुनि योगी, देख देख संसारा।
गुरु मय जगत दृष्टि प्रतीती, महिमा अगम अपारा ॥ ,,
चौथे ज्ञानी वशिष्ठ कहावे, शम दम से लव लीना।
विश्वामित्र बैरी बन आये, अन्त गुरु पद चीन्हा ॥ ,,
पंचम ज्ञान ध्यान की मूरत, जनक प्रजापति राजा।
भोग योग दोनों सम बरते, साज राज का साजा ॥ ,,
छटे जो कहिये कृष्ण महाप्रभु, भारत आन लड़ाये।
दरपन की सुन्दरी बन आये, फँसे न काहू फँसाये ॥ ,,
सप्तम सनकादिक नर ज्ञानी, बाल अवस्था प्यारी।
परमहंस की अद्भुत लीला, अनहित ना हितकारी ॥ ,,
वाचक ज्ञानी ज्ञान न जानें, ग्रन्थी ग्रन्थन भटके।
कह दयाल सोचो यह प्राणी, यम के फांस में अटके ॥ ,,

(७६)

साधु एक रूप है सब में ॥ टेक ॥

बूँद बूँद में भेद नहीं है, सिंध बूँद दोऊ एका।
बूँद में सिंध सिंध बूँदवत, यही है सार विवेका ॥ साधु०
बूँद के पीछे सिंध है व्यापा, सिंध बूँद आधारा।
सिंध आधार बूँद दरसाना, सच्चा तत्त्व विचारा ॥ ,,

भर्म कल्पना मन में उपजी, सिंध बूंद विलगाने।
मिटे कल्पना ज्ञान के बल से, तब कोई भेद पिछाने ॥ ज्ञानी०
मिथ्या भर्म कल्पना मिथ्या, मिथ्या जग व्योहारा।
जब वह मिथ्या समझ में आवे, मिटे द्वन्द विस्तारा ॥ ,,
आप आप को आप पिछानो, बनो तत्व विज्ञानी।
कहा और का नेक न मानों, राधास्वामी की है बानी ॥ ,,

(७७)

शब्द की महिमा भारी, समझे कोई अधिकारी ॥टेक॥
शब्द शब्द का सकल पसारा, शब्द शब्द आधारा।
जो कुछ देखा शब्द ही देखा, शब्द शब्द निरवारी ॥ शब्द०
शब्द ही मारे शब्द जियावे, शब्द करे रखवारी।
शब्द से राज काज सब सूझे, शब्द विराग विचारी ॥ ,,
शब्द ब्रह्म है शब्द जीव है, शब्द ही देव पुजारी।
शब्द ज्ञान और शब्द ध्यान है, शब्द रूप विस्तारी ॥ ,,
शब्द प्रकाश ज्योति परछाईं, शब्द शब्द चमकारी।
शब्द प्रकाश पवन और अग्नी, जल थल शब्द मँझारी ॥ ,,
राधास्वामी संग शब्द को निरखा, शब्द स्वरूप बिचारी।
सुरत शब्द साधन चित भाया, मन प्रसन्न सुखारी ॥ ,,

[७८]

आशा पूरी नहीं हुई मेरी ॥ टेक ॥
आसा लग मैं भव में अटकी, फिरी भरम की फेरी।
भूली भटकी पन्थ में आई, की उपाय बहुतेरी ॥ आसा०
एक आस से लाख आस हैं, आस में आस घनेरी।
कभी उदास कभी हर्ष हुलासा, कभी निराश चित फेरी ॥ ,,
राज मिला धन सम्पत पाई, लगी सामग्री की ढेरी।
फिर भी नहीं सन्तोष हुआ मन, आसा से रही घेरी ॥ ,,

पुत्र कुपुत्र की चिन्ता व्यापी, मिलत न लागी देरी।
सब कुछ पाया कुछ नहीं पाया, रही आसा की चेरी ॥ आसा०
ज्ञान ध्यान जप तप की सूझी, सब निश्चल ठैरे री।
अन्त में रूप समझ सुख पाया, राधास्वामी संगत हेरी ॥ ,,

(७६)

सतसंग तीरथ राज प्रयाग ॥ टेक ॥

गंग भक्ति बहे निर्मल धारा, सरस्वती ज्ञान विराग।
जमुना करम धरम व्यौहारा, प्रेम प्रीत अनुराग ॥ सतसंग०
बट बिश्वास इष्ट पद दृढ़ता, गुरु पद पूरन राग।
तीन त्रिबेनी कर अस्नाना, जागा सोया भाग ॥ ,,
सुगम सहज सुख मंगल दाता, सुलभ जो सेवे लाग।
नहाये धोये निर्मल हो मन चित, छूटें कलि मल दाग ॥ ,,
बगला विरति हंस गति पावे, कोमल बानी कांग।
जीतेजी तत छिन फल देवे, इच्छा होय सो मांग ॥ ,,
काम अर्थ धर्म मोक्ष जो चाहे, ऐसे तीरथ भाग।
राधास्वामी दया से पूरन कामा, गुरु संगत नित जाग ॥ ,,

(८०)

अब तेरी गति जानी रे मन, अब तेरी गति जानी ॥टेक॥
सबही नचावत नाच अनोखा, सुर नर मूरख ज्ञानी।
एक बचा नहीं जाल से तेरे, भक्त तपस्वी ध्यानी ॥ अब०
तू समुद्र सम गहरा छिछला, थाह न कोई पानी।
संशय वायु प्रचंड बहे जब, लहर लहर लहरानी ॥ ,,
लोभी मोही द्रोही लम्पट, कामी क्रोधी मानी।
छिन में पवन आग बन जावे, छिन में पृथ्वी पानी ॥ ,,
द्वन्द रूप द्वन्द आसन द्वंदी, द्वैत अद्वैत की खानी।
अपने जाल से जग भरमाया, तेरी अकथ कहानी ॥ ,,

मन मतंग है मन गयंद है, किसी के बस नहीं आनी।
राधास्वामी दया होय जब जन पर, ज्ञान का अंकुस मानी ॥ अब तेरी

(८१)

साधन की प्रभुताई, मन साधे साध कहाई ॥टेक॥
मन साधे तो सब सधे, बिन साधे नहीं साध।
साध कहावन कठिन है, साध का मता अगाध ॥ साधन०
आंख कान मुख बन्द कर, सुन अनहद धुन तान।
तीन बन्द जब घट लगें, तब प्रगटे सत ज्ञान ॥ ,,
जो साधन सम्पन्न नहीं, नहीं अनुभव सम्पन्न।
बिन अनुभव सम्पन्नता, नहीं सतगुरु प्रसन्न ॥ ,,
साधन की सम्पन्नता, हो अनुभव सम्पन्न।
जो अनुभव सम्पन्न है, सो सतगुरु प्रसन्न ॥ ,,
राधास्वामी दीन हित, दीनानाथ दयाल।
दया रूप धर कह गये, बानी सरस रसाल ॥ साधन०

(८२)

हम नहीं जोगी ज्ञानी साधु, हम नहीं जोगी ज्ञानी ॥टेक॥
करता बनकर कर्म करें नहीं, नहीं अकर्म रहानी।
हमरे धर्म भर्म नहीं करमा, धर्म न कर्म भुलानी ॥ साधु०
योग भोग में भेद न जानें, नहीं योगी नहीं भोगी।
हमरे रोग सोग नहीं कोई, नहीं हम रोगी सोगी ॥ ,,
बिन पग चलें चाल निस बासर, बिन जिभ्या रस बानी।
बिना नैन के दृष्टा सृष्टा, बिना मान के मानी ॥ ,,
मन नहीं अमन न बुद्धि न शुक्ति, चित हंकार न जानी।
उनमन सहज समाध के बासी, बिना ध्यान के ध्यानी ॥ ,,
भक्ति ज्ञान और कर्म न मानें, मानें मान न मानी।
सब को जानें कुछ नहीं जानें, बिन जाने पहचानी ॥ ,,

गुरु ने रूप का भेद लखाया, अधिष्ठान अभिमानी ।
साक्षी शब्द शब्द बिन साक्षी, सुरत शब्द पहचानी ॥ ,,
हम सब हैं और कुछ भी नहीं हैं, कैसे करें बखानी ।
हम जैसा हमको कोई समझे, पड़े न भव की खानी ॥ ,,
बुन्द सिंध गति मर्म है न्यारा, धरती आकाश समानी ।
राधास्वामी गुरु ने अंग लगाया, प्रेम के पंथ चलानी ॥ साधु॰

(८३)

प्रेम के कुंड नहाले सजनी, प्रेम के कुंड नहालेरी ॥टेक॥
मैले वस्त्र उतार देह से, नहा नहा जस प्रीत मेह से ।
सज अङ्ग भूषण प्रेम नेह से, पिया को अपने रिझालेरी ॥ सजनी
समय मिला अवसर शुभ पाया, प्रीतम प्यारा तेरे ढिंग आया ।
सोया मनुआ लिया जगाया, अब उसको अपनाले ॥
तन जोबन सब है दस दिन का, धन सम्पत हुआ किसका किनका ।
जगत मोह का तोड़ के तिनका, पिया को अङ्ग लगाले ।' ,,
सुरत सहेली शब्द से ब्याही, माया जाल फँस भई कुराही ।
विभिचारी बन किया तबाही; अब तो सँभल सँभाले ॥ ,,
सुमिरन ध्यान भजन सिंगारा, शील सैंदूर भर मस्तक सारा ।
राधास्वामी तेरा प्रीतम प्यारा, घट में उसे बसाले ॥ सजनी

(८४)

कर पहले से कुछ जतन मीत, इस जगत से न्यारा होना है ॥टेक॥
और युक्ति कोई काम न आवे, इनमें जनम को खोना है ।
गुरु की भक्ति सदा हितकारी, बीज भक्ति मन बोना है ॥ कर
सकल रसायन छोड़ दे भाई, भक्ति सार का होना है ।
भक्ति का साबुन गुरु से पावे, करम चदरिया धोना है ॥ कर
तज दे मोह नींद का आलस, अन्त समय फिर सोना है ।
राधास्वामी चरन बांध दृढ़ प्रीती, नहीं फिर अन्त में रोना है ॥ ,,

(८५)

मेरा बांका रंगीला मनुआ, गुरु भक्ति रस में पागा ॥टेक॥
पहले बोलत बचन कठोरा, द्वेष ईर्षा लागा ।
अब तो बोले मधुरी बानी, हंस बना है कागा ॥ मेरा
बैर भाव की दुर्मति नासी, चित उपजा अनुरागा ।
ममता मोह मान मद छलबल, काम क्रोध सब त्यागा ॥ ,,
गुरु के चरन झुकावत माथा, भरम भाव भय भागा ।
जनम जनम का सोया मनुआ, राधास्वामी दया से जागा ॥ मेरा

(८६)

सुमिरूँ नित गुरु का नाम, छिन प्रतिछिन आठों याम ॥टेक॥
त्यागूँ मद मोह काम, दारा सुत धान धाम ।
लोक लाज साज काज, राज काज से न काम ॥ सुमिरूँ०
गाये गाये ध्याये ध्याये, चरनन चित लाये लाये ।
गुरु मूरत हृदय बसाये, शम दम साहस बढ़ाये ॥ ,,
समझ बूझ कर विवेक, तज दे चिंता अनेक ।
मन में बसे तेरे एक, राधास्वामी बांध टेक ॥ सुमिरूँ

(८७)

साधु अपना आपा खोजो ॥टेक॥
पढ़ा लिखा अज्ञान कमाया, ज्ञान की समझ न आई ।
चेतन रूप भुलाया अपना, आई चित जड़ताई ॥ साधु०
तुम में सब कुछ तुम सब कुछ हो, तुम से सब कुछ भाई ।
पोथी ग्रंथ पढ़े बहुतेरे, अपनी परख नहीं आई ॥ ,,
ज्यों समुद्र में लहर उठत है, बूँद बुदबुदे लाखों ।
तैसे ही तुम में सब कुछ है, देखो अपनी आंखों ॥ साधु०
तुम ब्रह्मा विष्णु महेशा, तुम में ब्रह्म है माया ।
तुम निज रूप प्रकाश की सूरत, दूजा सब है छाया ॥ साधु०

राधास्वामी परम सन्त ने, सच्चा भेद बताया।
जो कोई सतसंग में आया, तत्व सार समझाया ॥ साधू०

(८८)

सुरत का खेल खिलाया गुरु ने, सुरत का खेल खिलाया ॥टेक॥
काया माया छाया भूला, मोह भरम लपटाया।
गुरु ने बांह गही मेरी आकर, चित दे चेत चिताया ॥ गुरु ने०
काया मध्ये सोया मनुआ, सोये आयु गँवाया।
गुरु ने चितावनी देके जगाया, उठा विकल घबराया ॥ ,,
अन्तरमुख विरती को साधा, अपने अन्तर आया।
सहस कमलदल बैठक ठानी, घंटा शंख बजाया ॥ ,,
तज अनेक गति त्रिकुटी की सूझी, त्रिकुटी मंडल आया।
अ उ म ओंमकार की बानी, सुन मृदंग हरषाया ॥ ,,
सुन्न महासुन्न मान सरोवर, तीन त्रिवेनी नहाया।
हंस गति ररंग धुन सुनकर, छीर नीर बिलगाया ॥ ,,
चौथे भँवर गुफा की घाटी, खिड़की जाय खुलाया।
सोहं सोहं बंसी की गति, प्रगटी प्रगट सुनाया ॥ ,,
पंचम सत गति बीन की बानी, सत्तनाम दरसाया।
अलख अगम चढ़ काज बनाया, राधास्वामी के गुन गाया ॥ ,,
यह सब साधन घट के भाई, घट में अघट लखाया।
आनन्द सुख हुई सुरत सियानी, नर जीवन फल पाया ॥ ,,
सुमिरन भजन ध्यान की किरिया, अजपाजाप जपाया।
राधास्वामी की करुना से, कटे काल कर्म माया ॥ गुरु ने

(८९)

साधु शब्द योग चित दीजे ॥टेक॥
सुगम सहज है कठिन नहीं है, घट के शब्द का सुनना।
सुन सुन सुरत होय अति निर्मल, अन्तर बैठ के गुनना ॥ ,,

कुछ दिन संगत गुरु की कीजे, बचन विचार विलासा।
ज्ञान तत्व की समझ जो आवे, उपजे हर्ष हुलासा॥ ,,
प्रेम प्रीत प्रतीत पदारथ, गुरु संगत मिल पाना।
भक्ति युक्ति का सार समझकर, सोया मनुआ जगाना॥ ,,
जनम जनम का भूला यह मन, घट के पंथ न चाले।
गुरु मिले तब भेद बतावें, अन्तर देखे भाले॥
भेद पाय जीते कर्म बानी, पूछे प्रश्न अनेका।
तज अनेक विधि वस्तु अनेका, धारे एक की टेका॥ ,,
एक की टेक धार मन अपने, अन्तर मुख को लावे।
सुरत शब्द साधन तब सीखे, घट में वृति जमावे॥ ,,
भौं के बीच में आसन मारे, तिल तीसरा खुलावे।
निरखें सहस कमलदल लीला, घंटा शंख बजावे॥ ,,
त्रिकुटी गढ़ ओमकार का दर्शन, गुरु गम ओम की बानी।
बाजे मन्त्र प्रणव का सुमिरन, तीन गुणों की खानी॥ ,,
सुन्न शिखर ब्रह्मरेन्द्र की चोटी, मानसरोवर थाना।
हंस गति रारंग धुन सुनना, चीर नीर बिलगाना॥ ,,
सहज सहज में सहज वृत्ति हो, सहज सहज हो जाई।
सहज समाध सहज गति साधी, सहज में सहज समाई॥ ,,
आगे चली सुरत मतवाली, भँवर सोहंगम घाटी।
माया काल की निरख परख कर, ठाठ सुठाठ ही ठाठी॥ ,,
सत पद जाय सत्त लख पाया, सत का बीन बजाया।
सत पद अलख अगम ठैराया, रूप रेख नहीं काया॥ ,,
राधास्वामी अनाम अपारा, मध्य आदि और अन्ता।
इस पद में कोई विरला पहुंचे, साध हंस और सन्ता॥ ,,

———

[६०]

सजनी शील क्षमा चित्त धार ॥टेक॥

जग में आई नर तन पाया, अवसर मिला अपार।
सुमिरन भजन ध्यान गुरु करले, जा भव जल के पार ॥ सजनी०
प्रेम प्रीति के मारग पग धर, सब से प्रेम पियार।
तू तो तरी चरन लग गुरु के, तार दे कुल परिवार ॥ ,,
मीठे वचन बोल नित मुख से, मन रहे बुद्धि विचार।
दृष्टि हो तिल के तिलपट में, साध परमारथ सार ॥ ,,
गुरु का नाम न भूले चित से, आठ पहर हुशियार।
परमारथ का गुर है प्यारी, ऐसा कर व्यौहार ॥ ,,
आनन्द सुख का जीवन जैसा, दुख न हिये में धार।
राधास्वामी दया संभल कर रहना, द्वेष भाव को टार ॥ ,,

(६१)

जगत का लेखा देख लिया ॥टेक॥

आसा बाँधी हुए निरासा, आसा लग पछताना।
आसा तृष्णा माया फाँसी, सोच समझ अब जाना ॥ जगत०
मुट्ठी बांधे सब आये हैं, मुट्ठी बांधे जाना।
हाथी घोड़े माल खजाने, संग नहीं ले जाना ॥ ,,
एक लख पूत सवा लख नाती, रावन गया अकेला।
राम गये सीता गई रानी, यह सब काल का खेला ॥ ,,
मान बड़ाई राज दुहाई, किसी के काम न आई।
दो दिन के सब खेल तमाशे, अन्त मांटी मिल जाई ॥ ,,
राधास्वामी दीन दयाला, तुम हो सदा सहाई।
ऐसी कृपा करो मेरे दाता, माया न हो दुखदाई ॥ ,,

[६२]

प्रेम बिना बेकाम स्वाँग सब, करम धरम का ।।टेक।।
प्रेम भाव की महिमा भारी, भेष धरे कोई कैसा ।
घर बन परबत एक समान हों, रहे जैसे का तैसा ।। प्रेम०
प्रेम पियाला जो जन पीवे, सीस दान में देवे ।
तन मंन सीस जो अरपे नाहीं, रस नहीं प्रेम का पीवे ।। ,,
प्रेम प्रेम सब कहते डोलें, प्रेम का सार न जानें ।
बिना प्रेम के सब पाखंड है, क्यों प्रीतम पहचानें ।। ,,
राधास्वामी सतगुरु दाता, प्रेम का राग सुनाया ।
चरन कमल में झुके तो हम भी, प्रेम दात में पाया ।। ,,

[६३]

माई झूठा जग व्यौहार ।।टेक।।
बालक हाथ से पकड़न दौड़ा, देख अपनी परछाँई ।
परछांई तो हाथ न आई, व्याकुल चित चिल्लाई ।। माई०
यह जग मिथ्या रैन का सपना,सपना चित नहीं दीजे ।
सांचा नाम गुरु का भाई, गुरु शरनागत लीजे ।। ,,
चार दिना के संगी साथी, कुल कुटुम्ब परिवारा ।
अन्त समय कोई काम न आवे, सब न्यारे का न्यारा ।। ,,
देह प्रान के संग रहत हैं, छिन भर छोड़े नाहीं ।
मौत नगाड़ा जिस दिन बाजे, देह प्रान बिलगाहीं ।। ,,
सांस साँस जप नाम गुरु का, सांस का नहीं भरोसा ।
राधास्वामी चरन प्रेम से गहले, फिर नहीं कुछ अफसोसा ।।

[६४]

साधु मन में करो विचारा ।। टेक ।।
मन बच कर्म धर्म शुभ करनी, नासो मूल विकारा ।
फिर नहीं व्यापे कष्ट कलेसा, सहज ही हो छुटकारा ।। साधु०

हिये का बरतन मांज के भाई, भरलो अमृत सारा।
अमृत सार नाम है गुरु का, नाम का लेओ सहारा॥ साधु०
घट का घाट बदल दो प्यारे, अवघट गहो किनारा।
त्यागो भव दुरमति की दुर्गति, गहो चरन आधारा॥ ,,
जनम जनम के करम कमाये, सिर पर धारा भारा।
हलका बोझ शब्द से होगा, घट में बजे दुतारा॥ ,,
राधास्वामी दया निरख अन्तर में, मौज में करो गुजारा।
दुख आपति आपहि सब भागें, अन्तर सुख का नजारा॥ ,,

[९५]

साधु भेद बतादो घट का॥ टेक॥
घट की लीला समझ न आवे, रहे जिया में खटका।
खटका बस खटके में अटके, चोट सहे अवचट का॥ साधु०
घट में अटपट घट में खटपट, घट का लागे झटका।
झटके से संशय मन जागे, मन रहे अधर में अटका॥ ,,
अटका भूले मोह हिंडोले, नहीं वह तट का पट का।
भोग रोग और सोग में लम्पट, भरम मोह का मटका॥ ,,
दया करो अज्ञान मिटाओ, देदो सहज सा लटका।
लटका पाय द्वन्द सब भागे, खेल खिलाओ नट का॥ ,,
परदा खुले मौज से अबकी, हिया जिया के तिलपट का।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, अब न फिरूँ जग भटका॥

[९६]

सतगुरु भेद बताया न्यारा॥ टेक॥
काम क्रोध मद मोह बिसारा, प्रेम का किया विस्तारा।
रूप अरूप की गम कुछ पाई, मन मंसा को मारा॥ सतगुरु०
सत की संगत सत सुध पाई, सत का भया निरवारा।
अब नहीं काम असत से हमको, गुरु का मिला सहारा॥ ,,

काम को समझा धरम को समझा, मेटा हिये का विकारा। नेरे०
गुरु की दया से अब लख पाया, अर्थ तत्व का सारा॥ सतगुरु
बिन सतसंग विवेक न सूझे, संगत गुरु दरबारा।
ज्ञान गुरु के रहे सहारे, गुरु मत अगम अपारा॥ ,,
राधास्वामी जग में आये, धार सन्त अवतारा।
'शालिगराम' ने अलख लखाया, खोला मर्म का द्वारा॥ सतगुरु

(९७)

साधु सतगुरु भेद बताया ॥टेक॥

धर्म अर्थ और काम मोक्ष का, सार मर्म प्रगटाया।
जड़ चेतन की ग्रंथी खोली, तत्व का तत्व सुझाया॥ साधु०
दुबिधा भागी दुर्मति त्यागी, भव भय भरम मिटाया।
अब नहीं संशय मोहि सतावे, भ्रान्ती बीज नसाया॥ ,,
आसा लग मद लोभ मोह में, अपना रूप भुलाया।
सत संगत में समझ बूझ भई, आप में आपा पाया॥ ,,
बीज में अंकुर अंकुर डाली, डाली फूल खिलाया।
फूल से फल का रूप दिखाया, फल में बीज लखाया॥ ,,
काल चक्र सृष्टि और प्रलय, जो भूला भरमाया।
राधास्वामी सतगुरु बन कर, निज स्वरूप समझाया॥ साधू०

[९८]

साईं भवनिधि के पार लगा ॥टेक॥

अगम अपार जगत का सागर, डूबे अवगुनी और गुन आगर।
तोड़े सकल चतुर नर नागर, पाया कष्ट महा॥ साईं०
रात अंधेरी पंथ न सूझे, डगमग नाव लहर से जूझे।
कोई अपना दुख नहीं बूझे, खेवटिया तू कहाँ रहा॥ ,,
पवन बहे चहुँ दिस झक झोरी, भँवर करे बहु जोरा जोरी।

चाहत है नय्या मोरी बोरी, अब तो मन में धार दया ॥ ,,
बेड़ा आन पड़ा मँझधारा, नजर न आवे हाय किनारा ।
रहा किसी का नाहिं सहारा, साहेब मेरे तेरे सिवा ॥ ,,
औरन को तारा बरयारी, अब क्यों देर हमारी बारी ।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, डूबत को ले आज बचा ॥ ,,

(९९)

बांह गहो मेरी नाथ सँभारो ॥टेक॥

जो मैं दीन अधीन दया निधि, मेरी ओर निहारो ।
तुम बिन और न दूजा जानूँ, मेरा करो निस्तारो ॥ बांह०
दीनदयाल परम हितकारी, दाता नाम तुम्हारो ।
राखो लाज काज करो स्वामी, अब की बेर उबारो ॥ ,,
धर्म न भक्ति भाव नहीं साधन, नहीं कुछ ज्ञान बिचारो ।
पतित कुटिल क्रोधी अति कामी, मन में भरा हंकारो ॥ ,,
माया लोभ मोह बहु तृष्णा, मेरा जनम बिगारो ।
किस विधि बिनती करूँ प्रभु तुम्हारी, बिगड़ी सकल सुधारो ॥ ,,
तुम समरथ तुम हो दुख भंजन, तुम सब के रखवारो ।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, आज अधम को तारो ॥ ,,

(१००)

मेरे दाता दीन दयाल ॥टेक॥

तू करुणा मय जगत आधारा, तू सब का है प्रतिपाला ।
तू स्वामी हम सेवक तेरे, नहीं है अब कोई रखवारा ॥ मेरे०
तू दुख भंजन जन मन रंजन, काट भरम यह जंजाला ।
मात पिता तू हित सम्बन्धी, मैं तेरा बाल गोपाला ॥ ,,
तू अथाह सागर है स्वामी, जीव नदी है और नाला ।
अन्धकार में बहु दुख पाया, करदे आज उजाला ॥ ,,
तूने पाला तूने पोसा, छिन छिन तूने सँभाला ।

दीनबन्धु रत्ता कर मेरी, पड़ा है करमन से पाला ॥ मेरे०
ना बल पौरुष ना मेरे बुद्धि, कठिन है काल कराला ।
बल दे करूँ भक्ति तेरी निश दिन, फेरूँ नाम की मैं माला ॥ ,,
तीन ताप मोहि अधिक सतावे, नाम से करदे सुखाला ।
कैसे दरस परस करूँ तेरा, हिये में लगा है मेरे ताला ॥ ,,
दे दे दे अब देर न कर तू, अमृत नाम रसाला ।
आपको बिसरूँ जग को भुलाऊँ, पीलूँ प्रेम पियाला ॥ ,,
मांगूँ मान न मांगू सम्पत, चाहूं न घोड़ न घुड़शाला ।
राधास्वामी समरथ सतगुरु दाता, करदे मोहि निहाला ॥ मेरे०

(१०१)

अब मैं गुरु से नेह लगाऊँ ॥टेक॥

करूँ हाथ से गुरु की सेवा, सतसंग चल कर जाऊँ ।
जिभ्या से गुरु नाम का सुमिरन, वृति हिये में बसाऊँ ॥ अब मैं०
घट में दरस परस सतगुरु का, घट में तारी लगाऊँ ।
घट में भजन ध्यान निस बासर, घट में ज्योति जगाऊँ ॥ ,,
करूँ आरती घट हित चित से, मंगल साज सजाऊँ ।
स्तुति करूँ उमंग प्रेम से, राग सुहावन गाऊँ ॥ अब मैं०
आंख कान जिभ्या रस त्यागूँ अमी भोग नित खाऊँ ।
बाहर के पट देकर सजनी, अन्तर के खुलवाऊँ ॥ अब मैं०
गुरु का रूप लगे अति प्यारा, देख न पलक झपाऊँ ।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, गुरु को आज रिझाऊँ ॥ ,,

(१०२)

मुझे प्रेम की डगर दिखादो जी ॥टेक॥

रात अँधेरी पन्थ न सूझे, हाथ पकड़ कर बतादो जी ।
जिया घबरावे हिया अकुलाये, दिल का दर्द मिटा दो जी ॥ मुझे०
पीर विरह की कलेजे साले, मेरे पिया से मिलादो जी ।

निस दिन तड़पूँ निस दिन तरसूँ, प्रेम नगर पहूंचा दो जी ॥ ,,
भूख प्यास दुख अधिक सतावे, अमृत डार हिलादो जी।
फल मीठे मोहि मिलें दया से, बूँद अमी की पिलादो जी ॥ ,,
हाय हाय पिय केहि विधि पाऊँ, कोई यतन जतादो जी।
व्याकुल हो चहुँदिश मैं भटकी, भूल भरम को घटादो जी ॥ ,,
पिया का बोल सुहावन लागे, अनहद तूर बजा दो जी।
बिरहन देत संदेसा अपना, मेरे पिया को सुना दो जी ॥ ,,
अँखियन नीर बहे जल धारा, बिरह की आग बुझादो जी।
घर की हुई न राह बाट की, हिया कष्ट हटा दो जी ॥ ,,
आसा तृष्णा बहु विधि मेटो, धुर पद आके लखा दो जी।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, यम का जाल कटादो जी ॥ मुझे०

[१०३]

मुझे प्रेम का प्याला पिलादो जी ॥टेक॥

हिय उमगे जिया सुख रस भोगे, कष्ट कलेश भुलादो जी।
भेद अभेद को चित नहीं लावे, निज मतवाला बनादो जी ॥ मुझे०
तन मन धन सब गुरु पद अरपन, सीस से चरन लगादो जी।
शब्द रसीले राग रंगीले, अनहद तूर बजादो जी ॥ मुझे०
रूप अरूप लखे घट भीतर, हिया का परदा हटादो जी।
प्रीतम प्यारे पै बलबल जाऊँ, अमी का घूँट दिलादो जी ॥ ,,
कँवल खिले अमृत झर लागे, संशय का भूत भगादो जी।
अभय दान दो निर्भय करदो, भक्ति का पंथ दिखादो जी ॥ ,,
झूम झूम गिरे उठ उठ धावे, अचरज नाच नचादो जी।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, आंखों में सरसूँ पिलादो जी ॥ ,,

[१०४]

मुझे प्रेम के पेंग झुला दो जी ॥टेक॥

भक्ति भाव का पड़ा है हिंडोला, आकर मुझको बिठादो जी।

अचरज बानी गीत सुहानी, मंगल खानी खुलादो जी ॥ मुझे०
बरखा ऋतु बरसे जल रिम झिम, प्रेम की धार बहादो जी ।
तन मन भीगे अग्नी बिरह की, अपनी दया से बुझादो जी ॥ ,,
सोया मनुआ अचेत पड़ा है, हाथ पकड़ के जगादो जी ।
रात दिवस गुरु ध्यान लगावे, ऐसी सूझ सुझादो जी ॥ ,,
दादुर मोर पपीहा बोलें, अद्भुत शोर मचादो जी ।
सखी सहेली हिल मिल गावें, प्रीत की रीत चलादो जी ॥ ,,
पचरंग चुनरी सुहागिन राग की, सुरत निरत को उढ़ादो जी ।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, निज महिमा समझादो जी ॥ ,,

(१०५)

चरन शरन की छाया दीजे, चरन शरन की छाया ॥टेक॥
मैं तो दीन अधीन दयामय, मोह जाल लपटाया ।
तुम प्रभु जीव उबारन आये, कीजे पतित पर दाया ॥ दीजे चरन
दुबिधा संशय छल चतुराई, भूल भरम भरमाया ।
भोग सोग में निस दिन रहता, व्यापा काम मद माया ॥ दीजे०
अगम अगोचर रूप तुम्हारा, कोई भेद न पाया ।
मैं अजान कुछ मर्म न जानूँ महिमा क्या कहुँ गाया ॥ ,,
मुझ सम पापी और न कोई, मन बच कर्म और काया ।
नाम दान की ऋद्धि निधि दे, भिक्षा माँगन आया ॥ ,,
ज्ञान ध्यान भक्ति गुरु सेवा, श्रुति स्मृति बहु गाया ।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, गुरु ने आन चिताया ॥ ,,

(१०७)

मेरे घट का मन्दिर खुल गया ॥टेक॥
गुरु मूरत का दर्शन पाया, जग मग ज्योति जगाया ।
आरती साजी प्रेम भक्ति की, उमगा मन हरखाया ॥ मेरे०

घंटा शंख बजे मन्दिर में, धुन मृदंग की गाजी।
बीन बांसुरी बजे सरंगी, सुन सूरत हुई राजी॥ मेरे०
या सूरत की महिमा भारी, उपमा कही न जावे।
चाँद सूरज की चौरी लेकर, प्रीत के हाथ डुलावे॥ ,,
शेष सहस मुख अस्तुति गावे, ब्रह्मा वेद सुनावे।
शिव के हाथ में डमरू सोहे, विष्णु शंख बजावे॥ ,,
रोम रोम में प्रगटे देवा, शारद इन्द्र धनेशा।
कहीं कमला कहीं दुर्गा नाचे, गावे शब्द गनेशा॥ ,,
गुरु के चरन निरंजन बासा, हृदय ब्रह्म निवासा।
परब्रह्म छबि अद्भुत शोभा, सोहंग करे उजासा॥ ,,
सत्त पुरुष लख अलख को देखा, अगम का किया परेखा।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, मिटगया यम का लेखा॥

(१०७)

पाया पद निरवान साधु, पाया पद निरवान॥ टेक॥
नहीं वह करम न भक्ति भाव कुछ, नहीं वह सूखा ज्ञान।
गुरु की दया से लखी गुरु मूरति, घट में सब दरसान॥ पाया०
बजत बांसुरी बीन चिकारा, सुन सुन मन हरषान।
झलकत झिलमिली चमकत बिजली, माया काल पछतान॥ ,,
अगम पन्थ में अगम विराजा, अगम में मिला ठिकान।
ऊँचे चढ़ सुरत भई मतवाली, लिया प्रीतम पहचान॥ ,,
जहां जहां चलूँ वहीं मेरा तीरथ, जो जो करूँ सो ध्यान।
जाग्रत स्वप्न एक सम लेखूँ, खुले नैन विज्ञान॥ ,,
बन परवत घर भीतर बाहर, जंगल और मैदान।
जहां जहाँ देखूँ अद्भुत लीला, क्योंकर करूँ बखान॥ ,,
फूल में बास मेंहदी मे लाली, जीव जन्तु में प्रान।
चकमक मध्ये आग दिखाई, अलख ज्योति झलकान॥ ,,

कहां के योग कहां के जप तप, कहां के संयम ध्यान।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, मिटगया मन का मान ॥ पाया०

(१०८)

गुरु ने आन छुड़ाया साधु, गुरु ने आन छुड़ाया ॥ टेक ॥
माया काल की बड़ी जेवरी, बन्धन बांध बँधाया।
गुरु की दया से बन्धन छूटा, यम का फांस कटाया ॥ गुरु०
भव की नदी अथाह भई है, डूब गया जो आया।
गुरु की कृपा शब्द का बेड़ा, भाग जगे तब पाया ॥ ,,
एक आस विश्वास गुरु का, गुरु ने पार लगाया।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, गुरु गुन चित से गाया ॥

(१०६)

साधु सतगुरु मर्म जताया ॥ टेक ॥
आसन मारा घट के भीतर, कहीं गया नहीं आया।
हाथ पांव को कौन हिलावे, सहज में योग कमाया ॥ साधु०
पिंगला बनकर परबत लांघे, ब्रह्म सिखर चढ़ आया।
गूँगा बहु बिधि बानी बोले, अनहद नाद बजाया ॥ ,,
बिन कर कर्म करूँ मैं सब बिधि, बिन पद पन्थ में आया।
बिन जिभ्या रस स्वाद लेत हूं, सतगुरु कीनी दाया ॥ ,,
जहां मन जाये लगे तहां उन्मन, सुन्न समाध रचाया।
भँवर गुफा की दुर्गम घाटी, तोड़ सत पद पाया ॥ ,,
भव दुख से नहीं रहूं दुखारी, गुरु पूरे का आज्ञाकारी।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, भक्ति साज सजाया ॥ ,,

(११०)

मनसा मन से निकली साधु, मनसा मन से निकली ॥टेक॥
मनसा मन से वैसे ही प्रगटी, ज्यों बादल में बिजली।
मकर तार गति उसको जानो, वह नकली नहीं असली ॥ साधु०

आदि अन्त में ठौर ठिकाना, झूठ अवस्था बिचली।
बिचली दशा जो चित नहीं व्यापे, मन नहीं आवे बिकली॥ साधु०
रेशम का कीड़ा अज्ञानी, गले फन्द की हँसली।
छोड़े तार मुक्ति गति पाये, ज्यों भुजंग निज कचली॥ ,,
सोच समझ मूढ़ अविवेकी, बातें अगली पिछली।
हृदय विवेक भाव जब प्रगटे, यम नहीं तोड़े पसली॥ ,,
राधास्वामी गुरु की दया भई जब, सुरत निरवानी पद ली।
बंध मुक्ति का संशय छूटा, अब तो अवस्था बदली॥ ,,

(१११)

अब मोहे समझ पड़ी गुरु बानी॥ टेक॥
गुरु बानी है ज्ञान की खानी, गुरु बानी सहदानी।
गुरु बानी है मंगल दानी, सूझे पद निरवानी॥ ,,
बानी में है शक्ति अनूपम, कोई कोई बिरला जानी।
इस बानी की महिमा न्यारी, बानी अगम निशानी॥ ,,
निराकार साकार है बानी, आवागवन मिटानी।
जो कोई बानी सार पिछाने, पड़े न भव की खानी॥ ,,
गुरुमुख बानी सहज सियानी, सुन सुन कर मन मानी।
बानी तो भव दुख सब नासे, बख्शे ठौर ठिकानी॥ ,,
साध की संगत गुरु की सेवा, आय मिले जब प्रानी।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, होगये ज्ञानी ध्यानी॥ ,,

(११२)

बल बल जाऊँ गुरु उपकार॥ टेक॥
मानुष रूप धरा सतगुरु ने, जीव उबारन हार।
तिनकी कृपा अविद्या नासे, घट में भानु उजार॥ बल बल०
मोह मया में लम्पट निस दिन, सूझे वार न पार।
कहीं दारा सुत आन फँसाने, कहीं कुल कहीं परिवार॥ ,,

सोतो भरम मिटा छिन पल में, जब मिले गुरु दातार।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, छूटा यम का द्वार ॥ बल बल०

[११३]

साधु तान सुनो धुन पूरे का ॥ टेक ॥
मन मन्दिर में आन विराजो, शोर मचा तंबूरे का।
बाजत बीन मृदंग बांसुरी, राग रंग घट सूरे का ॥ साधु०
सुन सुन सुन मन अति हरषाया, छोड़ समाज अधूरे का।
रंग जमा अँखियां मतवारी, ध्यान न भंग धतूरे का ॥ ,,
घट में नाचत सुरत अप्सरा, सुन धुन अन्तर तूरे का।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, बल पाया गुरु पूरे का ॥ ,,

[११४]

गुरु प्रेम का रंग जमा दो जी ॥ टेक ॥
संग किया चरनों में पड़ी, निहसंग को संग लगा दो जी।
मेरा संगी साथी कोई नहीं, निज संग की महिमा दिखादो जी ॥ गुरु०
जब जप तप तीरथ बरत तजे, तब अपना स्वरूप दिखादो जी।
कुल लाज मिटी परिवार छुटा, भक्ति का साज सजादो जी ॥ ,,
नहीं ज्ञान न ध्यान न सेवा यतन, विगड़ी हुई बात बनादो जी।
राधास्वामी अब कर दया की नजर, भवजाल से आन छुड़ादो जी ॥

[११५]

साधु मन की सूझ सुझाओ ॥ टेक ॥
मन को सोधो मन परबोधो, मन ही लगाम लगाओ।
मन की दुविधा दूर निकारो, चंचल मन ठैराओ ॥ साधु०
मन की खटपट सकल मिटाओ, उलझा मन सुलझाओ।
मन है अटपट मन है लटपट, झटपट मन बिलगाओ ॥ ,,
शुभ संकल्प की राह बाट में, मन का घोड़ा कुदाओ।
राह रुकाना गुरु से पूछो, मन की चाल न जाओ ॥ ,,

प्रथम सहसदल कमल निहारो, दूजे त्रिकुटी धाओ।
तीजे सुन्न महासुन्न निरखो, भँवर में बंसी बजाओ॥ ,,
सत्य लोक चढ़ सुनो बीन धुन, मंगल साज सजाओ।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, अजर अमर पद पाओ॥ ,,

[११६]

छोड़ो मन के ताना बाना ॥टेक॥

जब लग दुबिधा बसे हिये में, तब लग नर दीवाने।
जो इस दुबिधा को तज भागे, सो हैं चतुर सियाने॥ छोड़ो०
अपने भाव आप सब भूले, फिरते हैं भरमाने।
दोष लगावें सृष्टि कर्म को, सार भेद नहीं जाने॥ ,,
मन के खट पट उमर गँवाई, मन की गति न पिछाने।
छल बल कपट सियानत झूँठे, इनकी फांस फँसाने॥ ,,
बीन शब्द में झूमत डोलें, ज्यों भुजंग लहराने।
तैसे माया ममता में सब, अधम रहें लपटाने॥ ,,
मनो राज की अटपट लीला, क्या कोई बरन बखाने।
राधास्वामी मेहर बिना यह प्रानी, यम के हाथ बिकाने॥ छोड़ो०

(११७)

मन तू सोच समझ पग धार ॥टेक॥

बिन समझे कोई सार न पावे, भटके बारम्बार।
संशय दुबिधा और चतुराई, यह अज्ञान विकार॥ मन तू०
कोई नर पशु है कोई तिरिया पशु, गुरु पशु कोई गँवार।
वेद पशु है सब संसारा, बिना विवेक विचार॥ ,,
माया पशु माया का बँधुआ, मुक्ति पशु स्वीकार।
भक्ति पशु बन्धन नहीं काटे, बूड़ा काली धार॥ ,,
ज्ञान पशु की क्या करूँ निन्दा, वह ग्रंथन के लार।
जड़ चेतन की गाँठ न खोले, उरझ उरझ रहा हार॥ ,,

योग पशु बँधे योग की रसरी, बैठे आसन मार।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, सेवक हुआ भवपार ॥ मन तू०

(११८)

साधू छोड़ो भरम कहानी ॥टेक॥

सोच समझ कुछ मन में अपने, पाओ मरम निशानी।
बिन सोचे नहीं सार की सुध बुध, मिटे न आना जानी ॥ साधू०
कथा सुने बहु ध्यान लगाया, बिन विवेक अज्ञानी।
बगला भक्त की कौन बड़ाई, जो सत नहीं पहचानी ॥ ,,
कोई सिद्धि कोई शक्ति में भूले, कोई मन फांस फँसानी।
क्या होवे नर भेस बनाये, भेस भरम की खानी ॥ ,,
वाद विवाद से क्या फल पाया, दिन दिन अवधि सिरानी।
निज अनुभव से काम न जिसको, वह तो निपट अभिमानी ॥ ,,
कर सतसंग विवेक राख चित, तब मिटे द्वन्द गलानी।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, पद परसा मन बानी ॥ ,,

(११९)

नाम प्रताप सुरत मेरी जागी ॥टेक॥

दुख सुख एक समान भये हैं, भक्ति अमीरस पागी।
चाह मिटी चिंता गई चित से, सहज बनी बैरागी ॥ नाम०
सोवत जागत कबहुँ न बिसरूँ, मन चरनन रहे लागी।
आप अचेत नहीं सुरत सचेती, भव दारुन तज भागी ॥ ,,
निर्मल बिमल अमल मगनानी; रहत सदा अनुरागी।
यह तो गुन कोई विरला समझे, साध विवेकी त्यागी ॥ ,,
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, भक्ति अचल वर मांगी।
गुरु के पद सरोज में निस दिन, मेरी लव रहे लागी ॥ नाम०

——

(१२०)

सतगुरु ने पार लगाया ॥टेक॥

मैंने तेरो चरन गहा है, तूने बांह गही,
मेरी लाज तुझे है साईं, सच्ची बात कही ॥ सतगुरु०
मैं अपराधी जनम जनम का, तू तो तारन हारा।
भव जल में नहीं डूबूँगा मैं, तू करदेगा पारा ॥ ,,
रात दिवस तेरा है ध्याना, तेरे सिवा न दूजा।
तेरा सुमिरन तेरा भजन है, तेरी ही गुरु पूजा ॥ ,,
सब में तेरा रूप है व्यापा, जड़ चेतन में साईं।
ब्रह्म में छाया तेरी निरखी, माया में रही झांईं ॥ ,,
सुरत शब्द की करूँ कमाई, ज्ञान ध्यान निधि पाऊँ।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, हरख हरख गुन गाऊँ ॥ ,,

(१२१)

अरे मन भूला रे भूला ॥टेक॥

शीश महल बिच पड़ा स्वान ज्यों, देखी निज परछांईं।
भोंक भोंक कर प्रान तजो है, अपनी गम कुछ नाहीं ॥ अरे०
छाया देख डरा ज्यों बालक, समझ न ताको आई।
मात पिता सब दुखित भये हैं, क्या गति बरनूँ भाई ॥ ,,
मुट्ठी बँधे बेर को निरखा, हाथ डाल ताहि पकड़ा।
खुले न हाथ विवश भया बानर, भरम करम में जकड़ा ॥ ,,
रस्सी बीच सांप दरसाना, भय वश बुद्धि हराई।
भरम फाँस में यूँ जीव भरमा, भरमे ऋषि मुनि ज्ञानी ॥ ,,
ठूँठ मध्य ज्यों भूत दिखाया, रोग सोग उपजाया।
चतुर बैद्य सब औषधि लाये, मूरख प्रान गँवाया ॥ ,,
चरखी ऊपर चढ़ा सुवना, अधर में निसदिन झूला।
केहि विधि वाको हो छुटकारा, सहे काल का सूला ॥ ,,

झूँठा जग झूँठा व्यौहारा, झूठी है सब माया ।
राधास्वामी चरन शरन ले प्रानी, क्यों माया भरमाया ॥ ,,

(१२२)

इस घट का मन्दिर देखा ॥टेक॥

इस मन्दिर में दस दरवाजे, एक एक से भारी ।
झिलमिल ज्योत जगे छिन पलपल, निरखत लागे तारी ॥ इस०
घट में काशी घट में द्वारका, घट हरद्वार की माया ।
घट में मथुरा घट में पुरी है, घट सुमेर की छाया ॥ ,,
घट में मानसरोवर निरखा, निरख किया अस्नाना ।
अमल विमल निर्मल भया हंसा, उपजा सत मत ज्ञाना ॥ ,,
ब्रह्मरेन्द्र के ऊँचे शिखर पर, जब गुरु ध्यान लगाया ।
माया ममता सकल बिनासी, सुन्न समाध रचाया ॥ इस०
नहीं कहीं आना नहीं कहीं जाना, जप तप भरम विकारा ।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, घट लख मिटा संसारा ॥ ,,

(१२३)

इस घट का मन्दिर सूना है ॥टेक॥

गुरु सूरति पधराई नाहीं, घंटा शंख न बाजे ।
जगमग ज्योत दृष्टि नहीं आवे, अनहद नाद न गाजे ॥ इस
किस की आरति किसकी सेवा, पूजा किसकी धारूँ ।
किस विधि किसका ध्यान लगाऊँ, किसके बल मन मारूँ ॥ ,,
भाव फूल की माला बनी है, किसके गले पहनाऊँ ।
किसे सुनाऊँ किसे रिझाऊँ, किसकी अस्तुति गाऊँ ॥ ,,
चरनामृत की प्यास है चित में, भूक प्रसाद की बाढ़ी ।
भोग लगे किस बिध मूरति का, सोच फिकर मोहि गाढ़ी ॥ ,,
सुमिरन भजन ध्यान सब निष्फल, जब गुरु चित्त न आवे ।
राधास्वामी मेहर करें जब जन पर, तब मेरी बन आवे ॥ ,,

[१२४]

मनुआ बहुत किया अन्धेर ।।टेक।।

कहां जाऊँ आनन्द सुख पाऊँ, शान्ती सावधान चितलाऊँ ।
गुरु गुन मगन भाव नित गाऊँ, तू है बड़ा भट भेर ।। मनुआ०
कहत न माने झगड़ा ठाने, सत और असत नहीं पहचाने ।
अनुचित उचित सभी नहीं जाने, डाले हेरा फेरा ।। ,,
क्रोध की अग्नी प्रचंड चलावे, द्वेष ईर्षा डाह मचावे ।
आप जले और मुझे जलावे, चारों दशा को घेर ।। ,,
जीतेजी दिया नरक में वासा, सब को दिखाये मेरा तमाशा ।
बुद्धि ज्ञान सभी तुम नासा, ढीट कुबुद्धि दिलेर ।। ,,
हाय उपाय नहीं कोई सूझे, मनुआ सत मत सार न बूझे ।
बिना प्रयोजन सब से जूझे, झगड़ा लड़ाई हेर ।। ,,
अशुभ विचार अशुभ मुख बानी, कामी लोभी लम्पट मानी ।
तू क्यों ऐसा बना अज्ञानी, करम बोझ सिर ढेर ।। ,,
वैरी मनुआ अब तो मानजा, कुछ प्रतीत प्रीत घट मेला ।
सीधे सच्चे मारग में आ, राधास्वामी राधास्वामी टेर ।। ,,

[१२५]

मन मूरख क्यों तू सोच करे ।।टेक।।

शून्य देस से सब कुछ प्रगटा, शून्य लौट कर जाई ।
माया का प्रपंच है ऐसा, देखत थिर न रहाई ।। मन०
आये हैं सो जायेंगे एक दिन, जाना निससन्देह ।
दो दिन की लीला है जग की, अन्त में सब कुछ खेह ।। ,,
बीज से वृत्त वृत्त से डाली, फूल पात सब आये ।
उलट पलट कर बीज बने सोई, भरमे भरम रहाये ।। ,,
अणु परमाणु सिमिट सिमिट कर, बड़े रूप को धारा ।
काल की चक्की पिसते पिस कर, सब वही अनु विस्तारा ।। ,,

राधास्वामी की संगत कर, तज आपा मद माना ।
मानुष जनम का सार प्राप्त कर, पाकर सतगुरु ज्ञाना ॥ मन०

[१२६]

मनुआ चित से कर सतसंग ॥ टेक ॥
चंचलता तज होजा निश्चल, छोड़ दे चित की पुरानी हलचल ।
क्यों फँसता है माया के दलदल, धार गुरु का रंग ॥ मनुआ०
सुमिरन नाम का सांससाँस हो, ध्यान में गुरु की मूरति पास हो ।
भजन में आनन्द हर्ष हुलास हो, ऐसा सीख ले ढँग ॥ मनुआ०
सहस कमल तज त्रिकुटी आजा, सुन्न में सहज समाध रचाजा ।
तीन सुन्न के आगे आजा, सुन सतगुरु प्रसंग ॥ मनुआ०
राधास्वामी दया से काज बनाले, क्यों पड़ता है काल के पाले ।
दया गुरु की दया सदा ले, पीले प्रेम की भंग ॥ मनुआ०

(१२७)

प्रेमिन चल सतगुरु दरबार ॥ टेक ॥
जग में कलह कलेश महाना, दुखिया सब संसार ।
सत संगत के बचन प्रेम के, हृदय सदा विचार ॥ प्रेमिन०
कथनी तज करनी चित देना, रहनी का व्यौहार ।
सुमिरन भजन ध्यान की किरिया, करले अपना सुधार ॥ ,,
नर जीवन निष्फल नहीं जावे, टेक इष्ट की धार ।
राधास्वामी तेरे सहाई, करेंगे भव से पार ॥ ,,

(१२८)

ज्ञानी समझ बूझ कथ ज्ञान ॥ टेक ॥
ब्रह्म बना तो क्या हुआ, ब्रह्म न जाना जान ।
बिन जाने क्या लाभ है, ज्ञान से हो पहचान ॥ ज्ञानी०
ब्रह्माकार जो वृत्ति नहीं, ज्ञान से होगी हान ।
जीव ब्रह्म को ले परख, अपने निज आत्मा न ॥ ,,

अपनी आंखों देख सब, कही सुनी मत मान।
कही सुनी जुग जुग चले, आवागवन बंधान ॥ ज्ञानी०
गुरु सतसंग में जाय कर, वचनामृत का पान।
पानी पीछे तू पिये, पहले उसको छान ॥ ,,
कथनी तज करनी सहित, करनी सबको जान।
राधास्वामी की दया, गुरु मत है परमान ॥ ,,

(१२६)

चंचल मन तत्व को समझ गया ॥टेक॥
काम क्रोध मद लोभ के बस हो, आप ही बना दुखारी।
पांचों के जब संग को त्यागा, तब वह बना सुखारी ॥ चंचल
दुर्मति दुचिता दुविधा तज दे, दुख कलेश की खानी।
आपही आप हटे जब यह सब, भया गुरु अभिमानी ॥ ,,
द्वेष दृष्टि और डाह ईर्षा, नित उसको भरमाते।
जब गुरु चरनन बासा पाया, अब कोई निकट न आते ॥ ,,
पहले जब था काग दशा में, हिंसक जीवन घाती।
हंस भया मोती चुन खाता, लहे आनन्द दिन राती ॥ ,,
हठ को त्याग हठधरमी त्यागी, पक्षपात को त्यागा।
सबको आप में आपको सब में, निरख के भया सुभागा ॥ ,,
बन्धन काटे काल माया के, कटी कर्म की फांसी।
जीवन मुक्त दशा में बरते, भजे गुरु अविनासी ॥ ,,
राधास्वामी की संगत पाई, संगत का फल पाया।
कमल नीर की रहनी सोहे, मन विचार हरषाया ॥

(१३०)

कर तू मोर न तोर मनुआ ॥ टेक ॥
मोर तोर है रसरी भारी, उससे बँधे सकल संसारी।
कोई विकारी कोई व्यभिचारी, कोई भक्ति के चूर ॥ मनुआ०

मोर तोर में करता धरता, अहंकार का रूप सो भरता।
त्रिविधि ताप में निसदिन जरता, दुख का ओर न छोर ॥ मनुआ०
मोर तोर तृष्णा की खानी, दुख कलेश आपति की निशानी।
यही है चार योनि की खानी, व्यापा काल घन घोर ॥ ,,
मोर तोर क्यों करे अभागी, क्या तू गहेगा किसको त्यागी।
हो गुरु चरन प्रेम अनुरागी, गुरु हैं बंदी छोर ॥ ,,
मोर तोर में माया व्यापी, यह माया दुखदा संतापी।
इससे उपजे आपा तापी, जा राधास्वामी की ओर ॥ ,,

(१३१)

बना रे अभिमानी मन अज्ञानी ॥ टेक ॥

जड़ शरीर से बांधा नाता, काम क्रोध संग फिरे मदमाता।
भव दुख से कभी चैन न पाता, भोगे नरक निदानी ॥ बना०
बिन कारन नित भरमत डोले, अनुचित बैना मुख से बोले।
धरन अकास की नाड़ी टटोले, भटक भटक भटकानी ॥ ,,
लोक लाज व्यौहार में लम्पट, सदा मचावे मिथ्या खटपट।
कभी करे अटपट कभी करे सटपट, सहे द्वन्द की गलानी ॥ ,,
चंचल मूढ़ निपट अविवेकी, नाशवान तन का बना टेकी।
बदी गहे धारे नहीं नेकी, भूला मन कर्म बानी ॥ ,,
राधास्वामी बनो सहाई, अब तो यह मन बड़ा दुखदाई।
दया करो लो चरन लगाई, नाम दान दो दानी ॥ ,,

(१३२)

कहा नहीं माने मन अज्ञानी ॥ टेक ॥

जग के मरुथल भूमि में आया, मृगतृष्णा की चाह उठाया।
प्यास न बुझी नीर नहीं पाया, भटक भटक भटकानी ॥ कहा०
भूल भरम लग सत को त्यागा, असत वस्तु के पीछे लागा।
मोर तोर कर मरा अभागा, सार असार न जानी ॥ ,,

माया छाया एक समाना, कहने को केवल नाम निशाना।
मिथ्या उनका करे अभिमाना, भ्रान्ती के फंद फँसानी ॥ कहा०
हृदय छाज में धूल भराई, फटक पिछोड़े उड़ा उड़ जाई ॥
हाथ न उसके कुछ भी आई, मिथ्या करम कराई ॥ ,,
आँख न खोले बन रहा अन्धा, पड़ा जगत के गोरख धन्धा।
चौरासी का गले में फन्दा, योनि योनि भरमानी ॥ ,,
विषय भोग में आयु खोई, संगी साथी हुआ न कोई।
मरा जनम को अन्त में रोई, चेत न अब भी आनी ॥ ,,
राधास्वामी दीनबन्धु प्रतिपाला, तुम दयाल तुम सहज कृपाला।
इस मन की अब करो संभाला, मेरा कहन न मानी ॥ ,,

(१३३)

काशी तीन लोक से न्यारी ॥ टेक ॥

काया नर शरीर है काशी, उत्तम मंगल कारी।
रज सत तम त्रयगुन त्रिपुर, मन जो बने त्रिपुरारी ॥ काशी०
पारवती परवत सम विरती, नन्दी आनन्द भारी।
निर्मल गंग भक्ति की धारा, जाने कोई अधिकारी ॥ ,,
गुरु पद रज की सहज बिभूती, ले तन सीस में धारी।
रोग सोग जग के सब नासें, कबहुँ न होवे दुखारी ॥ ,,
ओजस क्रान्ती ललाट की शोभा, चन्द्र समान उजारी।
मुन्ड माल की चित्त सुमरनी, सुमिरे नाम अपारी ॥ ,,
घट मन्दिर में ज्योत प्रकाशे, जगमग लिंगाकारी।
सुरत अर्घ बन पात्र में राखे, शब्द स्वरूप विचारी ॥ ,,
डमरू मधुर सुहाना बाजे, सोई अनहद झनकारी ॥
मुक्ति दायिनी काशी नगरी, राधास्वामी की बलिहारी ॥ ,,

—:o:—

(१३४)

माया मेरे मन में समाई ॥ टेक ॥

नहीं जानूँ तेरा रूप है कैसा, कहाँ से तू चल आई ।
क्यों आई किसने तुझे भेजा, क्यों मुझे जाल फँसाई ॥ माया०
माया है छल बल चतुराई, माया मान बड़ाई ।
जीव जन्तु सब बस में कीन्हे, मारे मुनि समुदाई ॥ ,,
दुविधा दुर्मति द्वन्द पसारा, माया है दुचिताई ।
अपनी बुधि अनुसार बखानूँ, सांचा भेद न पाई ॥ ,,
भागूँ तो पाछे लगी डोले, सन्मुख आँख दिखाई ।
भय दिखलावे भर्म भुलावे, आस भरोस दिलाई ॥ ,,
माया पर मेरा दाव चले नहीं, कोटिन करूँ उपाई ।
हार हार गुरु चरन पड़ा तब, मिली राधास्वामी शरनाई ॥ ,,

(१३५)

साधु अद्भुत लीला देखी ॥ टेक ॥

बंझा ने एक बालक जाया, गधे की सींग बजाई ।
जिस जिसने सुनी सींग की धुन को,सुधबुध तन की गँवाई॥ साधु०
चिउँटी उड़ असमान को धाई, गगन की तोल तुलाई ।
पंख नहीं बिन पंख उड़ाई, कैसे कोई पतियाई ॥ ,,
औंधा कुवाँ गगन थल पानी, पनिहारी उड़ धावे ।
बिना जीभ मुख कंठ के नारी, राग सुहाना गावे ॥ ,,
ऋतु बसन्त चहुँ ओर में फूली, फूल अकास में फूले ।
बिना खम्ब के गड़ा हिंडोला, चांद सूरज दोऊ भूले ॥ ,,
बिन जल बरसत मेघ अखंडा, नहीं मीठा नहीं खारी ।
बिना नैन के मोती पोहे, अन्धी आंख की नारी ॥ ,,
पिंगला बन और परबत लांघे, चढ़ा सुमेरु कैलासा ।
गूँगा मधुरी बात सुनावे, उपजे हर्ष हुलासा ॥ ,,

यह लीला आंखों से देखी, कैसे बरन सुनाऊँ ।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, देखी काह दिखाऊँ ॥ साधु०

(१३६)

नटनी नाचे नाच अपार ॥टेक॥

नगर में नाचे बन में नाचे, नाचे खोह पहार ।
भीतर बाहर नाच रचा है, नाच का वार न पार ॥ नटनी०
तीरथ नाचे पत्थर पानी, बरत नाच फलहार ।
धर्म में नाचे पच्छपात बन, ज्ञान में तर्क बिचार ॥ ,,
भुजा छाप गले तुलसी की माला, तिलक ललाट मँझार ।
संयम में पखंड आचारा, परमारथ हंकार ॥ ,,
नट भया गुप्त प्रगट जग नटनी, व्याप रही संसार ।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, माया का भेद अपार ॥ नटनी

[१३७]

तारा तारा तरा और तारा ॥टेक॥

आप तरा औरों को तारा, तारा कुल परिवारा ।
भव के दुख सागर से लाया, जनम की नौका किनारा ॥ ,,
आलस तज निद्रा को त्यागा, छोड़ा भर्म अहंकारा ।
खींच लगाया तट पर सहज ही, नाव जो थी मँझधारा ॥ ,,
प्रेम प्रतीत प्रीति घट छाई, पहुँची गुरु दरबारा ।
राधास्वामी गुरु ने अङ्ग लगाया, बख्शा अपना सहारा ॥ ,,

[१३८]

चित ने चित्र विचित्र बनाया ॥टेक॥

आंख कान मुख बन्द लगाया, विरती धार उलटाई ।
सहसकमलदल चढ़ त्रिकुटी गढ़, गुरु का चित्र खिचाई । चितने
चित्र देख कर सूरत मोही, मुख नहीं आवे बानी ।
ओम ओम कह भाव बताया, अन्त में हुआ निरबानी ॥ ,,

परिचय मिला हर्ष घट आया, सोया अनुभव जागा ।
गुरु मूरत का दर्शन पाकर, बढ़ा प्रेम अनुरागा ॥ ,,
बाहर गुरु भीतर मेरे गुरु हैं, भिन्न रूप यह कैसा ।
बाहर तो अस्थूल प्रकाशा, अन्तर सूक्षम जैसा ॥ ,,
बाहर दरस परस से श्रद्धा, अन्तर आवे प्रानी ।
तब देखे घट चित्र गुरु का, राधास्वामी की सहदानी ॥ ,,

(१३९)

आये गुरु शरनागत आये ॥टेक॥

यह संसार मोह भंडारा, मोह मया की खानी ।
जीव जन्तु की कौन चलावे, मोहे ज्ञानी ध्यानी ॥ आये०
यह संसार आग की भट्ठी, जर भुन मर मिटे सारे ।
काम क्रोध मद लोभ ईर्षा, भड़क रहे अंगारे ॥ ,,
यह संसार है दुख का सागर, डूब मरे सुर देवा ।
जिसको देखा दुख का मारा, दुख का मिला न भेवा ॥ ,,
यह संसार है अगमा पाई, बादर की परछाँई ।
छिन पल का नहीं ठौर ठिकाना, रेत की भीत बनाई ॥ ,,
यह संसार भरम विस्तारा, देख चित्त घबराया ।
राधास्वामी दीनबन्धु लख पाये, गही चरन की छाया ॥ ,,

(१४०)

सजनी मन चिन्ता नहीं लाना ॥टेक॥

तेरे घट में तेरा प्रीतम, उसका ध्यान लगाना ।
दुविधा दुर्मति तज दुचिताई, अन्तर दर्शन पाना ॥ सजनी०
आस भरोस रहे गुरु चरनन, चंचल चित्त दबाना ।
तिल को उलट दृष्टि घट खोलो, रूप निरख हरखाना ॥ ,,
सुमिर सुमिर नित नाम सुरत से, नाम न कभी भुलाना ।
नाम से काज बनेगा पूरा, नाम भक्ति धन कमाना ॥ ,,

नाम है योग युक्ति जप क्रिया, नाम प्रीत सत ज्ञाना ।
एक नाम है सब की कुंजी, नाम में नहिं अलसाना ॥ सजनी
नाम है सुमिरन नाम भजन है, नाम में गुरु का ध्याना ।
राधास्वामी नाम जो सुमिरे प्रानी, नसे भर्म अज्ञाना ॥ सजनी०

(१४१)

साधु जहाँ चाहे सम धार ॥टेक॥

सिर तूँबा और तन है दंडी, नस नाड़ी सब तार ।
सांच कहूं तो कोई न माने, तेरी देह सितार ॥ साधु०
हृदय सोलह चक्र हैं अन्तर, मेरु दंड बिस्तार ।
भाव की हाथ में पहन मुन्दरी, छेड़ प्रेम गत सार ॥ ,,
सात तत्व के साथ ही स्वर हैं, परदों के आधार ।
मुदरी पहन उन्हें जो छेड़े, सहज में बजे सितार ॥ ,,
सूर सोम मंगल बृहस्पति, बुद्ध शुक्र शनिवार ।
सात ग्रह सुर अन्तर सब रहते, पिंडी जीव अधार ॥ ,,
कर सतसंग भक्ति ज्ञान से, शब्द योग चित धार ।
सम को साध शब्द मारग चल, राधास्वामी की बलिहार ॥ साधू०

(१४२)

मन की मेरे बलिहारी ॥टेक॥

पहले मन में काम क्रोध थे, लोभ मोह हंकारा ।
दया क्षमा करुना चित भाई, मन भया सुख भंडारा ॥ मनकी०
स्वारथ बस हो पाप कमाना, जग माया में फँसता ।
परमारथ की चाह धर आई, उपकारी बन हँसता ॥
विषय भोग में लम्पट रहता, वृथा समय गँवाता ।
भक्ति भाव की उसे जो सूझी, गुरु प्रेम रस माता ॥ ,,
पक्षपात बस हिंसा करता, सब का हृदय दुखाता ।
अब नहीं हटधरमी मेरा मनुआ, मीठे बचन सुनाता ॥ मनकी०

जब से संगत गुरु की पाई, सुखी भया मन मेरा।
बन्धन काट मुक्ति पद लागा, राधास्वामी का चेरा ॥ मन की०

(१४३)

साधु समझ करो कुछ करनी ॥ टेक ॥

नहाया धोया टीका लगाया, घंटा शंख बजाया।
आरत साजी मन्दिर जाकर, क्या इससे फल पाया ॥ साधु०
आसन मारा धूनी रमाई, कफनी पहन के डोले।
मांगी भीख मिला क्या तुमको, भाई तुम तो भूले ॥ ,,
गले में माला डाल के आये, भेस भयानक भाई।
शान्ति चैन की गम नहीं पाई, भूल में उमर बिताई ॥ ,,
अंग भभूत कमर मृगछाला, जटाजूट सिर बांधे।
क्या समझा क्या हाथ लगा है, काल बोझ धरा कांधे ॥ ,,
कर सतसंग सार कुछ बूझो, सार में साँची भलाई।
राधास्वामी दया करेंगे, लो उनकी शरनाई ॥ ,,

(१४४)

बहना खोल के देखो नैना ॥ टेक ॥

धन सम्पति और हाट हवेली, इनमें कहां सुख चैना।
काल जो आया सबही छूटे, दिन अब होगया रैना ॥ बहना०
सपने का है खेल तमाशा, देता काल है सैना।
सैन बैन कोई बूझे नांहीं, कहूं खोल क्या बैना ॥ ,,
सखी सहेली का संग बिछड़ा, जो थी अब वह है ना।
कोई रहा ना नाम लेन को, तोता तोती मैना ॥ ,,
मैं मैं तू तू में उमर बिताई, आगे तू तू मैं ना।
पच्छी पखेरू लग नहीं बचते, काल उखाड़े डयना ॥ ,,
भज गुरु नाम भजन के अवसर, भजन भाव में भय ना।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, जग है काल चबैना ॥ ,,

(१४५)

मिथ्या यह संसार सुरत प्यारी ॥ टेक ॥

स्वारथ के सब संगी साथी, कुल जाती परिवार।
अन्त समय कोई काम न आवे, मन में सोच बिचार ॥ सुरत०
यह संसार स्वप्नवत लीला, अल्प काल व्यौहार।
अन्तकाल काल जब पहुंचा, फिर सब असत असार ॥ ,,
यह संसार है सचमुच प्रानी, बालू की दीवार।
रुचि रुचि लाख बनावे कोई, बिनसत लगे न बार ॥ ,,
यह संसार बादर की छाईं, देख ले दृष्टि पसार।
छिन में है छिन में नहीं है, जनम जुआ मत हार ॥ ,,
यह संसार पूँछ कुत्ते की, परख ले नैन उघार।
सीधी कोई चाहे करे कितनी, टेढ़ी रहे हर बार ॥ ,,
यह संसार मरुथल भूमी, मृग तृष्णा जल धार।
जल नहीं मिले प्यास नहीं जावे, डूबे दौड़ गँवार ॥ ,,
यह सँसार धोके की टट्टी, इन्द्रजाल परचार।
बाजीगर ने थाट समेटा, सब झूटा व्यौहार ॥ ,,
समझ बूझ कुछ करले कमाई, जा गुरु के दरबार।
सतसंगत में काम बना ले, राधास्वामी कहें पुकार ॥ ,,

(१४६)

सतगुरु ने भेद बताया, घर अघर मर्म जतलाया ॥टेक॥

घर बन परबत एक दिखाना, भेद अभेद का रूप लखाना।
सतपद धुरपद मिला निशाना, सम प्रकाश और छाया ॥सतगुरु
जो जो कथूँ वही निज ज्ञाना, जो जो करूँ सो सत्य प्रमाना।
मिल गया जीते जी निरवाना, व्यापे ब्रह्म न माया ॥ ,,
जाग्रत स्वप्न एक कर देखा, सुषुप्ति तुर्या किया परेखा।
तुर्यातीत को गहा विशेषा, जो खोया था पाया ॥ ,,

काम क्रोध मद लोभ न व्यापे, मिट गया अहंकार मद आप।
अब न सतावे जग त्रय ताप, भव भर्म सकल नसाया ।।सतगुरु
सहज अवस्था सहज सुबानी, सहज कर्म सो सहज सुहानी।
मिल गये राधास्वामी अगम ठिकानी, सहज दृष्टि दरसाया ।। ,,

(१४७)

यह जग नाटकशाला साधु, यह जग नाटकशाला ।।टेक।।
राजा रंक फकीर औलिया, दृश्य विचित्र विशाला।
कोई ओढ़े शाल दुशाला, कोई सिर कम्बल काला ।। साधु०
सुरत ने अद्भुत भेष बनाये, नाचे नाच रसाला।
गावें भाव दिखावें छिन छिन, खेलें खेल रसाला ।। ,,
ब्रह्मा वेद से रचा जगत को, विष्णु गदा ले पाला।
शिव संहार का साज सजावे, साथ भूत बैताला ।। ,,
नाचे कमला दुर्गा सारद, काली छबि बिकराला।
सावित्री का राग गायत्री, सैन बैन का जाला ।। ,,
शंखनाद की धूम मची है, डमरू शोर कराला।
रारंग सारंग बजी सरंगी, बीन सितार सुहाला ।। ,,
श्रुति धुन है उद्गीत है बानी, ओम ओम का ताला।
श्रोतागन सब सुनने आये, मन में भये बिहाला ।। ,,
साधु दृष्टि साची रूप है, सुख दुख मन से टाला।
जिसने अपना रूप बिसारा, उर उपजा दुख साला ।। ,,
साची देखे विमल तमासा, चित रहे सुखी सुखाला।
भूल भर्म में जो कोई आया, सहे कर्म का भाला ।। ,,
रैन सपना है जग की लीला, सपना धन और माला।
आंख खुली तब कुछ नहीं दरसा, गुप्त जो देखा भाला ।। ,,
राधास्वामी संत रूप धर आये, दीनबन्धु सुदयाला।
प्रेम पियाला हमें पिलाया, सहज किया मतवाला ।। ,,

[१४८]

जिन ढूँढा तिन पाया साधु, नाम रतन धन खानी ॥टेक॥
मन परवत में खान खुली है, सतगुरु की सहदानी।
ले कुदाली कर भक्ति प्रेम की, खोदे, कोई नर ज्ञानी ॥ साधु०
मन कों खोद रतन धन पावे, नाम रतन सुखदानी।
दुख दरिद्र फिर निकट न आवे, मन रहे बहु हरषानी ॥ ,,
चल सतसंग भेद ले गुरु से, छोड़ कुसंगत प्रानी।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, मैं तो हुआ विज्ञानी ॥ ,,

(१४९)

सुहागिन चेत के चल, पिया प्रेम नगर की राह ॥टेक॥
नैहर देश बिराना सजनी, कर प्रीतम की चाह।
त्याग मोह आलस छल निद्रा, मैं समझाऊँ काह ॥ सुहागिन
जग पितु मात शोक उपजावें, राह से हो न कुराह।
सत की चूनर पहर भाव से, बिछुवे हिये की दाह ॥ ,,
शील सेंदूर से मांग भरा ले, अपना भाग सराह।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, गुरु के हाथ पनाह ॥ ,,

(१५०)

भक्ति महा सुखदाई साधु, भक्ति महा सुखदाई ॥टेक॥
प्रेम भाव जब चित में उपजा, चित चरनन लव लाई।
लगी समाधि अखंड अपारा, सो टूटे बरियाई ॥ साधु०
कहां का ज्ञान कहां का जप तन, कैसी बुद्धि चतुराई।
जब मन भक्ति भाव रस पाया, भव दुख सहज नसाई ॥ ,,
एक आस विश्वास गुरु का, एक अटल शरनाई।
दुविधा मिटी गई सब चिन्ता, छाई बेपरवाई ॥ ,,
जीवन मुक्त दशा नित बरते, सहज भक्त समुदाई।
कमल नीर सम रहनी सहनी, माया काल लजाई ॥ ,,

राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, भक्ति अटल बर पाई।
अब नहीं खटका मोह जाल का, गुरु ने लिया छुड़ाई ॥ साधू०

(१५१)

मेरे प्यारे रंगीले सतगुरु, दो नामदान का दान ॥टेक॥
दर पर खड़ा भिखारी तुम्हरे, मांगे भीख निदाना।
धन सम्पत की चाह न मन में, तुम्हरा रहे दिवाना ॥ मेरे०
भक्ति भाव नहीं ज्ञान दाव नहीं, नहीं मैं चतुर सियाना।
तुम्हरी शरन में निशदिन रहकर, रहूं अनाम अमाना ॥ ,,
बांधूँ दाम न गांठी अपने, कल की सोच न धारूँ।
तन मन प्रान बुद्धि और युक्ति, चरन कमल पर वारूँ ॥ ,,
काल कर्म ने बहुत सताया, माया जाल बँधाना।
मेरा पाप एक है प्यारे, तुम से बहक भुलाना ॥ ,,
तुम तो आये नर देही में, मुझको आप चितावन।
राधास्वामी मेहर दया भई, मिट गये सकल गुनावन ॥ ,,

(१५२)

फकीरा सोच समझ पग धार ॥टेक॥
बिन समझे कोई सार न पावे, भटके बारम्बार।
संशय दुविधा और चतुराई, यह अज्ञान विकार ॥ ,,
कोई नर पशु है कोई त्रिया पशु, गुरु पशु कोई गँवार।
वेद पशु हैं सब संसारा, बिना विवेक विचार ॥ ,,
माया पशु माया का बन्धुआ, मुक्ति पशु स्वीकार।
भक्ति पशु बन्धन नहीं काटे, बूड़ा काली धार ॥ ,,
ज्ञान पशु की क्या करूँ निंदा, वह ग्रन्थन के लार।
जड़ चेतन की गांठ न खोले, उरझ उरझ रहा हार ॥ ,,
योग पशु बंधे योग की रसरी, बैठे आसन मार।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, सेवक हुआ भव पार ॥ ,,

[१५३]

उलटा मारग सन्तमता है, समझे कोई सुजाना हो ॥टेक॥
उलटा नाम जपे अन्तर में, उलटी चाल चलाना हो ।
यह उलटा मत तब कोई जाने, जब गुरु मिले सियाना हो ॥ उलटा०
घट में सुमिरन भजन ध्यान हो, घट में भक्ति विधाना हो ।
गुरु की दया साध की संगत, पावे राह रुकाना हो ॥ ,,
पृथ्वी मंडल का संग त्यागे, उलट चले असमाना हो ।
सुरत शब्द की करे कमाई, तब प्रगटे यह ज्ञाना हो ॥ ,,
साधन सुगम सहज है रीती, कठिन पन्थ नहीं जाना हो ।
बाहर के पट जब कोई देवे, अन्तर घट दरसाना हो ॥ ,,
घट में सूर चन्द्र और तारे, जगमग ज्योत जगाना हो ।
गंग जमन और सरस्वती घट में, घट ही कर अस्नाना हो ॥ ,,
सहसकमलदल लीला परखो, त्रिकुटी ओम निशाना हो ।
सुन्न सरोवर आसन मारो, सहज समाध रचाना हो ॥ ,,
भँवर गुफा चढ़ बजे बांसुरी, माया काल दिखाना हो ।
सतपद सत धुन बीन सुहावन, अनहद राग सुनाना हो ॥ ,,
बिन बादल जहां पानी बरसे, बिन सुर शब्द महाना हो ।
बिना नैन के सबको दरसे, बिन पग पन्थ में आना हो ॥ ,,
रूप रंग रेखा से न्यारा, अलख अगम से न्यारा हो ।
राधास्वामी धाम मिले जब, सोई पद निरबाना हो ॥ ,,

[१५४]

बसे मेरे घट में गुरु पूरे ॥ टेक ॥
जगमग ज्योति जरे दिन राती, देख देख मन में हरषाती ।
चित्त चरन में जोड़ लगाती, मस्तक धारा पद धूरे ॥ बसे०
काम क्रोध मद लोभ निकारा, तृष्णा आसा सकल विकारा ।
इन सब से अब मिला छुटकारा, जर मर बैरी होगये चूरे ॥ ,,
राग सुहाना कान में आया, सुन सुन मेरा जिया ललचाया ।

नहीं अब त्यागूँ चरन की छाया, गाजे घट में अनहद तूरे ।। बसे०
गुरु मेरे सब विधि हैं हितकारी, गुरु पर जान प्रान सब वारी ।
राधास्वामी चरन शरन हितकारी, कायर को गुरु कर लिया सूरे ।।

(१५५)

करो कोई संगत गुरु की आगे ।। टेक ।।

द्वैत में भूले नर अभिमानी, और अद्वैत में ज्ञानी ध्यानी ।
द्वैत अद्वैत का झगड़ा ठानी, यह रहे भव फंद फँसाये ।। कोई०
सगुन अगुन दोनों मन का खेल, मुक्ति बंध है मेल अमेल ।
अन्धा अन्धे को रहा ठेल, आप गिरे औरों को गिराये ।। ,,
जोग जुगत की करे कमाई, शक्ति सिद्धि में माया आई ।
मंत्र से लिया सहज भरमाई, एक पुरुष बचने नहीं पाये ।। ,,
तीरथ गये तो पूजा पानी, मंदिर में पाखान बखानी ।
व्रत है अटसट कर्म कहानी, मानुष जनम को लिया नसाये ।। ,,
सन्त आयकर जीव चितावें, छूटन की विधि युक्ति बतावें ।
सतसंग में सबको अपनावें, धन धन जो राधास्वामी गुन गाये ।। ,,

[१५६]

साधु अचरज अकथ कहानी ।।टेक।।

रूप न रंग न रेखा वाके, निराकार निरबानी ।
कोई कहे तो कहे किस मुख से, नहीं वहां मन बानी ।। साधु०
पार अपार वार नहीं वाका, अपरम्पार निशानी ।
बिन पग चले बिना अंग डोले, बिन जिभ्या मृदुबानी ।। ,,
भेद अभेद नहीं वहाँ कुछ भी, कैसे कोई पहचानी ।
हम तो सार शब्द लख पाया, सतगुरु की सहदानी ।। ,,
नहीं आवे नहीं जावे कहीं वह, निश्चल अमन अमानी ।
जड़ चेतन विवेक कहो कैसा, केहि विधि तेहि अलगानी ।। ,,
वह अनाम वह अगति अमाया, माया नाम रहानी ।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, जागे गुरुमुख ज्ञानी ।। ,,

[१५७]

देखा देखा देखा, अगम अगोचर रूप गुरू का
गुरु की दया से देखा ॥ टेक ॥

नहीं अनेक और एक नहीं है, नहीं वह ज्ञान विवेक नहीं है।
पक्ष नहीं और टेक नहीं है, सबका होगया लेखा ॥देखा०
सत्त असत्त से न्यारा पाया, ज्ञान ध्यान से रहा अलगाया।
वह अकाम वह अगम अमाया, अद्भुत रूप परेखा ॥ ,,
नहीं वह ज्ञान विषय तुर्यातित, नहीं वह गत और नहीं वह अवगत।
भूल भरम में पड़े जग के मत, भूले ज्ञानी भेषा ॥ ,,
नहीं सुख रूप न होत दुखारी, नहीं अनहित और नहीं हितकारी।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, अगम अगाध अलेखा ॥ देखा०

(१५८)

साधो समझ परी गुरु बानी ॥टेक॥

सतगुरु दया साध की संगत, लख लिया ज्योत निशानी।
ज्योत अज्योत दोऊ तज डारा, पाया पद निरबानी ॥ साधो०
जब लग गुरु से नाता नाहीं, रहा मूढ़ अज्ञानी ।
सिर पर हाथ गुरु ने फेरा, चरनन चित्त बसानी ॥ ,,
तीरथ बरत नियम आचारा, डारत भव की खानी।
रूप अनूप हिये जब दरसा, जान भये अनजानी ॥ ,,
बचन सुनाया प्रेम बढ़ाया, सैन बैन से जानी ।
मैं तो गुरु का सेवक साँचा, रहूं चरन लिपटानी ॥ ,,
गुरु का सब विधि आज्ञाकारी, नहीं भावे सुत धन बित नारी।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, काल करे नहीं हानी ॥ ,,

(१५६)

साधू चाल सन्त की न्यारी ॥ टेक ॥

जो कोई आवे प्रेम भाव से, ताको अंग लगावें ।
अधिकारी को तत्व बतावें, मूल ज्ञान समझावें ॥ साधो०

जामें प्रेम प्रीत नहीं देखें. ताका चित न दुखावें।
दया रूप धारा संतने, बिगड़ी बात बनावें ॥ ,,
निंदा अस्तुति की नहीं चिन्ता, जीव उद्धार करावें।
प्रेमजन को अंग लगावें, सत्त रूप दिखलावें ॥ ,,
करुना सागर सब गुन आगर, शब्द जहाज लगावें।
खेवटिया होय तारें सबको, भव के पार करावें ॥ ,,
मिले असाधु मौन बन जावें, साध को बचन सुनावें।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, शब्द सुनाये चितावें ॥ साधो०

[१६०]

साधु जीवन ही मर रहना ॥टेक॥

सुरत शब्द का साधन करना, दुख सुख सिर पर सहना।
करते करम अकर्मक होना, नहीं कुछ सुनना कहना ॥ साधु०
जल में कमल मुर्गाबी रहते, जल को अंग न गहना।
यह गति तो गुरु मुख कोई पावे, तीन ताप नहीं दहना ॥ ,,
सुखमन के मध्य तिल का मारग, जाओ न बायें दहना।
मध्य सुरत चले गुरु की दाया, प्रेम भक्ति धन लहना ॥ ,,
काम क्रोध अहंकार त्याग कर, गुरु मिल जग से निभना।
चेत चेत कर अन्दर धँसना, भव के धार न बहना ॥ ,,
नहीं वह ज्ञान न तुर्यातित है, इनको नहीं कोई चहना।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, प्रेम वस्त्र अब पहना ॥ साधू०

[१६१]

मैं पाया पाया पाया, गुरु नाम अमीरस पाया ॥टेक॥

जब से कृपा भई सतगुरु की, छटे काल कर्म माया।
चिन्ता डायन अब न सतावे, निस दिन रहुँ हर्षाया ॥ मैं पाया०
वाचक ज्ञान में ज्ञानी भूले, योगी योग भरमाया ।
मैं तो गुरु का सेवक पूरा, रहूं चरन की छाया ॥ ,,

तीरथ बरत नेम नहीं धारूँ, सोधूं न तन और काया।
प्रेम भाव की ताड़ी लागी, सहजे मन ठहराया ॥ मैं पाया
जानेंगे कोई साध विवेकी, जिन पर गुरु की दाया।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, सार का सार बताया ॥ ,,

(१६२)

घट का भेद नियारा साधु, घट का भेद नियारा ॥टेक॥
इस घट भीजर बिजली चमके, बरसे अखंडित धारा।
घट के भीतर सूरज चांद हैं, घट में लाखों तारा ॥ साधु०
घट में विष्णु करे जग पालन, घट में शम्भु सिधारा।
घट में ब्रह्मा वेद बखानें, घट में ज्ञान विचारा ॥ ,,
घट में हिरण्यगर्भ अव्याकृत, घट वैराट पसारा।
घट में तप जन महर लोक हैं, घट सबका भण्डारा ॥ ,,
घट के अन्दर उन्मनि लागी, घट भीतर संसारा।
घट उपजे और घट ही बिनसे, घट ही सार असारा ॥ ,,
घट का भेद समझ में आवे, जो गुरु देवे सहारा।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, गुरु छबि तन मन वारा ॥

(१३०)

नित जीवन की आसा साधु, नित जीवन की आसा ॥टेक॥
यह तो देह है अगमापाई, ज्यों जल बीच बतासा।
बालू भीत बनाई रचि पचि, दिन दस का है तमासा ॥ साधु०
तारा भी बिनसें चन्दा भी बिनसें, बिनसें धरन अकासा।
जल अग्नी की कौन चलावै, बिनसे ब्रह्म का सांसा ॥ ,,
लोक परलोक बिनस जांय पल में, बिनसे सूर प्रकाशा।
समझ देख तू मन में अपने, यहां काल का बासा ॥ ,,
आसा तृष्णा आय भुलाना, एक दिन होय उदासा।
धन दौलत से नेह लगा कर, सब गये अन्त निरासा ॥ ,,

जहाँ जहाँ दृष्टि जाय सब बिनसें, गले पड़ा यम का फाँसा।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, जियें सन्त के दासा ॥ साधु०

(१६४)

एक दिन जाना है जरूर ॥टेक॥

आय पड़े भव जाल फँसाने, घर से होगये दूर।
गति मति भूली सत पद खोया, जग के भये मजूर ॥ एक दिन०
काल करम ने बहु उरझाया, काटे फन्द कोई सूर।
मिटे अविद्या का अँधियारा, यमके घट सत नूर ॥ ,,
ठेस लगी जब मन दरपन में, होगया चकनाचूर।
रूप अनूप लखे कोई कैसे, अन्धकार भरपूर ॥ ,,
व्याकुल हिया जिया रहा निरंतर, प्रगटे पुरुष हजूर।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, दी चरनन की धूर ॥

(१६५)

संगत की बलिहारी साधु, संगत की बलिहारी ॥टेक॥

पारस के लोहा जब संग भया, होगया कुन्दन रूप।
राजा के सँग मिला दरिद्री, सब कोई समझे भूप ॥ साधु०
साध संग से सब ही तरगये, कुटिल कुभाव कुचाल।
मन वच कर्म साध गति पाई, होगये सहज निहाल ॥ ,,
आग की संगत पड़कर जल गये, कूड़ा करकट घास।
खाद बने क्यारी में आये, निकसा बास सुबास ॥ ,,
नद नाले का जल अति घृणित, गंगा आन मिलाया।
गंगा मिल गंगा भया सारा, नाम गंगोदक पाया ॥ ,,
काठ की नाव बनी अति हलकी, लादे पाथर लोहा।
ताके संग तरे किस विधि सब, देख मेरा मन मोहा ॥ ,,
चंदन के ढिंग रहत सदाही, नीम बबूल पलासा।
सहज ही रूप आपना त्यागा, आवे चन्दन बासा ॥ ,,

माया मोह में रहत फँसाना, मन मूरख अज्ञाना।
राधास्वामी चरन शरन जब धाया, होगया चतुर सुजाना। साधू०

(१६६)

साधु सुरति का खेल है न्यारा ॥टेक॥

जब लग सुरत की लगन लगी है, तब लग सुख की आसा।
सुरत हटी लब किस विधि लागे, मन अब भया उदासा ॥ साधु०
धन सम्पत जब चित्त बसे तब, सुख आनन्द बिलसाने।
अब तो सुरत की दृष्टि फेरी, वह दुख रूप दिखाने ॥ ,,
पुत्र कलत्तर से लौ लाये, भरम में रहे फँसाने।
अपना रूप समझ जब आया, सब से सुरत हटाने ॥ ,,
अपने बन्धन आय फँसे हम, ज्यों रेशम का कीड़ा।
सुरत का सार गुरु समझाया, मुक्ति उठाया बीड़ा ॥ ,,
सुरत की मुक्ति सुरत का बन्धन, सुरत का सकल पसारा।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, सुरत का देखा नजारा ॥ साधु०

(१६७)

पड़ा हिंडोला गगन में, झूले सब कोई आय ॥टेक॥

ब्रह्मा झूले रचना के, शिव झूले संहार।
विष्णु झूले पालन पोषण, शेष सीस के भार ॥ पड़ा०
तारा मंडल ऋषिगण झूले, झूले चांद और सूर।
देव दनुज की गति क्या बरनूँ, झूले छाया नूर ॥ ,,
एक दशा में कोई न देखा, क्या ज्ञानी अज्ञानी।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, गुरु कृपा से जानी ॥ पड़ा०

(१६८)

घट में करले कमाई साधू, घटमें करले कमाई ॥टेक॥

पहले तिल का परदा फाड़ो, घंटा शंख बजाई।
फिर त्रिकुटी में आन विराजो, धुन मृदंग लौ लाई ॥ साधु०

सुन्न मंडल में आसन मारो, किंगरी शब्द समाई।
भँवर गुफा में मुरली बजाओ, मन की दुविधा मिटाई॥ ,,
सत चढ़ अलख अगम पद निरखो, तब निज रूप दिखाई।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, आवागवन नसाई॥ साधु०

(१६९)

आया आया आया, मैं गुरु चरनन में आया॥टेक॥
तिल में धँसा विराट को देखा, रचना न्यारी न्यारी।
परगट विनसत छिन छिन पल पल, सो नहीं लागी प्यारी॥आया०
अव्याकृत त्रिकुटी में निरखा, रूप अनूप विचारी।
वह स्थूल यह सूक्ष्म दिखाना, धोका भरम है भारी॥ ,,
सुन्न महासुन्न हिरण्यगर्भ है, परखा नैन उघारी।
सोहै कारन ब्रह्म अवस्था, सब विधि परख निहारी॥ ,,
जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति ब्रह्म की, ब्रह्मा विष्णु त्रिपुरारी।
जैसा जीव ब्रह्म तस दरसा, मन बहु भया दुखारी॥ ,,
सोहंग पुरुष भँवर दरसाना, सत्ता की छायारी।
इसको छोड़ चली सुरत आगे, झिलमिलि ज्योत जगारी॥ ,,
सत पद अलख अगम की लीला, देख देख हर्षारी।
गुरु की दया से अमर पद पाया, राधास्वामी पर बलिहारी॥ ,,

(१७०)

दया मय अब तो कीजे दाया॥टेक॥
माया करम से जीव दुखारी, भव के फांस फँसाया।
छूटन की कोई राह न सूझे, भूल भरम भरमाया॥ दयामय०
अबल निबल में शक्ति कहां है, वह तो दीन दुखारी।
अपने बल तुम आन छुड़ाओ, जग जीवन हितकारी॥ ,,
त्राहि त्राहि कर चरन कमल में, होय अचेत प्रभु आयो।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, यम का फंद कटायो॥ दयामय

(१७१)

समझे नाहीं गँवारा, सुरत का भेद अपारा ॥टेक॥
सुख के कारन भूले भटके, भरमा बारम्बारा ।
कभी इन्द्री कभी मन बस होता, फिरता मारा मारा ॥ समझे०
पुत्र कलत्र और मान बड़ाई, यह सब जाल पसारा ।
इनमें सुख ढूँढे अज्ञानी, सुख इन सब से न्यारा ॥ ,,
नहीं नहीं यह करम धरम में, नहीं तत्व ज्ञान विचारा ।
यह तो भेद कोई गुरुमुख जाने, राधास्वामी चरन दुलारा ॥ ,,
तीरथ बरत नियम और संयम, बहु कीये चार अचारा ।
फेरा फेरी में जनम गँवाया, हाथ लगा नहीं सारा ॥ ,,
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, गुरु ने दिया इशारा ।
मिट गया द्वन्द अचल हुई काया, सतगुरु के उपकारा ॥ ,,

(१७२)

आया सतगुरु के दरबारा ॥टेक॥
मिट गई पीर पुरानी मन की, भव से मिला छुटकारा ॥टेक॥
पोथी पत्रा सेवा पूजा, सब ही भरम पसारा ।
जड़ चेतन की ग्रन्थी ग्रन्थ है, नैनो देख बिचारा ॥ आया०
भक्ति भाव की गम अब पाई, गुरु चरनन के सहारा ।
न्हाये धोये काम न निकसे, भूल रहा संसारा ॥ ,,
नौं को छोड़ चले घट अन्तर, नजर पड़ा दस द्वारा ।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, तन मन गुरु पर वारा ॥ ,,

(१७३)

मैं हूं दास तुम्हारा प्रभु जी, मैं हूं दास तुम्हारा ॥टेक॥
तुम मेरे स्वामी तुम मेरे दाता, तुम मेरे भरतारा ।
तुम से आस लगी है निस दिन, तुम्हरा मुझे सहारा ॥ प्रभुजी०
भव सागर अति गहर गम्भीरा, सूझे वार न पारा ।

दया करो करुना चित लाओ, नाव पड़ी मँझधारा ॥ ,,
मेरी ओर न देखो स्वामी, मैं हूं अधम अकारा।
पतित उधारन नाम तुम्हारो, मन में करो बिचारा ॥ ,,
काम क्रोध मद लोभ भुलाना, रोम रोम हंकारा।
पचलड़ सतलड़ अठलड़ रसरी, केहिविधि हो छुटकारा ॥ ,,
तुम देखत नित अवगुन करता, सुध बुध सकल बिसारा।
विनती कैसे करूँ दयामय, मन से अति ही हारा ॥ ,,
प्रेम प्रीति की रीति न जानी, चखा न अमृत सारा।
भक्ति भाव से परिचय नाहीं, काल कर्म ने मारा ॥ ,,
राधास्वामी दया के सागर, करुनामय करतारा।
त्राह त्राह चरन बलिहारी, आन करो निस्तारा ॥ प्रभुजी०

[१७४]

दया मय क्यों इतनी देर लगाई ॥टेक॥
मैं तो पतित निकारा, अङ्ग अङ्ग में जड़ताई।
अपनी जड़ता सोच समझ मन, ली चरनन शरनाई ॥दया०
भव सागर में नाव पड़ी है, नहीं कोई संग सहाई।
त्राह त्राह स्वामी नित्त पुकारूँ, दुख संकट कटजाई ॥ ,,
मेरी ओर न देखो कब ही, मुझ में कहाँ भलाई।
अपनी दया की ओर निहारो, तुम में दया अधिकाई ॥ ,,
नहीं पुरुषारथ नहीं बलमोरे, नहीं धन धाम बड़ाई।
दीन अधीन शरन में आया, चरनन चित्त बसाई ॥ ,,
देर भई बहु देर भई है, काल महा दुखदाई।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, लो भव भेद मिटाई ॥ ,,

———

(१७५)

मन भजरे साहेब करतार ।।टेक।।

उमर बिताई समय गँवाया, मिला न ठौर ठिकाना।
प्रेम भक्ति की रीति न जानी, जग धंदे भरमाया ।। मनरे०
दो दिन का रहना है प्रानी, दो दिन का ब्यौहार।
दो दिन का यह सकल पसारा, दो दिन कुल परिवार ।। ,,
जो आये हैं जायेंगे एक दिन, कैसा घर और डेरा।
मूरख सोच समझ मन अपने, चिड़िया रैन बसेरा ।। ,,
रात विषय में लम्पट रहता, दिन को खाना पीना।
ऐसे प्रानी पशु है जग में, धिक धिक उनका जीना ।। ,,
सतगुरु राधास्वामी पागे, सार भेद समझाया ।
अब नहीं पड़ूँ करम के धंदे, भक्ति स्वाद रस पाया ।। ,,

बिनती

(१७६ कुलसं० १०८१)

तेरी अस्तुति क्या करूँ देवा, मनबानी के पार है तू ।
परम तत्व आनन्द परम धन, परमारथ का सार है तू ।।
अगम अनाम अकाम अमाया, अन्तर बाहर व्यापा है ।
अकथ अथाह अरूप अगोचर, आप आपका आपा है ।।
अगुन सगुन अद्वैत द्वैत में, सब में सब से न्यारा है ।
सब में रमा निरंतर बासी, सब से अपरम्पारा है ।।
मंगलमय मंगल की खानी, ज्ञान बुद्धि भंडारा है ।
अलख अलौकिक अमर अजर विभो, शब्द ज्योति टकसारा है ।।
वेद न जाने भेद अनूपम, किस विधि बरन कहूं देवा ।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, गुरु स्वरूप की करूँ सेवा । ,,

इक्कीसवीं धुन

प्रार्थना

[१७७ संख्या १०८२]

गुरु समरथ दाता, नमो नमो ।
सुर नर मुनि त्राता, नमो नमो ॥

हितकर पितु माता ज्ञानी ज्ञाता, जगत विधाता नमो नमो ॥ गु०
नरवंश विभूषन जन मन पोषन, सरसिज सम लोचन नमो नमो ।
त्रयलोक्य सहायक बहु सुख दायक, सन्तन कुल नायक नमो नमो ॥
आनन्द घटरासी घट घट बासी, सत चित अबिनासी नमो नमो ॥
राधास्वामी दयाला सहज कृपाला, उर बिमल बिशाला नमो नमो।

[१-१७८]

इस घटका परदा खोलरी, घट जगत पसारा ।टेक॥

घट में कासी घट में फांसी, घट में यम का द्वारा ।
घट में ज्ञान ध्यान सन्यासी, घट ही में निस्तारा ।
घट में घट को तोलरी, घट अगम अपारा ॥ इस०
घट में ब्रह्मा वेद बिचारें, घट में विष्णु करतारा ।
घट में शिव शक्ति का बासा, घट ही में संहारा ।
घट में शब्द अनमोल री, घट का ले सहारा ॥ ,,
घट का घाट पाट पहचानो, पिंड देस दस द्वारा ।
घट में खेल खिलाड़ी जानो, घट में जीत और हारा ।
घट के बीच तू डोलरी, घट सब से न्यारा ॥ ,,
घट में अटपट घट में सटपट, घट में मोह हंकारा ।
घट में खटपट घट में चटपट, घट में ब्रह्म उजियारा ।
घट की बानी बोलरी, घट अधिक पियारा ॥ इस०

घट की निरख परख रखवारी, घट का करे विचारा।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, घट का लखे किवारा।
बाजन अनहद ढोलरी, चमका घट तारा ॥ इस०

(२-१७६)

आई देश बेगानी, तू मेरी सुरत सियानी ॥टेक॥
माया ने की कल्पित रचना, देख के तू भरमानी।
सार असार की गम नहीं तुझको, लीला निरख लुभानी।
मन में उपजी गलानी। आई०
दस इन्द्रिन संग भोग बिलासा, ले इच्छा लपटानी।
बन्धन की पड़ी गले में फाँसी, उरझ उरझ उरझानी।
नहीं गुत्थी सुलझानी ॥ ”
काम क्रोध मद मोह लोभ लग, अपना रूप भुलानी।
ऐसा मित्र मिला नहीं कोई, जो सत मर्म लखानी।
हो सच्चा ज्ञानी ध्यानी ॥ ”
धर्म कर्म की राह चली जब, अटकी पत्थर पानी।
थक थक ज्ञान विचार में आई, भरमी मान गुमानी।
समझ नहीं आई बानी ॥ ”
ऐसी दशा देख राधास्वामी, मन में दया समानी।
सुरत शब्द का पन्थ लखाया, अब तो चेत अज्ञानी।
तत्व को ले पहचानी ॥ ”

(३-१८०)

सुख मंगल की खानी, अयोध्या दशरथ की रजधानी ॥टेक॥
दस इन्द्रिन का रथ बनवाया, दशरथ आप कहाया।
सतरज तम के तीन गुनन संग, भोग बिलास मचाया।
यही तीनों हुईं रानी ॥ अयोध्या०

दशरथ कुल में चार पुत्र हुये, मन चित बुद्धि हंकारा।
भरत शत्रुहन राम लखन सोई, एक एक से न्यारा।
बली मानी अभिमानी ॥२॥
दस इन्द्रिन से भये उदासी, राम लखन बनवासी।
अवध शरीर पिंड का त्यागा, हुये ब्रह्मांड निवासी ॥
बन तपसी विज्ञानी ॥३॥
सीता सती को साथ लिये सोई, बन में आसन मारा।
रज रावण सीता हर लीनी, रच माया विस्तारा ॥
राम मन उपजी गलानी ॥४॥
मान हना हनुमान बना वह, लंक की ओर सिधारा।
सिंध में सेत बांध कर लाँघा, ज्ञान से रावण मारा ॥
लाया सीता महारानी ॥५॥
बानर रीछ असुर दल साजा, सत रज तम गुनवानी।
त्रिकुटी गढ़ लंका तब जीता, मेघ ओम् सुन बानी ॥
जीत से अति सुख मानी ॥६॥
गुप्त भया गुप्तार घाट में, ब्रह्म रूप की धारा।
सोई सरयू निरमल जानो, समझ के करो विचारा ॥
राधास्वामी कहत बखानी ॥७॥

(४-१८१)

कर आंख बन्द घट में तब दर्शन, गुरु स्वामी का पावेगा ॥टेक॥
देह में आंख आंख में तिल हैं, तिल में ज्योत उजाला।
ज्योत निरख कर ज्योत में दर्शन, ज्योत का बोल है बाला ॥
बिन आंख बन्द किये लाख यतन कर, कुछ भी नजर न आवेगा। कर०
देह में कान कान आकाशा, शब्द आकाश का बासी।
शब्द को सुनकर भजन शब्द का, बस सुखमन सुखरासी ॥
बिना कान बन्द किये अनहद धुन को, कैसे प्रगट कर।वेगा ॥ ,,

देह में रसना रसना अग्नी, अग्नी नाम पसारा।
रूप से पहिले नाम का सुमिरन, नाम का भेद अपारा ॥
बिन जीभ बन्द किये अजपा जाप की,विधि क्या कोई समझावेगा॥ ,,
देह में मन मन चित हंकारा, अहंकार बुद्धि खानी।
मन को बस कर शम दम साधन, तभी बने गुरु ज्ञानी ॥
बिन इस मन साधन के प्रानी, काल करम भरमाऽेगा ॥ ,,
देह में सिंध सिंध में धारा, धार में बुँद पसारा।
दरिया लहर बुंद लख लीला, जा भव जल के पारा ॥
बिना बुन्द सिंध गति समझे, तत्व हाथ नहीं आऽेगा ॥ ,,
देह में आंख कान और जिभ्या, मन तीनों में व्यापा।
तीन बंद जब लग न लगाये, कैसे सूझे आपा ॥
बिना बन्द यह तीन लगाये, आपा लखा न जाऽेगा ॥ ,,
देह में सब कुछ देह में संगत, संगत सतसंगी प्यारे।
सतसंगी मन प्रेम परख हो, राधास्वामी के मतवारे ॥
बिन सतसंग विवेक न होगा, सतसंग काम बनाऽेगा ॥ ,,

(५-१८३)

सखियो आओ अब सतसंग में, राधास्वामी के नित ॥टेक॥
यह संसार बिपत की खानी, नित उठ कलह कलेश सहानी।
वृथा जीवन समय बितानी, नर देही की सार न जानी ॥
हित तज भया अनहित ॥१॥
भक्ति प्रेम से नहीं लव लागी, स्वारथ वश परमारथ त्यागी।
बाहर भीतर भरम की आगी,भड़की आग चल जल्द अभागी ॥
धर गुरु बानी चित ॥२॥
बचन प्रभाव समझ जब पाओ, सुरत शब्द घट योग कमाओ।
अन्तर मुख बिरती ठैराओ, बाहर दुख की दशा भुलाओ ॥
भजन हो प्रेम सहित ॥३॥

युक्ति सहज सुगम है प्यारी, नहीं कठिन नहीं कुरस न खारी।
अन्तर लगे सुरत की तारी, आपही नसे भाव संसारी॥
जीते जी का हित॥४॥
राधास्वामी दाता जग हितकारी, परमारथी परम उपकारी।
जग जीवन को देख दुखारी, धारा संत रूप अवतारी॥
राधास्वामी मात और पित॥५॥

(६-१८३)

सखियो लाओ री आनन्द से सुख भक्ति गजरा॥टेक॥
घट में खुली प्रेम की क्यारी, अद्भुत अनुपम प्यारी प्यारी।
हृदय देख के भया सुखारी, सुरत मालिनी गूँदे आरी॥
सुमती गजरा॥१॥
श्रद्धा गेंदा भाव चमेली, दया केतकी क्षमा की बेली।
खिली सेवती प्रीत अलबेली, जूही उमंग हरष हरपेली॥
शक्ति गजरा॥२॥
सुरत शब्द के तार गुथाओ, ध्यान ज्ञान के गिरह दिलाओ।
चित की वृत्ति सुमेर बनाओ, राधास्वामी गले आन पहनाओ॥
मुक्ति गजरा॥३॥

(७-१८४)

सखी घट देवल में चलकर, कीजो गुरु ध्याना॥टेक॥
देवल बना सुहाना प्यारी, अद्भुत अगम विचित्र अपारी।
खूँट खूँट में देव पुजारी, शोभा धामी शोभा धारी॥
सुखाना॥१॥
देवल गुरु सूरत की शोभा, आनन्द छवि चेतन छवि छोभा।
निरख सुरत नैन चित लोभा, मन की उमंग हर्ष कर चोभा॥
धर ध्याना॥२॥

कमल नेत्र कर कमल समाना, कमल अकार चरन लख जाना।
सेत कमल शरीर अनुमाना, सेत वस्त्र का पहरे बाना॥
मन माना ॥३॥
बिन दीवा बाती जल ज्योती, ज्योत ज्योत में ज्योत की सोती।
जगमग पन्ना हीरा मोती, ज्योत तार में ज्योत पिरोती॥
परमाना ॥४॥
बाजे घट शंख मृदंगा, बंसी बीन सरंग सरंगा।
राधास्वामी धुन में राग सरंगा, विधि पूजा सीखी सतसंगा॥
हर्षाना ॥५॥

(८-१८५)

आली री गुरु भक्ति बिना, नर जीवन निष्फल ॥टेक॥
मानुष तन का भक्ति है भूषण, प्रेम प्रीति सिंगारा।
श्रद्धा दया क्षमा चित बाढ़े, सूझे पर उपकारा॥
बुद्धि मन सब हों निर्मल ॥१॥
काम क्रोध और लोभ मोह मद, त्याग डाह हंकारा।
जो निष्काम करे गुरु भक्ति, सूझे ज्ञान विचारा॥
फँसे नहीं जग के दलदल ॥२॥
परमारथ के मग में पग धर, सुधर जाये व्यौहारा।
लोक में यश परलोक में आनन्द, जीवन मुक्ति बिहारा॥
काल माया करम निर्बल ॥३॥
जीतेजी तन रहते पावे, निज स्वरूप का दर्शन।
जब यहां दर्शन तत्व प्राप्त हो, आगे भी वही लक्षण॥
मिला मानुष तन का फल ॥४॥
राधास्वामी गुरु ने मौज दिखाई, सतसंग सार सुझाया।
अपनी आंखों देख लिया सब, भक्ति मुक्ति का सारा॥
भया सत मत में निश्चल ॥५॥

[९-११६]

मैं दिवानी हो गई ॥ टेक ॥

गुरु के रूप का भेद बताया, अपनी कृपा से अंग लगाया।
ढारस दे दे दासी बनाया, दुख दारुन से खोट छुड़ाया ॥
निज ज्ञान से ज्ञानी होगई ॥१॥
सुमिरन ध्यान की बिधि समझाई, भजन प्रभाव की गति लखाई।
सतसंगत की बानी सुनाई, दृष्टि के अन्दर दृष्टि खुलाई ॥
सुख से मगनानी होगई ॥२॥
जब से देखी सोहंग की लीला, तज कुशील को भई सुशीला ॥
त्रिकुटी का घट प्रगटा टीला, राधास्वामी पन्थ चली फुरतीला।
सहज निरवानी होगई ॥३॥

(१०-१८७)

भया रे मेरा मनुआ अब गुरु ज्ञानी ॥टेक॥

पहले यह था निपट संसारी, तज असार को होगया सारी।
सहजे जनम को लिया सुधारी, भवसागर से उतरा पारी ॥
हुआ आनन्द सुख खानी ॥१॥
प्रेम भक्ति का पहना बाना, गुरु के प्रेम में सदा दिवाना।
तोड़ा माया का ताना बाना, कैसे यह मन भया सियाना ॥
मेटा द्वन्द गलानी ॥२॥
पृथवी तज नभ मंडल डोले, काल के अब नहीं सहे झकोले।
हँस हँस मधुरी बानी बोले, अपने आप में रहे अडोले ॥
गुरु का प्रेम अभिमानी ॥३॥
सुमिरन भजन ध्यान नित करता, सिर पर कर्म का भार न धरता।
अब नहिं जनमा अब नहीं मरता, कमल पत्र सम भव जल तरता ॥
जीते जी निरवानी ॥४॥

धन धन धन राधास्वामी, तुम्हरे चरन में कोटि नमामी।
तुम हो सच्चे अन्तरयामी, तुम्हरी दया मन हुआ अकामी॥
बार बार बल जानी ॥५॥

(११-१८८)

काल ने आकर घेरा, चेत ले चेत सबेरा ॥टेक॥
किसका कौन कौन है किसका, कोई न संगी साथी।
माल खजाना संग न जावे, संग न घोड़े हाथी॥
कौन है इन में तेरा ॥१॥
कुटुम्ब कबीला निज मतलब के, स्वारथ बस लिपटाने।
बिन स्वारथ नहीं साथ कभी दें, यह सब कोई जाने॥
जान कर चित नहीं फेरा ॥२॥
मैं समझूँ यह देह है मेरी, हाथ पांव हैं अपने।
चलते समय साथ नहीं कोई, क्या यह रात के सपने॥
सोच ले सोच का बेरा ॥३॥
छूटें प्राण सांस भी छूटें, छूटें नस और नाड़ी।
इनके फांस फँसा है क्यों तू, क्या अज्ञानी अनारी॥
व्याप रहा भर्म अन्धेरा ॥४॥
राधास्वामी की जा संगत में, कर कुछ बचन बिलासा।
सैन बैन से रूप समझ ले, शब्द योग अभ्यासा॥
डाल सतलोक में डेरा ॥५॥

(१२-१८६)

ममता जाती नहीं मेरे मन से ॥टेक॥
मेरा कोई न मैं हूं किसी का, मुझमें कुछ नहीं मेरा।
समझ बूझ एसी काम न आई, करता हूं मेरा तेरा॥
मिटे न यह लाख यतन से ॥१॥

साथ न लाया अपने कुछ भी, साथ नहीं कुछ जावे।
बीच की दशा में साथ हुआ है, समझ में बात यह आवे॥
मनन श्रवण से कथन से ॥२॥
मेरे तेरे पने का बन्धन, मिथ्या बन्ध बँधाया।
यह बन्धन नहिं काटे कटता, कितना उपाय कराया॥
योग युक्ति साधन से ॥३॥
क्या ले आया क्या ले जायगा, यह जाने सब कोई।
जान जान अनजान बना है, अचरज अचरज होई॥
छुटा नहीं कोई यह बन्धन से ॥४॥
तन मन धन साधन में ममता, योग ज्ञान में ममता।
राधास्वामी अब तो दया करो तुम, चित में आवे समता।
जाये ममता जीवन से ॥५॥

(१३-१६०)

मेरी मंसा हुई अब पूरी ॥टेक॥

जनम जनम चौरासी भटके, मनुष तन अब पाया।
गुरु पद कमल परस सुख व्यापा, जनम को सुफल कराया।
सुरत कायर बनी सूरी ॥१॥
मान मोह की दुर्गम घाटी, चढ़ चढ़ छाई उदासी।
भूल भरम लग विपता भोगी, अब मिले गुरु अविनासी।
मोह मया भई चूरी ॥२॥
भ्रान्ती से चित में आई अशान्ति, सार असार न जाना।
साध की संगत गुरु की सेवा, निज स्वरूप पहचाना।
मृग के घट कस्तूरी ॥३॥
बन बन ढूँढ़ा परवत ढूँढ़ा, ढूँढ़ा देवल मन्दिर।
ढूँढ़ ढूँढ़ मन आई उदासी, दरस मिला घट अन्तर।
बनी गुरु चरनन की धूरी ॥४॥

सुरत शब्द मत गुरु ने सिखाया, सुगम सहस सुखरासी।
राधास्वामी दया से आपा चीन्हा, हुई सतधाम निवासी।
नहीं कोई करम मजूरी ॥५॥

[१४-१६१]

दुर्गम काल के गढ़ को तोड़ा ॥टेक॥
माया काल ने फांस फँसाया, फँस फँस भर्म भुलाना।
मोह जाल में रहा उरझाना, छूटन विधि नहीं जाना।
सहे यमदूत का कोड़ा ॥१॥
इत उत भटका उपजा खटका, घर व्यौहार न तटका।
ढूँढ़ फिरा कोई वैद न पाया, जाने भेद जो घटका।
भया मेरे मन में फोड़ा ॥२॥
दूर गया कभी निकट गया कभी, रोग को नहीं पहचाना।
सत गुरु रोग के भेदी आये, सत संगत दिया ज्ञाना।
नेह गुरु से जोड़ा ॥३॥
खड्ग ज्ञान ले हाथ में अपने, भक्ति की ढाल सजाई।
भर्म का बाना अंग में पहना, बन गया बांका सिपाही।
रान तले मन का घोड़ा ॥४॥
रोग हटा तन मन भया निर्मल, साहस पौरुष बाढ़ा।
राधास्वामी बल से किया चढ़ाई, रन पग रोपा गाढ़ा।
काल के सीस को फोड़ा ॥५॥

(१५-१६२)

गुरु सब के प्रीतम प्यारे ॥टेक॥
आप ही माली आप बगीचा, आप फूल फल पानी।
आप ही क्यारी आप कुदाली, रंग बास की खानी।
सब में सब के सहारे ॥१॥

आप ही कुंजी आप ही ताला, आप ही खोलन वाले।
आप ही मद मद पीने वाले, आप कलाल पियाले।
सब में सब से न्यारे ॥२॥
सुरत में शब्द में सूरत, शब्द योग सुख रासी।
ज्ञानी ध्यानी वक्ता श्रोता, ऋषि मुनि सहज उदासी।
अस्तुति गा गा हारे ॥३॥
एक अनेक बुन्द सुख सागर, ब्रह्मा विष्णु महेशा।
तुरिया तुरियातीत न होवे, बानी वचन संदेसा।
चांद सूर नभ तारे ॥४॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, सैन बैन कोई बूझे।
बन्ध मुक्ति का झगड़ा मेटे, सत्य नाम पद सूझे।
जावे भवजल पारे ॥५॥

(१६-१६७)

कुछ सोच मना तेरी उमर अकारथ जाय ॥टेक॥
जब लग तेल दिया में बाती, तब लग हैं सब संगी साथी।
जल गया तेल बुझ गई बाती, अब नहीं दृष्टि में घोड़े हाथी।
सपन का भाव दिखाय ॥१॥
बुद्धि चतुराई काम नहीं आवे, धन सम्पत कोई संग न जावे।
अन्त समय नर बहु पछतावे, रोवे झींके और चिल्लावे।
कोई न होये सहाय ॥२॥
राजा रंक अमीर भिकारी, सब के पीछे काल शिकारी।
वीर सूर योधा नरनारी, भूलेंगे अपनी हुशियारी।
एक न बचने पाय ॥३॥
जो आये सो एक दिन जावें, रहने को कोई यहां न आवें।
चार दिना उत्पात मचावें, अपनी करनी का फल पावें।
यम के धक्के खाय ॥४॥

सोच सोच कुछ सोच मना, नहीं तेरा अपना कोई जना।
राधास्वामी चरन में काज बना, भूल भुलादे अपना पना।
गुरु के गुन पल पल गाय ॥५॥

(१७-१९४)

मीठी बानी बोलिये मुख से, मन रहे निरमल शुद्ध शरीर ॥टेक॥
कड़वा बचन कलीजा बेधे, हिंसा की तलवार।
जिभ्या बाँधे क्यों फिरते हो, भाला छुरी कटार।
उर में साले सुनकर सुनने वाले, दुखी बने दिलगीर ॥ मीठी०
मुँह तो बना भयानक बांबी, निकले बिच्छू सांप।
डस डस खायें घाव करें गाढ़ा, महा समझ यह पाप।
प्रानी कुछ तो सोच समझ मन अपने, दे न पीर बेपीर ॥ ,,
क्यों मुख बना नरक की खानी, दुर्गन्धी अस्थान।
जब बोले तब निकले सड़ाइँध, समझ जो चतुर सुजान।
भाई इस करतब से जाय पड़ेगा, नरक कुंड के तीर ॥ ,,
जब बोले तब मीठी बानी, बानी अधिक स्वाद।
उत्तम पुरुष की यह है रीती, राख धर्म मरयाद ॥
पहनो सँवर सिंगार के तन पर, शील भाव की चीर ॥ ,,
आया जब राधास्वामी मत में, निंदा कुबानी त्याग।
गाता रह आनन्द हरष से, शब्द का मंगल राग।
ऐसा पुरुष विवेकी कहलाता है, पंथ का साध फकीर ॥ मीठी०

(१८-१९५)

गुरु मत का मर्म लखाया लखाया लखाया,
भेदी ने भेद बताया बताया बताया ॥
बुन्द सिंध से रहा अलगाना, नहीं पावे कहीं ठौर ठिकाना।
माया कीचड़ में लपटाना, सिंध मिलन की राह न जाना।
सतगुरु दया मिलाया मिलाया मिलाया ॥१॥

सत वस्तु नहीं ज्ञान विचारा, कहीं धरे नहीं ध्यान हमारा।
मन में भरा मान हंकारा, ढूँढ़त ढूँढ़त थक थक हारा।
गुरु ने आय जताया जताया जताया ॥२॥
माया मोह का बन्धन भारी, उरझ उरझ नहीं सुरझ सकारी।
भरम भ्रान्ती ने काम बिगारी, राधास्वामी चरन शरन बलिहारी।
अब तो सब लख पाया पाया पाया ॥३॥

(१६-१६६)

मैना मैना रे मैना, मैना तन पिंजरे में रहकर बोली बोले रे मैना ॥टे॥
जब तक 'मैं' है तब तक 'तू' है, मोर तोर का झगड़ा।
'मैं' जब गया गया तब 'तू' भी, अब किसका है रगड़ा।
सतगुरु दीन्हीं सैना ॥१॥
जो "तू" कहता वह अन्धा है, "मैं" कहता दीवाना।
"मैं मैं" "तू तू" को जो छोड़े, वही है चतुर सियाना।
यह है सच्ची बैना ॥२॥
जब मैं तब गुरु नहीं है, गुरु जब हैं मैं नाहीं।
प्रेम की गली तंग है भाई, दोनों कैसे समाहीं।
दोनों रहते हैं ना ॥३॥
मोर तोर की माया रसरी, प्राणी फांस फँसाने।
तोड़ के रसरी होगये न्यारे, फिर नहीं वह भरमाने।
होगये सच्चे मैना ॥४॥
बकरी मैं कह गला कटवाये, मैं मैं कर मिमियावे।
मैना मैना बचन सुनावे, बेसन शक्कर खावे।
कैसी मीठी मैना ॥५॥
मैना मैना मैना बोले, बोल की रटन लगावे।
मैं को त्याग शान्त बन जावे, सुख आनन्द धुन गावे।
पावे नित ही चैना ॥६॥

'मैं' 'तू' भरम विकार है मन का, मन माया का साथी।
जो 'मैं' कहेगा दुख से मरेगा, कुचले अहं का हाथी॥
'मैं' 'तू' दोनों हैं ना ॥७॥

सुरत की पंछी मैंना बनकर, मैंना मैंना कहती।
सुन्न वृक्ष की डाल पै बैठी, दुख सुख अब नहीं सहती॥
दिन है जहां रैना ॥८॥

मैंना मैंना तूना तूना, यह सतगुरु की बानी।
बानी सुन सुन जो चितलावे, बने सहज निरबानी॥
माया फिर कभी व्यापे ना ॥९॥

राधास्वामी शब्द सुरत की, धुन गा गा के सुनावे।
जो गावे नित गाके सुनावे, भव पिंजरे नहीं आवे॥
वह बन जावे मैंना ॥१०॥

(२०-१९७)

वह आगे आये आये, नर के तारन कारने नर देही में आये ॥टेक॥

रूप अरूप अनूप सुहावन, ऋषि मुनि सुर जन का मन भावन।
परम पवित्र शुद्ध अति पावन, हिया जिया नेत्र सुगम ललचावन॥
दरस देख हुलसाये ॥१॥

प्रेम से बली कहां है कोई, निर्मल तन मन कर मल धोई।
जगत वासना सहजे खोई, वामन रहे बलि के हित सोई॥
द्वारपाल के भाये ॥२॥

धास्वामी चरन शरन बलिहारी, प्रेम की महिमा हुई अति भारी।
प्रेम रूप है जग उद्धारी, अब तो आई हमारी बारी॥
गुरु ने अंग लगाये ॥३॥

(२१-१९८)

हम आये आये आये, आज तुम्हारे द्वार पर प्रभु भिक्षा मांगन आये ॥टेक
क्या मांगूँ कुछ थिर न रहाई, सुत दारा धन अगमापाई।

इनसे रहूं नित चित्त हटाई, मांगत मन अति रहत लजाई ॥
यह हिरदे नहीं भाये ॥१॥
रूप अनूप तुम्हारा देखा, मिट गया काल करम का लेखा ।
सबका सब बिधि किया परेखा, प्रेम प्रीति का यही बिसेखा ॥
नैनों जल भर लाये ॥२॥
मांगन गये सो लौटे नाहीं, भरम रहे माया के छाईं ।
मन में पड़ी काल की झाईं, बिनती सुनो हमारी साईं ॥
हम तो रहे सकुचाये ॥३॥
इच्छा थकित थकित मन काया, दर्शन पाय जिया ललचाया ।
पद सरोज की दीजे छाया, व्यांपे काम क्रोध नहीं माया ॥
निस दिन रहें लौ लाये ॥४॥
हित चित रहूं आज्ञाकारी, नख सिख उर में बसो हमारी ।
तुम हो दीनबन्धु हितकारी, राधास्वामी चरन शरन बलिहारी ॥
लो अब अंग लगाये ॥५॥

(२२-१६६)

दाया दाया दाया, सतगुरु कीजे जन पर दाया ॥टेक॥
प्रेम भाव रहे मन में छाया, करे अकाज न जग की माया ।
काल करम ने अति भरमाया, भूल भरम से दुख बहु पाया ॥
भिक्षा मांगन आया ॥१॥
तीन ताप से रहुँ अकुलाना, मेरा कहीं नहीं ठौर ठिकाना ।
देख फिरा सबका अस्थाना, अब तो सतगुरु दीजे दाना ॥
ध्यान चरन में लाया ॥२॥
उमंग प्रीति बाढ़े चित छिनछिन, सुमिरूँ नाम तुम्हारा गिनगिन ।
लौ लागी रहे चरनों दिन दिन, देखूँ रूप न जग का भिन भिन ॥
रहूं असोच अमाया ॥३॥

ज्ञान योग की अकथ कहानी, समझ न आवे रहे हैरानी।
जप तप संयम एक न जानी, सुनूँ तुम्हारी नित मृदु बानी॥
हिया जिया उमगाया॥४॥
तुम तो आये जीव उबारन, नाम धरा अपना जग तारन।
प्रगट भये हो हमरे कारन, हम पापी तुम पतित उद्धारन॥
राधास्वामी भेद बताया॥५॥

बिनती

(२०० कुलसं० ११०४)

गुरु तुम दीन दयाल हो, जगत पति स्वामी।
तुम्हरे चरन सरोज में, शत बार नमामी॥

दीन निबल के काज आप, प्रगट हुये आय।
बूड़त लिया बचाय, शब्द की नाव चढ़ाय॥

शब्द सुरत का भेद दिया, सत पन्थ चलाया।
भटके जीव अनाथ को, मारग दिखलाया॥

धन्य धन्य सुदयाल, धन्य आरत दुख हारन।
धन्य धन्य प्रतिपाल, धन्य साँचे भव तारन॥

नाम दान दे मेहर से, अपना कर लीजे।
राधास्वामी कृपाल, चरन की भक्ति दीजे॥

बाईसवीं धुन

प्रार्थना

(२०१)

धन धन धन जग त्राता, धन त्रिभुवन स्वामी ।
धन धन धन पितु माता, धन अन्तर्यामी
प्रभुधन अंतर्यामी ॥

भक्ति भाव स्वामी पाऊँ, चरन शरन ध्याऊँ ।
चरनन चित्त लगाऊँ, सेवा में धाऊँ, प्रभु सेवा में धाऊँ ॥

आदि गुरु परमातम, तुम मंगलकारी ।
जन सेवक सुखदायक, जीवन हितकारी,
प्रभु जीवन हितकारी ।

प्रेम रूप करतारा, घट घट के वासी ।
मन बुद्धि से पारा, अनुपम अविनासी,
प्रभु अनुपम अविनासी ॥

प्रेम दान मोहे दीजे, सन्तन की सेवा ।
सत संगत फल पाऊँ, देवन के देवा,
प्रभु देवन के देवा ॥

त्रिविध ताप दुख मेटो, करलो मोहे अपना ।
अवगुन चित्त न लाओ, दूर करो तपना,
प्रभु दूर करो तपना ॥

तज तीनों जल्दी प्रभु, पद चौथा पाऊँ ।
काल जाल से भागूँ, राधास्वामी गुन गाऊँ,
प्रभु राधास्वामी गुन गाऊँ ॥

लावनी

(१-२०२)

कर निश्चय गुरु का चरन सीस पर धारा।
वह होगा आप एक दिन भव जल पारा॥
क्यों सोच से तू नित व्याकुल रहता है।
क्यों भरम में पड़कर दुख सुख को सहता है।
क्यों उलटी सुलटी बात बना कहता है।
क्यों नहीं चरन की ओट छांह गहता है।
जिस का सतगुरु रूप सदा रखवारा।
वह होगा आप एक दिन भव जल पारा॥१॥
गुरु हैं हितकारी तेरे समझ ले मन में।
तू चाहे रहे कहीं घर परबत और बन में।
रह रात दिवस गुरु देव के प्रेम लगन में।
नहीं चिंता का ले भार भरम के यतन में।
बेखटके जो करता है यहाँ गुजारा।
वह होगा आप एक दिन भव जल पारा॥२॥
भृंगी ने कीट को जोर से अपने पकड़ा।
और उसे बन्द छत्ते में लाकर जकड़ा।
पहले वह भय बस भया मोह का लकड़ा।
फिर ध्यान से बन गया भृंगी अच्छा तकड़ा।
जो लेता है गुरु देव का ऐसा सहारा।
वह होगा आप एक दिन भवजल पारा॥३॥
कर भजन ध्यान सुमिरन नित उठ कर भाई।
इन ही बातों से होगी तेरी भलाई।
तज दे सब आलस नींद मोह कदरानी
बिगड़ी सब तेरी बनत बनत बन जाई।

जो दुविधा दुचिताई से गहे किनारा।
वह होगा आप एक दिन भवजल पारा ॥४॥

राधास्वामी संत रूप धर जग में आये।
भूले भटकों को सत की राह चलाये।
जो अचेत थे दया से उन्हें चेताये।
सुरत शब्द मत योग का सच्चा यतन सिखाये।
शरणागत जो हुआ तरा और तारा।
वह होगा आप एक दिन भव जल पारा ॥५॥

[२-२०३]

जिसने निश्चय से गुरु का लिया सहारा।
उसका हुआ भव सागर से बेड़ा पारा ॥

नहीं साँचे भक्त किसी से कभी हैं डरते।
नहीं भय से काल करम के हैं वह मरते।
गुरु उनकी पल पल में है रक्षा करते।
वह सहज सहज में जग के निधि से तरते।
गुरु की कृपा से हुआ उनका निस्तारा।
जिसने निश्चय से गुरु का लिया सहारा ॥२॥

नहीं धरम करम से लगा किसी का ठिकाना।
नहीं संयम नियम में परमारथ का निशाना।
सब वृथा जानो ज्ञान ध्यान अनुमाना।
केवल सतगुरु की दया में है निरवाना।
गुरु भक्ति से होगा आप ही भला तुम्हारा।
जिसने निश्चय से गुरु का लिया सहारा ॥२॥

मीरा गणिका रैदास और सदन कसाई।
इन सबको गुरु की भक्ति हुई सुखदाई।

तर गया गुरु की भक्ति से पीपा नाई।
गुरु रात दिवस अपने भक्तों के सहाई॥
सब त्याग मोह भ्रमजाल किया भक्ति से गुजारा।
जिसने निश्चय से गुरु का लिया सहारा॥४॥

गुरु के बल यह मन तुम्हरे बश में आवे।
गुरु के बल नर भव द्वन्द को सहज नसावे॥
गुरु के बल पाप प्रभाव न अपना दिखावे।
गुरु के बल प्रानी यम का फंद कटावे॥
गुरु नर स्वरूप में धरा सन्त अवतारा।
जिसने निश्चय से गुरु का लिया सहारा॥४॥

गुरु की कर जीते जी चण चण तू सेवा।
गुरु सम इस जग में नहीं है कोई देवा॥
गुरु की कृपा मिटे सब भूल भर्म का भेवा।
गुरु शब्द जहाज के बने आप ही खेवा॥
राधास्वामी ने बख्शा यह गुर सार का सारा।
जिसने निश्चय से गुरु का लिया सहारा॥५॥

(३-२०४)

नामी हुए उसी दिन जिस दिन, चित से गुरु का नाम लिया।
जीते जी यश कीर्ति प्रतिष्ठा, और पीछे सत धाम लिया।
अर्थ लिया और धर्म लिया और, मोच लिया और काम लिया।
चार पदारथ हाथ में आए, तब जाकर बिस्राम लिया।
मन चंचल की दुविधा मेटी, शान्ती आठों याम लिया।
सिर पर वार न आने पाया, काल चक्र को थाम लिया॥१
जीने की नहीं मन में इच्छा, मरने का डर नहीं करते हैं।
अजर अमर है रूप हमारा, प्रेमी जन कब मरते हैं।
भार विपति आपति और दुख का, सिर पर कभी न धरते हैं।

कमल फूल ज्यों हम भव सागर, के जल में तरते रहते हैं।
मन का घोड़ा रान के नीचे, हाथ में उसका लगाम लिया।
सिर पर वार न आने पाया, काल चक्र को थाम लिया ॥२॥
खाकर दाना भक्ति का हम, प्रेम का पानी पीते हैं।
हृष्ट पुष्ट होकर संसार में, सुख आनन्द से जीते हैं।
हम नहीं हिंसक हंस हैं पूरे, बन के सिंह न चीते हैं।
बिरह बान से फटे कलेजे, के चीरे को सीते हैं।
गुरु भक्ति का सौदा सच्चा, बिना मोल बेदाम लिया।
सिर पर वार न आने पाया, काल चक्र को थाम लिया ॥३॥
ब्राह्मण को मिला ब्रह्म, क्षत्री क्षत्रपति कहलाता है।
वैश्य को धन है शूद्र कला, कौशल की पदवी पाता है ॥
गाने बजाने वाला तान से, तान को अपना मिलाता है।
योगी सिद्धि शक्ति का भूका, योग के मारग जाता है।
हमको नाम की लगन लगी, ऊँचे चढ़ नाम का ग्राम लिया।
सिर पर वार न आने पाया, काल चक्र को थाम लिया ॥४॥
सहस कमल चढ़ त्रिकुटी आए, ओम् की बानी सहज सुनी।
सुन्न में सहज समाध रचाई, महासुन्न के बने मुनी।
भँवरगुफा चढ़ बन्शी बजाई, अवगुण मेंट के हुए गुनी।
सत्तधाम धुर बीन की धुन सुन, सत धुनि बीन के धुनके धनी।
अलख अगम पर बैठक ठानी, राधास्वामी धाम लिया।
सिर पर वार न आने पाया, काल चक्र को थाम लिया ॥५॥

(४-२०५)

घर छोड़ा और देश देश में, घूम फिरे मारे मारे।
बन तपबन उपबन मधुबन सब, देख लिये न्यारे न्यारे।
परवत और पहाड़ की चोटी, चढ़ चढ़कर थक थक हारे।
तेरे प्रेम में प्रीतम प्यारे, अन्त में पाया तुझे वारे।

घट का परदा खोल के गुरु ने, तेरे रूप को दरसाया।
दर्शन रतन की खान खुली, अपने अन्तर तुझको पाया ॥१॥
मूरत तीरथ में नहीं रहता, नहीं काशी का तू बासी।
मथुरा पुरी द्वारका नगरी, कहां बसा है अविनासी।
तू नहीं जपी तपी बन खंडी, नहीं कभी तू सन्यासी।
अग्नी पवन नीर नहीं पृथवी, कैसे कहे कोई आकासी।
सत संगत के सुने बैन, समझाने वाले ने समझाया।
दर्शन रतन की खान खुली, अपने अन्तर तुझको पाया ॥२॥
खट पट में पोथियों के पढ़कर, अटपट चाल चले दिन दिन
सार मिला नहीं जी घबराया, तत्वों की गिनती गिन गिन
माया ब्रह्म के द्वन्दवाद में, द्वन्द के फंद फँसे छिन छिन
जिसको देखा पक्षपात बस, करता रहता है भिन भिन।
गुरु मिले निज बचन सुनाया, अनुभव गम गति लखवाया।
दर्शन रतन की खान खुली, अपने अन्तर तुझको पाया ॥३॥
योग युक्तिकर योगी सिद्धि, शक्ति के मारग भरमाने।
मन को सोधा तन को साधा, साधन कर कर उक्ताने।
आसन मारा साँस को रोका, यतन किये बहु मन माने।
लगी समाध तुझे नहीं पाया, कैसे कोई तुझको जाने।
आप आप में आप समाया, अपना आपा बन आया।
दर्शन रतन की खुली, अपने अन्तर तुझको पाया ॥४॥
साध की संगत गुरु की सेवा, सहज रीति जब बन आई।
सहज में सहज सहज में साधन, सहज भावना चितलाई।
सहज रूप है सहज नाम में, सहज काम नहीं कठिनाई।
राधास्वामी की सत संगत में, सहज दृष्टि मैंने पाई।
सहज दृष्टि में सहज रूप का, सहज ज्ञान सहजे छाया।
दर्शन रतन की खान खुली, अपने अन्तर तुझको पाया ॥५॥

(५-२०६)

सोहं अस्मि जब हमने कहा, तब सोहंगम हंकार बना।
तत्वमसी जो मुँह से निकला, वाच लच्छ जंजार बना।
मनन किया मन बना चित्त से, चिंतन का सत्कार बना।
बुद्धि निश्चयआत्मक आई, जब ही विवेक विचार बना।
पुरुष हुये तब बनी प्रकृति, कुल कुटुम्ब परिवार बना।
मेरे तेरे पने की इच्छा, जब प्रगटी संसार बना ॥१॥
अपने आप में आप समाने, हिरण्य गर्भ की गति पाई।
अन्तर्यामी बने जो अपने, अन्तर में ली अंगड़ाई।
खोली आँख विराट कहाये, ठकुराई मन को भाई।
सृष्टि स्थिति लय की ठानी, सत रज तम की प्रभुताई।
तीन गुणों को एक किया और, अ, उ, म, ओम्कार बना।
मेरे तेरे पने की इच्छा, जब प्रगटी संसार बना ॥२॥
यह ब्रह्मांड की सूक्ष्म है रचना, सूक्ष्म से आप स्थूल बना।
कारण बीज से अँखुआ फूटा, फल पत्ता और फूल बना।
द्वन्द भाव के घट आते ही, अनुकूल और प्रतिकूल बना।
सुख वासना की छाया फूटी, रोग सोग दुख सूल बना।
तीन त्रिलोकी हमने रचाई, सो निज सिर का भार बना।
मेरे तेरे पने की इच्छा, जब प्रगटी संसार बना ॥३॥
जब सर्वज्ञ तो ब्रह्म बने, और त्रिलोकी में व्याप रहे।
जब अल्पज्ञ तो जीव हैं, अन्तःकरण में पुण्य और पाप रहे।
काल करम बस योनी भटके, कहीं माता कहीं बाप रहे।
लोक परलोक के द्वन्द जगत को, निज माया से माप रहे।
एक अवस्था निरमल सुन्दर, और दो से विभिचार बना।
मेरे तेरे पने की इच्छा, जब प्रगटी संसार बना ॥४॥
अपने आप में भूले भटके, अपने आप में भरमाने।

अपने आपकी सुध नहीं पाई, पच्च के उलझन उलझाने।
राधास्वामी सतगुरु आये, आँख खुली तब पहचाने।
कर सतसंग सार रस पाया, अपने आपको तब जाने।
मेरा तेरा पना छूट गया, परमारथ का सार बना।
मेरे तेरे पने की इच्छा, जब प्रगटी संसार बना ॥५॥

(६-२०७)

भव सागर में भाटा आया, लहर का हेरा फेरा है।
बह बह गया जो धार की राह में, डाला अपना डेरा है।
मन चंचल मूरख अज्ञानी, चेत ले अभी सबेरा है।
मोह भरम अज्ञान अविद्या, ने क्यों तुझको घेरा है।
कंकर चुन चुन कर महल बनाया, कहता है घर मेरा है।
ना घर मेरा ना घर तेरा, चिड़िया रैन बसेरा है ॥१॥
किस विरते पर तत्ता पानी, कुप्पे जैसा फूल गया।
अपना रूप स्वरूप भुलाया, अपने आपको भूल गया।
देख ले अगमा पाई जग से, कारण सूक्ष्म स्थूल गया।
एक रहा नहीं नाम लेने को, अनुकूल प्रतिकूल गया।
काल चक्र के घेरे में, प्रकाश है कहीं अँधेरा है।
ना घर मेरा ना घर तेरा, चिड़िया रैन बसेरा है ॥२॥
रामचन्द्र जी जैसे राजा, गये गई सीता रानी।
विश्वामित्र वशिष्ठ गये, गौतम कनाड से विज्ञानी।
जपी तपी नियमी और धरमी, ऋषि मुनि ज्ञानी ध्यानी।
काल ने सबको ग्रास लिया, फिर तू क्यों हुआ है अभिमानी।
तू कब आप किसी का होगा, कोई जब नहीं तेरा है।
ना घर मेरा ना घर तेरा, चिड़िया रैन बसेरा है ॥४॥
देह का यह परिणाम देख ले, किसी को आग में दिया जला।
किसी को कीड़ों मकोड़ों ने खाया, जब मिट्टी में गाड़ दिया।

खुली जगह जंगल में कौव्वों, चील गिद्ध ने नोच लिया।
पानी ने भी उसे न छोड़ा, छिन में लोन समान गला।
चेत चेत ले चेत चेत ले, चेत चेत का बेरा है॥
ना घर मेरा ना घर तेरा, चिड़िया रैन बसेरा है॥४॥
राधास्वामी की संगत में, अपना जनम बना ले तू।
त्याग भरम का रस्ता सच्चे, ज्ञान का रस्ता पाले तू।
शब्द योग अभ्यास के साधन, से कुछ भक्ति कमाले तू।
छोड़ काल माया का घर, सत धाम में सुरत बसा ले तू।
भव सागर तरने का सन्तों, ने बांधा यह बेड़ा है।
ना घर मेरा ना घर तेरा, चिड़िया रैन बसेरा है॥५॥

(७-२०८)

अज़ल से था यह अहद रहूंगा, साथ साथ दूंगा तेरा।
भूलूंगा नहीं कौल यह समझूंगा, तू साथी है मेरा।
आकर तेरी सँभाल करूँगा, दर्दो अलम ने जब घेरा।
तेरे दिल को बनाऊँगा, अपने रहने का मैं डेरा।
जा दुनिया में फिक्र न कर, कुछ दिन के लिये दुनिया में जा।
तू मेरा है मैं तेरा हूं, तुझ से कभी न हूंगा जुदा॥१॥
आशिक़ ने यह बात सुनी, माशूक़ की खुश होकर बोला।
तेरे हुकम से मैं जाता हूं, जाने की नहीं कुछ परवा।
हिजर अज़ाब जान है बेशक, वस्ल है राहत और मजा।
जब तू मेरा और मैं तेरा, फिक्र का फिर क्यों हो सौदा।
वह बोला मैं सच कहता हूं, कुछ नहीं कहता सच के सिवा।
तू मेरा है मैं तेरा हूं, तुझ से कभी न हूंगा जुदा॥२॥
अहद हुआ और कौल हुआ, आशिक़ ने छोड़ा अर्शबरीं।
उतर के कुर्सी से वह माँ के, हमल में हुआ क़रार गज़ीं।
फलक सैर जो रूह थी हुकम से, आकर होगई खाक नशीं।

रिज़्क़ रसां माशूक़ साथ था, उसी मकां का होके मकीं।
तंग जगह में आशिक़ सुनता, रहता था बस यही सदा।
तू मेरा है मैं तेरा हूं, तुझ से कभी न हूंगा जुदा ॥३॥
माँ के हमल से गिरा खाक पर, लगा लोटने खाक में वह।
कभी पाक हालत थी उसकी, कभी हालत नापाक में वह।
गिरा उठा उठकर फिर संभला, खौफ बीम और बाक में वह।
कभी रोया कभी हँसा कभी, लोटा खस में खाशाक में वह।
बात बात में बात में दिल में, बात ने उसके की थी जा।
तू मेरा है मैं तेरा हूं, तुझ से कभी न हूंगा जुदा ॥४॥
बालिग हुआ समझ कुछ पाई, पढ़ लिखकर हुशियार बना।
औरों की बातों में बहका, बेदीन और दींदार बना।
मज़हब मिल्लत के झगड़ों में, फँस फँस कर लाचार बना।
कभी तक़वा की उसको सूझी, कभी मयकश मयख्वार बना।
अक्ल इल्म के धन्दों से वह, कौल करार को भूल गया।
तू मेरा है मैं तेरा हूं, तुझ से कभी न हूंगा जुदा ॥५॥
आखिर अपने को समझा तब, ग़ाफिल और नाकार बना।
वहम गुमां में फँसा गले का, वहम तब उसके हार बना।
शादी की और फिक्र कसब में, बेहुरमत और ख्वार बना।
गई जवानी आई पीरी, सुस्त हुआ बीमार बना।
याद न आया कौल, दाम दुनिया में जब बे तरह फँसा।
तू मेरा है मैं तेरा हूं, तुझ से कभी न हूंगा जुदा ॥६॥
ज़ोफ नकाहत के हुये हमले, रफता रफता ज़ईफ हुआ।
तन में उसके आई लाग़री, ज़ार निज़ार नहीफ हुआ।
जिसे लताफत का सौदा था, देखो कैसा कसीफ हुआ।
हब्स सिफालत और रज़ालत, का महबूस शरीफ हुआ।
यह हुआ खयाल रहा नहीं, अहद का अपने बना झूठा।

तू मेरा है मैं तेरा हूं, तुझ से कभी न हूंगा जुदा ॥७॥

यह हालत माशूक़ ने देखी, दिल में शर्म हया आई।
मेरे आशिक ने कैसी, कर ली है अपनी रुस्वाई[१]।
जो मसजूद[२] मलायक[३] था कभी, दुनिया का हुआ शैदाई[४]।
अशरफ अकबर अकमल अफज़ल, को यह हालत क्यों भाई।
कुछ नहीं मेरे कौल को भूला, मैंने तो उसको यही कहा।
तू मेरा है मैं तेरा हूं, तुझ से कभी न हूंगा जुदा ॥८॥

ग़ैरत आई और हमिय्यत[५] का, जज़्बा जब उमगाया।
वह असली माशूक़ यहां, हादी[६] की सूरत में आया।
राज़ नियाज़ के परदों में, छुप छुप कर यह नग्मा गाया।
मेरा था क्यों मुझे भुलाया, मुझे छोड़ कर क्या पाया।
अब आकर फिर तुझे, सुना देता हूं वह कदीम नुक्ता।
तू मेरा है मैं तेरा हूं, तुझ से कभी न हूंगा जुदा ॥९॥

तेरे दिल के हुजरे[७] का, हर वक्त मकीं मैं रहता हूं।
अर्श[८] फर्श पर नहीं न कुर्सी[९], और जमीं में रहता हूं।
हूतुलहूत के परदों में घुस, परदा नशीं में रहता हूं।
जहां है तू यह समझ ले अपने, दिल में वहीं मैं रहता हूं।
आंख कान जबां बन्द कर, देख अपने अन्दर में आ।
तू मेरा है मैं तेरा हूं, तुझ से कभी न हूंगा जुदा ॥१०॥

सदा मेरी ख़ामोश नहीं है, अब भी गाफिल सोच जरा।
आंख कान और जबां बंद कर, सुनले उलफत का नग्मा।
सोते सरमदी[१०] सोते नसीरा[११], सोतुल सोत[१२] की शक्ल निदा।
गूंज रही है तेरे अन्दर, गफलत का दे उठा परदा।

अर्थ (१) दुर्गति (२) देवता (३) देवता (४) प्रेमी (५) लज्जा (६) गुरु (७) कोठरी (८) आकाश (९) आठवां आकाश (१०) (११) (१२) अन्तरी शब्द।

वही कौल मेरा है प्यारे, अहद का मुझे समझ पक्का।
तू मेरा है मैं तेरा हूं, तुझ से कभी न हूंगा जुदा ॥११॥
आशिक ने यह सदा सुनी, होश आया नींद से जाग गया।
बाहर की दुनिया से हटकर, वह बातिन में भाग गया।
सुलतानुल अजकार कौल था, उसकी धुन में लाग गया।
इस्म आजम पाया दुनिया का, और दीन और राग गया।
नासूत और मलकूत के ऊपर, चढ़ जबरुत में आप सुना।
तू मेरा है मैं तेरा हूं, तुझ से कभी न हूंगा जुदा ॥१२॥
लाहूती तबके में आया, की जुलमात की मंजिल तै।
आब हयात[1] पिया तब कर दिया, अगजियात दुनिया को कै।
गनी हुआ दिल सैर हुआ, इस्तगना[2] फना[3] नहीं कुछ शै।
आशिक और माशूक मिले हैं, एक जान दो कालिब है।
राधास्वामी आये अनहद, बानी का फैला चरचा।
तू मेरा है मैं तेरा हूं, तुझ से कभी न हूंगा जुदा ॥१३॥

(८-२०९)

दिल में शान दिलबरी आई, जब तब वह दिलदार बना।
दिल देने वाला मैं ठहरा, वह दिलबर हुशियार बना।
मुझमें दर्दो गम व अलम थे, वह सच्चा गमख्वार बना।
वह तबीब की शक्ल में आया, जिस दम मैं बीमार बना।
वह मेरा है मैं उसका हूं, मैं आशिक वह यार बना।
आकर मुझे दिखाई सूरत, मैं तालिबे दीदार बना ॥१॥
वह वाहिद वह जमा जरब, तफरीक हुआ तकसीम हुआ।
इल्म का ऐन लाम वह मेरे, और आखिर में मीम हुआ।
मेरी तंग नजरों में वह खुद, दौलत जर और सीम हुआ।
जब वह मेरा हुआ दूर तब, दिल से खौफ और बीम हुआ।

(१) अमृत (२) बेपरवाही (३) लय।

बेखौफी से उसके इश्क का, जाम पिया सरशार बना।
आकर मुझे दिखाई सूरत, मैं तालिबे दीदार बना ॥२॥

वह है कौन कौन हूं मैं, जहां जात सिफात का धोका है।
वह कालिब है नजर में सबके, जात पात का धोका है।
किसी किसी की जबां पर आया, नफी[१] असबात[२] का धोका है।
वहम गुमां में पड़े सभी हैं, बात बात का धोका है।
वहदत में कसरत जब आई, पांच सात दो चार बना।
आकर मुझे दिखाई सूरत, मैं तालिबे दीदार बना ॥३॥

मैं जुज वह कुल जर्रा मैं, वह आफताब की है सूरत।
मुझे बर्गे गुल समझो तुम, और वह गुलाब की है सूरत।
दरिया जात अजीम है उसकी, मेरी हुबाब की है सूरत।
मैं महदूद लफज की सूरत, वह किताब की है सूरत।
करम की नजर से देखा, उसके गले का तब मैं हार बना।
आकर मुझे दिखाई सूरत, मैं तालिबे दीदार बना ॥४॥

आशिक है दिल का जेवर, माशूक उसी का सौदा है।
इश्क के सिवा गरज नहीं उसको, वह माशूक पे शैदा है।
इश्क की धुन में पक्का होकर, गली गली वह रुस्वा है।
आसां नहीं है इश्क समझ लो, जीते जी मर मिटना है।
माशूक आया गले लगाया, आशिक जिस दम ख्वार बना।
आकर मुझे दिखाई सूरत, मैं तालिबे दीदार बना ॥५॥

[६-२१०]

किसी को राज की इज्जत बख्शी, उसने किसी को पाट दिया।
किसी को लाकर बिठाया तख्त पर, किसी को टूटी खाट दिया।
बाढ़ जो माँगा बाढ़ दिया, और घाट जो माँगा घाट दिया।

(१) नेति (२) ऐति।

हाट वाले को हाट दिया, और बाट वाले को बाट दिया।
जिसने दुनिया दबाना चाहा, धर कर उसको डाट दिया।
मस्तों को बेफिकरी, बेखौफी मस्ती का ठाठ दिया ॥१॥
जर परस्त का खुदा है जर, जर परस्त को जर और सीम[१] दिया।
बुज दिल डरने वाले दिल को, खौफ दिया और बीम दिया।
इल्म के जो शायक थे उनको, ऐन[२] लाम[२] और मीम[२] दिया।
ताज पसंद को ते और अलिफ के, साथ मिलाकर जीम दिया।
रजवाड़े को राजपूत, और जटवाड़े को जाट दिया।
मस्तों को बेफिकरी बेखौफी, मस्ती का ठाठ दिया ॥२॥
मोहताजों को मोहताजी दी, गनी[३] को इस्तगना[४] बख्शी।
दोजख बद आमालों को, नेकों को खुल्द में जा बख्शी।
मछली को पानी में मसकिन, परदारों को हवा बख्शी।
नूर पसंद तबे को नूर, तजल्ली और जिया[५] बख्शी।
ज्वाला मुखी पहाड़ को जगमग, ज्वाला मुखी का लाट दिया।
मस्तों को बेफिक्री बेखौफी, मस्ती का ठाठ दिया ॥३॥
पस्त दिली और पस्त हिम्मती, वालों को उसने दी पस्ती।
जंगल मिला है जंगली को, बस्ती वालों को मिली बस्ती।
कतराये जो कीमत देने से, हाथ में ली अशिया सस्ती।
बे परवाह सैर दिल आली, हिम्मत को दे दी मस्ती।
जो खरीदने जैसा सौदा आया, उसको वैसा हाट दिया।
मस्तों को बेफिक्री, बेखौफी, मस्ती का ठाठ दिया ॥४॥
शरवत[६] और शौकत वालों को, जाह[७] जलाल मुबारक हो।
मुल्क माल की गरज है जिनको, मुल्क और माल मुबारक हो।
कील काल[८] आलिम को, और सूफी को हाल मुबारक हो।

अर्थ (१) चांदी (२) इल्म (३) बे परवाह (४) बे परवारी (५) प्रकाश (६) माल (७) पद (८) कहना सुनना।

आशिक खस्ता दिल को इश्क का, दर्द मलाल मुबारक हो।
जो कुछ जिन्होंने माँगा, उनमें उसी चीज को बांट दिया।
मस्तों को बेफिक्री बेखौफी, मस्ती का ठाठ दिया ॥५॥
जो जैसा था जैसी की ख्वाहिश, वैसी हालत पाई।
इसमें नहीं कुसूर किसी का, दिल में गौर करो भाई।
जैसा अपना जरफ बनाया, जरफ में जैसी गहराई।
फिर भी नहीं कनाअत[1] की, हरगिज तुममें आदत आई॥
धार छुरी छुरे को जब दी, तेग दुदम को काट दिया।
मस्तों को बेफिक्री बेखौफी, मस्ती का ठाठ दिया ॥६॥
शाकिर नहीं अपनी किस्मत पर, रंज न करो न फिक्र करो।
सोहबत में मुरशद के जाकर, रंग ढंग उसका सीखो।
बातें कहता रहता है वह, गोस होश[2] से रोज सुनो।
फिर अमली जिंदगी बनाकर, जल्द असलियत पर आजाओ।
हवस रहेगी नहीं उलट जब, हिर्स हवस का टाट दिया।
मस्तों को बेफिक्री बेखौफी, मस्ती का ठाठ दिया ॥७॥

(१०-२११)

अदम[3] से निकले तलाशे दिलबर, में मैदां जंगल देखे।
कभी नदी और नाले देखे, कहीं गहरे दलदल देखे॥
रेगिस्तान के टीले वीराने, सब घर से निकल देखे।
चीते शेर के करतब देखे, गीदड़ के छल बल देखे।
कफे[4] अफसोस दर्द हसरत से, किसी वक्त मल मल देखे।
आखिर ऐसा जमाना आया, जंगल में मंगल देखे ॥१॥
जुदा हुए दिलदार से जब, यह हालत नहीं पसंद आई।
हिज्र[5] में सोजो गुदाज[6] की सूझी, हुए उसी के शैदाई।

अर्थ—(१) संतोष (२) चेतन के कान से (३) नेस्ती (४) हथेली (५) बियोग (६) तड़प।

हाजिर में वह हुजूर में था, गायब में है सौदाई।
हाजिर गायब में यकसां है, इसकी समझ किसे आई।
काबा हरम[1] में ढूँढा जाकर, मंदिर और देवल देखे।
आखिर ऐसा जमाना आया, जंगल में मंगल देखे ॥२॥
अपने सिर मे तलाश का सौदा, समाया होगये मुतलाशी।
कभी मदीना मक्का पहुँचे, कभी पहुँचे मथुरा काशी।
कभी नमाज की उठक बैठक, कभी था सिजदा फराशी।
बैतुल्हम हम कभी गये, और कभी सुमेरु कभी कैलाशी।
हवस थी आज भी देखें उसको, हमने जिसको कल देखा।
आखिर ऐसा जमाना आया, जंगल में मंगल देखा ॥३॥
हाथ में ली तस्बीह सुमरनी, विर्दजबां[2] था नाम उसका।
लगा लबों से दिल के हमेशा, था तलाश का जाम उसका।
दिल में तलब की तड़प उठी, जब याद किया तब काम उसका।
शेख से पंडित से पूछा कहियें, हमें बतादो नाम उसका॥
जाहिर बातिन बरजक[3] के, नज्जारे सब पल पल देखें।
आखिर ऐसा जमाना आया, जंगल में मंगल देखें ॥४॥
मिला नहीं लेकिन मायूसी से, हम नहीं हरगिज घबराये।
कसरत[5] के तै किये मनाजिल, तबकए-वहदत[4] में आये।
कसरत वहदत के मुकाम, और मसकिन सब खाली पाये।
महरमेराज[6] कहाँ था कोई, भेद जो उसका बतलाये।
पानी में ठिठरे और गले, आग तक में भी जल देखे।
आखिर ऐसा जमाना आया, जंगल में मंगल देखे ॥५॥
वेद पढ़े कुरान पढ़े, पढ़ पढ़ कर उनको रट डाला।
आजिज हुए पड़ा है कैसे, कैसे मूँजियों से पाला।

अर्थ—(१) काबा के भीतरी भाग (२) निरंतर (३) मृत्यु से प्रलय तक (४) अद्वैत (५) द्वैत (६) भेद ज्ञाता।

तेग तअस्सुब की कहीं चमकी, पक्षपात का कहीं भाला।
नूर सदाकत[१] कहीं न पाया, समझा दाल में है काला।
चिल्ला खींच समाध लगाई, गार गुफा में चल देखे।
आखिर ऐसा जमाना आया, जंगल में मंगल देखे ॥६॥

इस तलाश से काम न निकला, तब आखिर में पछताये।
सोहबत में मुरशिद के पहुँचे, दिल में अपने घबराये।
उसने दिल की किताब पढ़ाई, दिल के राज कुछ समझाये।
दिल में दिलबर मिला तो, खुश होकर दिलदार के पास आये।
फिर नहीं देखी तीखी नजर, अबरू पै न किसी के न बल देखे।
आखिर ऐसा जमाना आया, जंगल में मंगल देखे ॥७॥

बिनती

(२१२ कुलसं० १११६)

तुम्हीं पिता और तुम्हीं हो माता,
तुम्हीं हो बहन और तुम्हीं हो भ्राता।
तुम्हीं हो धन धाम और सुख के दाता,
तुम्हीं हो परम पुरुष सतगुरु विधाता ॥
नहीं ज्ञान विद्या नहीं भक्ति करमा,
नहीं योग युक्ति नहीं ध्यान धरमा।
तुम्हीं मेरे हो जंत्र मंत्र और मरमा,
तुम्हारे ही संग से गये मन के भरमा ॥
झुकाया कमल पद में निज सिर को जाना,
मिली अब शरन पागया हूं ठिकाना।

अर्थ—(१) सच्चाई।

मिटा है सकल काम मद मोह माना,
छुटा है सहज जगत का आना जाना ॥

बचन को सुने रूप अपना पिछाना,
नहीं हो अलग मुझसे तुम मैंने जाना।

तुम्हारे ही गुन का है दिन रात गाना,
तुम्हारा ही है चित्र मन में समाना ॥

तुम्हीं हो योग और तुम आप युक्ति,
तुम्ही में है सद्गति तुम्ही में हैं मुक्ति।

मेरे तुम हो पुरुषार्थ बल और शक्ति,
सताते नहीं अब मुझे बन्ध मुक्ति ॥

नमो हां नमो राधास्वामी प्यारे,
हुये हो तुम अब मेरे आँखों के तारे।

रहूं मैं सदा आप ही के सहारे,
फिरूँ जगत में सारे दुख सुख बिसारे ॥

तेईसवीं धुन

प्रार्थना

(२१३)

धन्य धन्य दयाल सतगुरु, दीन हितकारी महा ।
चरन कमल की ओट गहकर, भक्त परमानंद लहा ॥
आप प्रगटे इस जगत में, जीव के उपकार को ।
निज दया से नाम देकर, किया जीव सुधार को ॥
कर्म धर्म और भरम और, अज्ञान दुख के मूल थे ।
यह हैं काटे कष्ट के और, जीव समझे फूल थे ॥
शब्दयोग की आप ही ने, आप दी शिक्षा हमें ।
सुगम रीति से मिलगई, भव तरन की दीक्षा हमें ॥
राधास्वामी सतगुरु, करुना सदन दे नाम दान ।
सहज में हमको उबारो, बख्शो अपना सत्यज्ञान ॥

॥ बसन्त ॥

[१-२१४]

देखो सखी आई ऋतु बसंत । बसो गुरु के पास करो दुख का अन्त ॥
प्रेम कमल बिगसे अनन्त । कोई ढूँढो चलकर साधु सन्त ॥
बस बस के बसो बसन्त बास । दुर्गन्धि जगत की जाये नास ॥
नहीं मन में उपजे क्रोध काम । रहे होठों पर राधास्वामी नाम ॥
सतसंग दुकान का गंधी खोज । करो चरन बास गह पद सरोज ॥
नर जनम बसंत है माघ मास । चहुँ ओर प्रेम की फूटी बास ॥

सीखो भक्ति भाव का रंग ढँग। करो माया काल को दंग तंग ॥
चौरासी फांस का बंध काट। लो साज भक्ति दल साज ठाठ ॥
सतसंग की महिमा अपार। बिन संग जाय न भरम विकार ॥
बसो सन्त पास सोई बसन्त। लो शब्द योग का सीख मन्त्र ॥
घट अन्तर जो अपने बसंत। वह समझे क्या है ऋतु बसंत ॥
बस बस कर प्रेम बास पास। बसो तब बसंत की पूरी आस ॥
बिन संत चरन के निकट बास। नहीं परमारथ की बुझे प्यास ॥
चुनो फूल कमल के गुथ के हार। दो प्रेम साथ गले गुरु के डार ॥
मिल छिड़को बसंत बसंती रंग। तब भीजे तुम्हारा अंग अंग ॥
जो यह बसंत समझाया गाय। कोई प्रेमी बसंत का मर्म पाय ॥
बसे बास पास जो खोज सन्त। बस उसी के लिये है ऋतु बसंत ॥
राधास्वामी ने भेद बताया सार। नहीं बूझे हिये का जो गँवार ॥

(२-२१५)

घट मांहि बसे राधास्वामी संत। मैंने समझा मूल बसन्त का तन्त ॥
जब लग घट निकट न बसे कंत। तब न बसन्त का सूझे मन्त ॥
बिन बसन्त सब जीव जन्त। चौरासी लच्छ रहे भरमन्त ॥
जब मन में बसे कोई आके सन्त। सब दुख कलेश का होय अन्त ॥
गुरु पास में बसना है बसन्त। भक्ति बास में बसना है बसन्त ॥
नहीं कोई बसन्त का अर्थ और। जो समझे पावे ठिकाना ठौर ॥
राधास्वामी मर्म लखाया आन। बसे सन्त शरन में कोई सुजान ॥

(३-२१६)

गुरु चरन जब लग बसन्त। तब लग समझो ऋतु बसन्त ॥
गुरु चरन बास बस बस बसंत। यही मेरे लिये सच्चा बसन्त ॥
जब लग नहीं बास निकट सन्त। तब लग कोई बूझे न ऋतु बसन्त ॥
भक्ति कुसुम की फैली बास। मैं आय बसा जब गुरु के पास ॥
सरसों फूली मस्ती की आय। मैं पड़ा गुरु के चरण धाय ॥

हुआ मोह भरम का आज अन्त । मिले ऋतु बसंत राधास्वामी कंत ॥
दिया सुरत शब्द का मूल मन्त । हुआ गुरु मन्दिर का मैं महन्त ॥
राधास्वामी धाम में पाय ठाम । लूँ छिन प्रति छिन राधास्वामी नाम
चौरासी का बन्धन कटाय । राधास्वामी कृपा निरवान पाय ॥

(४-२१७)

खेलो भक्ति फाग आया ऋतु बसंत । है राधास्वामी सतगुरु परमसंत ॥
चित उमगा प्रेम न हिये समाय । मैं चरण गुरु पड़ूँ धाय धाय ॥
नहीं काम क्रोध न मोह व्याप । मिटी चिन्ता दुविधा आज आप ॥
गुरु चरन शरन है मूल मन्त्र । जो गहे वही सच्चा महन्त ॥
राधास्वामी धाम में बास पाय । मैं समय बिताऊँ नाम गाय ॥

(५-२१८)

सिंध प्रेम मे गोते मार । गहो भक्ति मुक्ति मोती अपार ॥
यह मोती रतन अनमोल जान । जो पावे सोई भागवान ॥
चले कमल नीर गति चलन चाल । गुरु चरन लाग रहें नित निहाल ॥
नहीं व्यापे काल करम की गत । जो धारे राधास्वामी भक्ति का मत
धन उसका भाग जो पाये सन्त । बस राधास्वामी धाम खेले बसन्त ॥

(६-२१९)

बेचन निकसी रस प्रेम का ले । राधास्वामी सन्त मग में मिले ॥
एक पन्थ दो काज भया । व्यापे न गुजरिया को मोह माया ॥
खा माखन सार छाछ को त्याग । मेरी प्यारी गुजरिया के जागे भाग ॥
यह माखन गुरु की भक्ति जान । और छाछ जगत का लाभ हान ॥
राधास्वामी ने भक्ति का गुरु बताय । लिया प्यारी गुजरिया को अंग लगाय ॥

(७-२२०)

गुरु पद बास बसन्त जान । गुरु भक्ति सुबास बसन्त ज्ञान ॥
ऋतु बसन्त में खेल फाग । गुरु चरन पकड़ तज द्वेष राग ॥

भव दुख का करदे भक्त अन्त । तब जाने क्या है ऋतु बसन्त ॥
राधास्वामी दया से जागा भाग । वह धन्य जो भक्ति प्रेम रस पाग ॥

(८-२२१)

सुरत चढ़ी अधर अब तज के खंड । लख छांड दिया ब्रह्मांड अंड ॥
घट भीतर शब्द की धुन प्रचंड । वह कैसे ठहरे पिंड बंड ॥
माया मद हो गये अंड बंड । ब्रह्मांड के कर दिये खंड खंड ॥
नहीं काम दाम धन धाम दंड । महा काल का सब टूटा घमंड ॥
राधास्वामी दया जब हुई प्रचंड । कर्म जाल की रचना का भया भंड ॥

(९-२२२)

खेलो खेलो ऋतु आई बसन्त । बसो प्रेम बास मिल साध सन्त ॥
फूले बन में टेसू अनन्त । नहीं कुसुम फूल का आदि अन्त ॥
आनन्द मिला घट लखा कंत । सुरत सखी शब्द संग सुख करन्त ॥
ऋतु बसन्त है प्रेम पन्थ । नहीं जाने मन वाला महन्त ॥
राधास्वामी दया ले जीव जन्त । अब नहीं भव दुख निधि जल परंत ॥

दोहा

प्रेम बास से जो बसे, सोई बसन्त कहाय ।
बसे जो निकट में सन्त के, वह बसन्त सुख पाय ॥
यह बसन्त के अर्थ दो, समझे साध सुजान ।
यही अर्थ है मुख्य कर, दूजा गौण समान ॥

(१०-२२३)

गुरु बास सुबास से मन बसन्त, परमारथ का है सो बसन्त ॥
खुली आँख सहस दल कमल आय, त्रिकुटी चढ़ निरखा ओम जाय ।
किया जिसने चित से संग सन्त, परमारथ का है सो बसन्त ॥
गई सुन्न शिखर सुरत झूम झूम, मची सुन्न समाध की घट में धूम ।
हुआ काम क्रोध का यहां अन्त, परमारथ का है सो बसन्त ॥

सोहंग धुन बंसी बजाय, नसे माया काल के सब उपाय।
हुई मतवाली सुरत अब महंत, परमारथ का है सो बसन्त ॥
सद पद सत लोक में बजी बीन, लिया सुरत ने अपना रूप चीन्ह।
हुआ शब्द सुरत का सच्चा कंत, परमारथ का है सो बसन्त ॥
लख अलख को अगम की गम को पाय, तुर्या से पहुँची ऊँची जाय।
राधास्वामी पद में नित बसन्त, परमारथ का है सो बसन्त ॥

(११-२२४)

सुन फकीर आई ऋतु बसन्त की। धार हिये अब रीति संत की ॥
गुरु के पास बसे जो बसन्त। गुरु के वास बसे सो सन्त ॥
तू राधास्वामी के शरन में आया। चरन कमल में बासा पाया ॥
ऋतु बसन्त की यह एक रीत। पाल चरन की प्रेम प्रीत ॥
कर सतसंग विचार के साथ। तेरे सीस रहे गुरु का हाथ ॥

दोहे

धाम बसन्ता ग्राम है, वसे जो गांव बसन्त।
सन्त निकट आकर बसे, पावे पदवी सन्त ॥
इस बसन्त के तीन गुन, समझ समझ हरखाय।
मन में सोच विचार कर, तू मत धोका खाय ॥
कहता हूं कहजात हूं, कही सुनी मत मान।
कही सुनी प्रथम दशा, तीन गुनन की खान ॥
सत रज तम को निरख कर, गुन का कर व्यौहार।
सगुन रूप तेरा बने, सन्त मते का सार ॥
तम है दृढ़ता मूढ़ता, शिव के देह का गुन।
ज्ञान पाय दृढ़ मूढ़ हो, कथन को मेरे सुन ॥
भरत की दृढ़ता परख कर, हो जा मूढ़ के भाव।
तब आगे पग धार तू, सूझे सहज उपाय ॥

जान बूझ अनजान बन, ज्ञान पाय अज्ञान ।
बल पौरुष ले निबल हो, सो सच्चा बलवान ॥
फिर चल रज की राह पर, करम धरम व्यौहार ।
मूढ़ भाव करनी करे, धार हिये में प्यार ॥
करम करे करता नहीं, अभिमानी बिन मान ।
बिन बानी बातें करे, बिन पग चले सुजान ॥
बिना नैन दृष्टा बने, देखे बिमल बहार ।
परबत बन सब तै करे, बिन वाहन असवार ॥
सालोकी सामीपता, सारूपी चित धार ।
तीन गुनन का परख गुन, साँच बसन्त बिचार ॥
सत संगत में आय कर, बस जा मेरे पास ।
यह बसन्त का भेद है, धार गुरु की आस ॥

(१२-२२५)

सुन फकीर अब भेद अनूप । समझ बसन्त का दूजा रूप ॥
तिल से तेल फूल संग बासा । सो बसन्त है अगम अभासा ॥
फूल के संग मिले जब तेल । बसा बास तब बने फुलेल ॥
यह फुलेल सब के मन भावे । तिल का तेल न फूल कहावे ॥
राजा रानी के सिर चढ़े । सिर की पीड़ा तुरत ही हरे ॥
यह बसन्त है अगम अपारा । समझे कोई गुरु मुख प्यारा ॥
जीवन मुक्त दशा में बरते । देह गेह गहि उत्तम परखे ॥
अछत देह पावे निरवान । यह धुर पद यह सत पद जान ॥
जनक राज की फिरे दुहाई । ज्ञान मार्ग ऋषि मुनि सिखाई ॥
जीवन मुक्त विदेह अवस्था । इस बसन्त की धारे कथा ॥

दोहे

तीन गुनन के त्याग से, चौथे पद में आय ।
ताको सब कोई कहत है, सायुज गति सो पाय ॥

बस बसन्त के निकट में, धार ले रीति बसन्त।
चौथे पद में बास कर, छोड़ तीन का तन्त॥
ऐ फ़कीर आ पास में, गहले बास सुबास।
बस बस मेरे रूप में, हो सन्तों का दास॥

राधास्वामी राधास्वामी राधास्वामी गाना।
राधास्वामी राधास्वामी राधास्वामी ध्याना॥

राधास्वामी सन्त रूप धर आये।
तीन छोड़ चौथा पद गाये॥
राधास्वामी अगम अपार अमाना।
राधास्वामी अलख अथाह महाना॥

राधास्वामी धुरपद सतपद सांचा।
राधास्वामी लख फ़कीर तब नाचा॥
राधास्वामी सब हैं सब राधास्वामी।
राधास्वामी तब हैं अब राधास्वामी॥
राधास्वामी किरन भान राधास्वामी।
राधास्वामी देह जान राधास्वामी॥
राधास्वामी सिंधु बुन्द राधास्वामी।
राधास्वामी एक द्वन्द राधास्वामी॥

दोहे

भेद बसन्त बताय कर, सार बताऊँ तन्त।
इसका करदे अन्त अब, यह बसन्त बस अन्त॥
जो समझे इस भेद को, सोई दास फ़कीर।
ज्ञान करम का भेद लख, होजा मत का धीर॥
राधास्वामी की दया, हिये में धार फ़कीर।
होजा सबका पीर तू, समझ पराई पीर।

(१३-२२६)

सुन फकीर तोहि भेद सुनाऊँ। शब्दयोग खुलकर समझाऊँ॥
सहस कमल दल रहे अनेक। इस पद में नहीं सूझे एक॥
वह बिराट का रूप कहावे। दो प्रकार का शब्द सुनावे॥
ज्योति निरंजन माया ईश्वर। प्रगटे महा स्थूल रूप धर॥
सहस आँख और सहस कान हैं। सहस कला के यह स्थान हैं॥

देख बिराट की अगम छबि, चित में हो प्रसन्न।
तब त्रिकुटी की ओर चल, धर गुरु मूरत मन॥

त्रिकुटी पद में है ओम्कारा। त्रिलोकी का सार पसारा॥
अ उ म का शब्द रसाल। धुन प्रगटे सुन चित संभाल॥
लाली उषा दृष्टि में आई। सुरत देख देख हर्षाई॥
गुरु ने धारा लाल स्वरूप। श्रुति संयुक्त त्रिलोकी भूप॥
सत रज तम की धारा तीन। प्रगटी यहां से सुन सुन चीन्ह॥

वेद धाम प्रणव दशा, सहज उद्गीत का साज।
राग सुनावे अद्भुती, तीन त्रिपुटि दल साज॥

गुरु से भेद पाय चल आगे। सुरत प्रेम के रस में पागे॥
सुन्न शिखर चढ़ ध्यान लगावे। यहां द्वैत पद रूप दिखावे॥
ध्येय ध्याता और ज्ञानी ज्ञाता। सुन्न में द्वैत भाव रहे माता॥
किंगरी और सारंगी की धुन। दोय धार हुईं मुझसे सुन॥
पुरुप प्रकृति का अस्थाना। लीला रची बिचार महाना॥

यह सविकल्प समाधि का, धाम है मेरे फकीर।
योगी योग के सिद्धि से, देह की भूले पीर॥

महासुन्न तिस परे सुहाई। ब्रह्मरेन्द्र की चौकी भाई॥
घोर अँधेरा छाया जहां। गुरु बल ले सुरत चली वहां॥
प्रगटा सूर बिचित्र अपारा। उज्जल बिमल अमल अति प्यारा॥

मान सरोवर कर अस्नान। जाय लगाया गुरु का ध्यान ॥
लगी समाधि अखण्ड अनूप। नहीं वहां परजा नहीं वहाँ भूप ॥

निर्विकल्प पद तेहि निरख, यह अद्वैत का धाम।
साध ताहि तू सुरत से, ले ले गुरु का नाम ॥

कसरत असनियत और वहदत। तीनों का अति भेद है अद्भुत ॥
योगी ज्ञानी ऋषि मुनि भाई। इन तीनों में रहे लुभाई ॥
सत चित आनन्द में ठहराई। देह बुद्धि सुरत में भरमाई ॥
सत है देह योगी का योग। चित है मन ज्ञानी का सोग ॥
आनन्द ब्रह्म सुरत की लीला। माया काल ने उसको कीला ॥

तीनों तीनों में फँसे, सतगुरु मिला न कोय।
यह सब भूले आप में, गये भरम में खोय ॥

जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति तीन। सृष्टि स्थिति प्रलय चीन्ह ॥
कारण सूक्ष्म स्थूल को जान। जीव ईश और ब्रह्म पिछान ॥
स्थूल सूक्ष्म में रहे भुलाने। नहीं कोई पहुंचा ठौर ठिकाने ॥
तुर्यातीत का भेद न जाना। तुर्यातीत का मिला न ज्ञाना ॥
कैसे खोल खोल समझाऊँ। मिथ्यावाद को केहि विधि गाऊँ ॥

देह सत और कर्म हैं, मन चित ही है ज्ञान।
सुरत आनन्द का रूप है, यह विचार ले मान ॥

यहां तक सबकी गम है भाई। आगे की कोई खबर न पाई ॥
सुन सतगुरु का तू उपदेशा। आगे धाम में कर प्रवेशा ॥
भँवर गुफा की खिड़की खोल। सुन सोहंग की बंसी बोल ॥
माया काल का भेद पिछान। तब सतगुरु का पाये ज्ञान ॥
मन है ज्ञान चित मेरे भाई। बिचली दशा न जा भरमाई ॥

सच्ची तुर्या यहाँ मिले, तुर्यातीत परख।
दोनों की गम गुफा में, मन में अपने निरख ॥

चल आगे को मर्द फकीर। सतपद सतगुरु पद ले धीर ॥
बीन की धुन जहां प्रगटी सत सत। सत्तपुरुष का दरस परस तत ॥
यहाँ नहीं देह न गेह न माया। यहां नहीं सूरज चांद न छाया ॥
एक सत्त का भाव फकीरा। अलख अगम चल गहर गंभीरा ॥
राधास्वामी अचल मुकाम। यहां मिले सांचा बिसराम ॥

भेद बताया मूल यह, सन्त मते का सार।
सत संगत अभ्यास बिन, समझ बूझ से पार ॥
शब्द योग को साधकर, सुन संगत के बैन।
तब समझेगा तत्व को, तत्व भेद है सैन ॥
सैन बैन को जो लखे, सोई संत फकीर ॥
राधास्वामी की दया, नहिं व्यापे भव पीर ॥

बिनती

(२२७ कुलसं० ११३०)

गुरु धरा शीश पर हाथ, मन क्यों फिकर करे।
गुरु रक्षा हरदम संग, क्यों नहीं धीर धरे ॥
गुरु राखें राखनहार, इनसे काज सरे।
मेरी करें पक्ष दिन रात, उनसे काल डरे ॥
मेरे मात पिता गुरु देव, महिमा कौन करे।
राधास्वामी दीन दयाल, तुमसे काज सरे ॥

चौबीसवीं धुन

प्रार्थना

(२२८)

भक्ति दान गुरु दे मुझे, तू अन्तर्यामी ।
शीस झुके पद कमल में, बहु बार नमामी ॥
दाता दानी साइयाँ, सब का हितकारी ।
केहि विधि स्तुति मैं करूँ, तू अन्तर्यामी ॥
गुरु देवन का देव तू, घट घट का बासी ।
अगम अपार अखंड नित, सुखमय सुख रासी ॥
सत चित आनन्द रूप की, महिमा अति भारी ।
सहज अनादि अनंत विभु, को बरणे पारी ॥
अलख अगाध अथाह बहु, नहीं रंग न रूपा ।
राधास्वामी आदि गुरु, अज अमर अनूपा ॥

॥ होली ॥

(१-२२६)

होरी खेले सुरत सत संग ॥टेक॥

सहस कमल दल धूर उड़ाई, त्रिकुटी गुलाल का रंग ।
सुन्न स्वेत का पहरा बाना, भंवर राग सोहंग ।होरी०
सत पद बीन मधुर धुन बाजी, उपजी मन में उमंग ।
अलख अगम राधास्वामी गति परखी, काल भया दिल तंग ॥ ,,

घंटा शंख सरंगी बाजे, तबला और मृदंग।
बंसी शोर जोर कर व्यापा, कोटि कृष्ण रहे दंग ॥ ,,
नाचत सुरत अप्सरा प्यारी, धार भक्ति का ढंग।
थिक थिक थिक थिक थेई थेई, सूझी सहज उचंग ॥ ,,
राधास्वामी संग सुरत खेले होरी, अद्भुत अगम अभंग।
तन मन की सुध बुध सब भूली, पी पी प्रेम की भंग ॥ ,,

[२-२३०]

ठगनी आई ठगन संसार ॥टेक॥

रमा के रूप में विष्णु को लूटा, पारवती त्रिपुरार।
गायत्री बन ब्रह्म ही घाला, माया चंचल नार ॥ ठगनी०
भक्ति भाव लख भक्त लुभाने, ज्ञानी ज्ञान हंकार।
योगी ऋधि सिधि नौं निधि भूले, माया महा बरियार ॥ ,,
ब्राह्मण बरन गोत्र कुल पाखंड, चत्री भुज बल भार।
शूद्र मोह वैश्य धन दौलत, माया का भेस अपार ॥ ,,
माया अगुन सगुन की मूरत, निराकार साकार।
तीरथ बरत कर्म और धरमा, माया नरक विचार ॥ ,,
एक बचा सतगुरु का सेवक, टेक गुरु की धार।
राधास्वामी बल ले भया बलवाना, माया को दिया पछार ॥ ,,

(३-२३१)

होरी खेलत सुरत नई ॥टेक॥

शब्द सुनत बनी शब्द की मूरत, शब्द के धाम गई।
शब्द में शब्द शब्द लखपाया, सब कुछ शब्द मई ॥
जैसे जल में कमल निरालम, मुरगाबी निशानिये।
सुरत शब्द भवसागर तरिये, नानक नाम बखानिये ॥होरी०
शब्द समानी सूरत प्यारी, शब्द सुने जो कई।
सुन धुन छाँट विवेक विचारा, बहुर अशब्द भई ॥ ,,

जाप मरे अजपा मरे, अनहद भी मर जाय।
सुरत समानी शब्द में, ताहि काल नहीं खाये ॥ ,,
राधास्वामी ऐसी खेलाई होरी, चरन शरन में लई।
दुबिधा द्वन्द विकार नसाया, रहा न प्रान रई ॥
सत तक रूप रंग की रेखा, आगे चढ़कर कुछ नहीं देखा।
जो कोई इतने ऊँचे चढ़े, रूप रंग रेखा से टरे ॥ ,,

(४-२३२)

जगत से नाता तोड़, सुरत आज खेलत होरी ॥टेक॥
माया के घर आग लगाई, काल करम सिर फोरी।
काम क्रोध की खाक उड़ाई, मोह से मुख को मोरी ॥सुरत आज०
तत्व विवेक हाथ पिचकारी, प्रेम का रंग भरो री।
बुक्का श्वेत शुद्ध भक्ति का, गुरु के चरन छिरकोरी ॥ ,,
प्रीत वस्त्र से अंग सजाया, श्रद्धा गुलाल मलो री।
नाचत गावत धूम मचावत, शोर अकास गयो री ॥ ,,
ठुमक ठुमक थिरकत पग धारत, सत पुर ओर चलो री।
सुरत सुहागिन निरत रूप धर, गुरु आगे मचलो री ॥ ,,
घुमर घुमर राधास्वामी परिक्रमा, उमंग से पद पकरोरी।
गाय ध्याय कर भक्ति भाव का, फगुवा माँग लियोरी ॥ ,,

(५-२३३)

खेलूँ अनहद फाग अपार ॥टेक॥
दुख नहीं व्यापे मोह न मोहे, उपजे न भरम विकार।
राधास्वामी नाम का सुमिरन निसदिन, गुरुपद प्रेम पियार ॥खे०
राधास्वामी इष्ट का ध्यान रहे घट, देखे ज्योत अपार।
गुरु की मूरत हिये विराजे, त्याग के सोच विचार ॥ ,,
घंटा शंख बजे मेरे अन्तर, प्रगटे धुन झनकार।
राधास्वामी शब्द गूँज रहा सिर में, पल छिन बारम्बार ॥ ,,

(६-२३४)

होली खेल ले दिन चार ॥टेक॥
फागुन मस्त महीना आया, पिया संग धर उर प्यार ।
चरन लाग तन मन की सुध बुध, त्याग प्रेम चित धार ॥ होली०
दोऊ नयन की बना पिचकारी, भक्ति रंग बहार ।
हँस हँस गा गा भर भर छिन छिन, पिया के अंग पर डार ॥ ,,
सुरत की चतुर सियानी गुजरिया, तन मन सकल सिंगार ।
राधास्वामी अपने पिया को रिझाले, सुन्दर अबला नार ॥

(७-२३५)

होली खेलूँ चरन गुरु लाग ॥टेक॥
जग की मोह नींद नहीं व्यापे, सत संगत में जाग ।
वचन विलास भजन और सुमिरन, गाऊँ अनहद राग ॥ होली०
मन पर करूँ पल पल असवारी, फेर निरोध की बाग ।
गुरु के पन्थ किया पयाना, चित धर सहज विराग ॥ ,,
सेवक रूप में पद की सेवा, फगुवा भक्ति का माँग ।
चिंता भरम की ओर न चालूँ, धर श्रद्धा अनुराग ॥ ,,
प्रेम भंग पी मस्त रहूं नित, भरम विकार को त्याग ।
राधास्वामी धाम की रहे परिक्रमा, यह मेरा अद्‌भुत भाग ॥ ,,

(८-२३६)

होली खेलूँ रंग भरी ॥टेक॥
आलस नींद प्रमाद को त्यागूँ, चित गुरु चरन धरी ।
सुमिरन भजन ध्यान घट भीतर, तन मन सुध बिसरी ॥
जग चिंता की धूर उड़ाई, माया देख मरी ।
प्रेम गुलाल मला जब मुख पर, काल की गति बिगरी ॥ ,,
अनहद धुन का हुआ दिवाना, मोह की बिपत हरी ।
थिक थिक थिक थिक थेई थेई थेई, नाचत सुरत परी ॥ ,,

मेरी होली है सबसे न्यारी, सच्ची सहज खरी।
कोई कोई जाने साध सुजाना, धुन जेहि कान परी ॥ होली०
राधास्वामी संग यह फाग रचाया, माया संग लरी।
सुरत निरत ले कुल परिवारा, भव के सिंध तरी ॥ ,,

(९-२३७)

होली खेल ले आये फागुन के दिन चार ॥टेक॥
यह नर जनम फाग की ऋतु है, सुगम सुहेल अपार।
प्रेम गुलाल अबीर भक्ति का, बुक्का प्रीत पियार ॥ होली०
अनहद धुन का राग सुहाना, मस्ती विवेक विचार।
खेल खेल में दोनों सुधरे, परमारथ व्यौहार ॥ ,,
गुरु का सतसंग राग अखाड़ा, बाजे घट झनकार।
सुरत की चाल को नाच समझ ले, सुखमन तार सितार ॥ ,,
सहस कमल घंटा मृदुबानी, त्रिकुटी ताल ओम्कार।
सुन्न सारंगी भँवर में बंसी, सत पद बीन का सार ॥ ,,
यह होली कोई गुरु मुख खेले, त्यागे भरम विकार।
रह अचिन्त गुरु चरन कमल लग, राधास्वामी की बलिहार ॥ ,,

(१०-२३८)

होली आई खेल ले फाग ॥टेक॥
पुरुष प्रकृति का ब्याह रचा है, जागे सबके भाग।
पुरुष लाल रंग बाना धारा, प्रकृति बसन्ति सुहाग ॥ होली०
सूरज चाँद नक्षत्र बराती, गाते मंगल राग।
अनहद धुन का शोर मचा है, बाजे प्रेम अनुराग ॥ ,,
ममता मोह घोड़ा असवारी, मोड़ हिये की बाग।
निश्चल दृढ़ भक्ति के हाथी, ऊँट त्याग वैराग ॥ ,,
सुरत शिरोमनि नाचन लागी, मोह नींद से जाग।
चित विरती का किया निरोधा, गुरु चरनन से लाग ॥ ,,

प्रीत समाज की सजी बराता, सुन्दर सहज सुभाग।
राधास्वामी पद मंडप अस्थाना, ब्याह भक्ति का फाग॥ होली०

(११-२३६)

होरी ब्रज में कैसी मचोरी ॥टेक॥

यह ब्रज भूमी ब्रज का मंडल, अद्भुत साज सजोरी।
नंद आनन्द यशोदा प्रकृति घर, मन कान्हा प्रगटोरी॥ होरी०
इन्द्री गोप गोपी संग मिल जुल, रास विहार रचोरी।
सुरत सार माखन रस चाहे, नित प्रति उठ करे चोरी॥ ,,
जमुना करम धरम की धारा, बिटप विराट लखोरी।
चीर हरी गोपिन की सारी, कदम्ब के गाछ चढ़ोरी॥ ,,
सखा गोप ले ग्वाल मंडली, करम खेल बिलसोरी।
काली दह में गेंद गिरी जब, उछल के कूद परो री॥ ,,
विषधर नाग मलिन मनकी गति, फन पर अभय चढ़ोरी।
बंसी बट बंसी धुन गाई, थिरक थिरक नाचो री॥ ,,
राधा सुरत के रूप पे मोहा, अंग संग अपने कियो री।
मथुरा नगर कंस अज्ञाना, ताहि मार नासो री॥ ,,
कर अज्ञान का नास कृष्ण सोई, दसम द्वार पहुँचो री।
का है ब्रह्म द्वार दरवाजा, द्वारका जाये धसो री॥ ,,
सोहंग सोहंग मुरली बजावे, सोहंग धाम लियो री।
ओम के ऊपर सोहंग की गति, भँवर गुफा मचलोरी॥ ,,
यह होरी ब्रज भँवर की होरी, कोई कोई साधू कहो री।
राधास्वामी संग सार हम पाया, सत पद खेल गयो री॥ ,,

(१२-२४०)

खेली चित प्रसन्न, आज अन्तर घट होली ॥टेक॥

सहस कमल में धँसी उमंग से, सुरत निरत की टोली।
गुरु पद ओमकार जा पहुँची, त्रिकुटी महल में डोली॥ खेली०

लाल गुलाल प्रेम रंग भरकर, हिये पिचकारी खोली ।
तक तक मारा गुरु के चरनन, बुक्के की उल्टी झोली ॥ खेली०

फाग राग मंगल मृदुबानी, ओम् शब्द धुन बोली ।
गाय रिझाय मनाय गुरु को, दृष्टि दृष्टि से तोली ॥ ,,

हृदय पात्र में भंग भाव की, साहस जल में घोली ।
पीते ही तन की सुध बिसरी, सूझी सहज ठिठोली ॥ ,,

गिरत पड़त झूमत पग धारत, चरन शरन में रोली ।
राधास्वामी अंग लिया लपटाई, समझ सुरत को भोली ॥ ,,

(१३-२४१)

खेल री अपने घट होरी ॥टेक॥
चित की दुचिता जला दे मन से, दुविधा से नाता तोरी ।
शम दम साध के कर सतसंगत, नेह गुरु से जोरी ॥ खेल री०
प्रपंच से मुख मोरी ॥
बचन विलास सेवा और पूजा, सतसंग चित धरो री ।
बाहर मुखी बिरती को त्यागो, अन्तर मुखी गहो री ॥
दर्शन गुरु घट में करो री ॥ ,,
काम क्रोध को आग लगाई, जरबर भस्म भयो री ।
भक्ति भाव अबीर गुलाला, गुरु पद में छिरकोरी ॥
मान की मटकी फोरी ॥ ,,
शंख मृदंग बजा कर अन्तर, फाग राग गायो री ।
अनहद धुन व्यापी घट भीतर, अमृत भंग पियो री ॥
बुद्धि मति हो गई भोरी ॥ ,,
यह होरी कोई साधु खेले, गुरु गम ज्ञान लियो री ।
राधास्वामी पद बिसराम मिले तब, यम भयत्रास गयोरी ॥
करे माया न ठगोरी ॥ ,,

(१४-२४२)

सुरत प्यारी होरी खेले आज नई ।।टेक।।

अपने गुरु की बनी है पियारी, प्रेम प्रतीत मई ।
भजन ध्यान सुमिरन को चित दे, मन में मगन भई ।। सुरत०
प्यार अबीर गुलाल हाथ ले, प्रीत पिचकारी गही ।
गुरु के चरन छिड़क निस बासर, सुख आनन्द लही ।। ,,
गुरु समान कोई दृष्टि न आवे, गुरु गम ज्ञान लही ।
नाचे उमंग से लज्जा तज कर, थिक थिक थेई थेई ।। ,,
राधास्वामी गुरु ने अंग लगाया, भक्ति दान दई ।
सुरत प्यारी हुई गुरु पियारी, गुरु की गोद रही ।। ,,

(१५-२४३)

खेल न जाने होरी, सुरत जो मति की भोरी ।।टेक।।

विरती न रोके मन नहीं सोधे, चित गुरु चरनन जोरी ।
सुने न फाग राग अन्तर घट, अनहद होरी मचोरी ।। सुरत जो०
मन के हाथ नहीं पिचकारी, रंग उमंग न भरो री ।
ऊँचे चढ़ कर इष्ट रूप का, दरस परस न करो री ।। ,,
शम दम की कुछ कर ले कमाई, आलस नींद तजो री ।
तब दरशन राधास्वामी का पावे, अद्भुत ज्योत लखो री ।। ,,

(१६-२४४)

आंखों ने होली सिखाई, हाँ तेरी आंखों ने होली सिखाई ।।टेक।।

जब से रूप का दर्शन पाया, सुध बुध सब बिसराई ।
मतवाला बन झूम रहा हूं, भूली अपनी पराई ।
नहि चित में दुचिताई ।। हां तेरी०
आंख में अमृत विष है तेरे, आंख में मद मदताई ।
देखत जियत मरत मदमातत, दशा विचित्र बनाई ।
लखे कोई ज्ञानी आई ।। ,,

आँख में तीन रंग के डोरे, लाल स्वेत कजराई।
जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति अवस्था, दृष्टि में तेरे समाई।
कहे कोई कैसे बनाई ॥ हां तेरी०
आंख में सृष्टि प्रलय और उत्पति, रचना रचत रचाई।
ब्रह्मा विष्णु महेश तीन मिल, अपनी रीति चलाई।
मरम कोई जान न पाई ॥ ,,
बुक्का गुलाल अबीर आंख में, झोली विचित्र सजाई।
दृष्टि हाथ पिचकारी से छिड़का, गुरु चरनन चितलाई।
भेद राधास्वामी बताई ॥ ,,

[१७-२४५]

होली होली होनी जो थी गुरु कृपा होली ॥टेक॥
सत रज तम की खाक उड़ाई, अबीर प्रेम की घोली।
गुरु के चरन मार पिचकारी, निज ममता सब धोली ॥होली०
जिभ्या कान आंख को मीचा, अन्तर के पट खोली।
भूल राग जग के अन्तर में, अनहद की धुन बोली ॥ ,,
प्रीत रीत के रंग रंगी है, तन की मन की चोली,
सब विधि भक्ति रंग से भरली, हिया की अपनी झोली ॥ ,,
फगुवा खेलत फाग मनावत, आई सुरत की टोली।
शब्द सुहाने गावन लागी, अन्तर मुख को खोली ॥ ,,
राधास्वामी रंग रंगाया, दे सिर माथे रोली।
अब तो रंग गई गुरु के रंग से, मेरी सूरत भोली ॥ ,,

[१८-२४६]

सुरत आज खेलत फाग नई ॥टेक॥
आये बसन्त कंत मुख देखा, आनन्द धूम मची।
काल करम का चुका है लेखा, अब गुरु रंग रची।
माया मौन भई ॥ सुरत०

अचल सुहाग दिया गुरु पूरे, प्रेम के बास बसी।
मोती हीरे निछावर कीन्हे, मुखड़ा देख हँसी।
मंगल प्रेम मई ॥ ,,
राधास्वामी फाग रचाया, अद्भुत अगम महा।
बाजी गत प्रगटी धुन अद्भुत, हर्ष हुलास लहा।
चिन्ता सकल गई ॥

[१६-२४७]

सखी मेरी न्यारी है सबसे होली ॥टेक॥
सबकी होली पुरानी लीक है, मेरी तो है बर होली।
बिरह की आग कलेजे भड़के, जल रहे पंजर झोली ॥ सखी०
ज्वाला न फूटे धुवां न निकसे, समझे कौन मेरी बोली।
आंखों की पिचकारी बनी है, रक्त रंग हिया घोली ॥ ,,
बिरह की होली की धूम मची है, ब्रज की ठिठोली।
तन मन की नहीं सुध कुछ मुझको, खाली प्रेम की गोली ॥ ,,
भग धतूरे की मस्ती नहीं है, यह है मस्ती अतोली।
और तो डफ मृदंग बजावें, तन मेर ढोल अडोली ॥ ,,
नस नाड़ी का तार बना है, इन्द्री है फाग की टोली।
मति गति अनहद राग अनोखे, गाती है सुरत भोली ॥ सखी०
हिया जिया उमंग प्रेम से भरा है, भरम की गुंडी खोली।
राधास्वामी चरन धूर का टीका, यह मस्तक की रोली ॥ ,,
सच्ची होली मेरी सजनी, और है आंख मिचोली।
राधास्वामी संग खेल रही निसदिन, होली होली होली ॥ ,,

[२०-२४८]

खेले होली सुरतिया उमंग भरी ॥टेक॥
इंगला पिंगला त्याग के दोनों, सुखमन मध्य सिधाई।
केसर तिलक थाल भ्रूमध्य में, त्रिकुटी गढ़ चढ़ धाई ॥ खेले०

घंटा शंख पखावज बाजें, ओम की धुन सुन पाई।
गुरु चेले का साथ हुआ है, सुन्न सरोवर आई ॥ खेले०
सारंग सारंग धूम मची जब, भँवर की खिड़की निरखी।
चन्द्र सूर घट तारे चमके, अपनी गति मति परखी ॥ ,,
नाची नाच सुहाना घट में, गा गा अनहद बानी।
सतपद गूँज रही धुन बानी, हुई सहज निरवानी ॥ ,,
अलख अगम के पार ठिकाना, थिरकत ठुमकत नाची।
राधास्वामी धाम में पाया बासा, भक्ति अंग संग रांची। ,,

(२१-२४६)

सुन्दर फाग रचाया, सुरत मेरी खेले होली ॥टेक॥
होली जलाई खाक उड़ाई, माया की करी ठिठोली।
काल कर्म को माटी मिलाई, चढ़ी शब्द की डोली ॥ सुरत०
रज का गुलाल मला मुख ऊपर, मस्तक प्रेम की रोली।
पृथ्वी छोड़ गगन चढ़ धाई, शब्द अनाहद बोली ॥ ,,
सतसंगत सत सगुन के संग में, सत सत्ता की बानी।
गुरु के बचन का श्रवन मनन नित, निध्यासन निरबानी ॥
सुमिरन भजन ध्यान रस पागी, एकरस जीवन व्यापा।
सुरत शिरोमनि लख निज आपा, परख लिया निज आपा ॥ ,,
तीन त्याग चौथे पद आई, गुरु के बचन प्रमाना।
शब्द अनुमान प्रमान लखे सब, प्रगटा हिये सत ज्ञाना ॥ ,,
तीन त्रिलोकी का नाता तोड़ा, अ उ म गति बूझी।
सोचा समझा विचारा मन में, अलख अगम की सूझी ॥ ,,
तीन त्रिलोकी में नाम कहां है, चौथे नाम का बासा।
कोई कोई जाने साधु विवेकी, त्याग त्रिलोकी आसा ॥ ,,
जो कोई तीन की आसा धारे, चौथे पद नहीं आवे।
सुमिरन भजन ध्यान गहि राखे, तब चौथे पद पावे ॥ ,,

सतसंगी बने साध की गति ले, हंस भाव चित लावे।
शब्द नीर को मन कर छाने, परम हंस गति पावे ॥ सुरत०
इन चारों के ऊपर भाई, संत की पदवी आई।
नाम रहे सतगुरु आधीना, राधास्वामी भेद बताई ॥ ,,
कोई कोई परखे राधास्वामी बैना, नैना रटन लगावे।
तब सत मत का सार पिछाने, जीते मुक्ति मनावे ॥ ,,

[२२-२५०]

होली होली होली होली, सुरत खेले भक्ति की होली ॥टेक॥
काल कर्म माया ने सब बिधि, जग में दिया भकोली।
तब सूरत को सुरता आई, त्यागी आंख मिचोली ॥ सुरत०
शारद शेष गनेश महेशा, ब्रह्मा विष्णु की टोली।
यह नहीं जाने मरम संतों का, मरम नहीं है ठिठोली ॥ ,,
पुस्तक पोथी में भेद कहां है, भेद है संत की झोली।
घट झोली रहे ज्ञान अबीरा, प्रेम गुलाल की गोली ॥ ,,
भौं के मध्य पाये पिचकारी, गुरु चरनन झकझोली।
गावे आनन्द राग सुहाना, निरख सन्त मत बोली ॥ ,,
पीकर प्याला नाम अमीरस, हो रहे बारी भोली।
नशा न उतरे प्रेम भंग का, घट प्याले में घोली ॥ ,,
चित की वृत्ति निरोध किया तब, होगई अटल अडोली।
तब आई गुरु की शरनागत, चरन छांह में डोली ॥ ,,
सहजे सहजे फेरो मन को, जैसे पान तम्बोली।
राधास्वामी गुरु ने अंग लगाया, जो होनी थी होली ॥ ,,

(२३-२५१)

खेले सुरत आज सतज्ञान की होली ॥टेक॥
शब्द का श्रवन मनन अर्थ का, आशय का निदिध्यासन।
भजन ध्यान सुमिरन की यह विधि, हो रही अमल अतोली ॥ खेले०

सतसंगत में गुरु के आई, नाम वाक्य चित धारा।
घट में विवेक विचार संभारा, अनहद धुन तब बोली ॥ खेले०

ज्ञान भक्ति में भेद नहीं कुछ, कोई कोई बिरला जाने।
सुरत सखी पहनी जब चित से, गुरुमुखता की चोली ॥ ,,

दम इन्द्रिन का शम निज मन का, समाधान संशय का।
भक्ति मुक्ति इच्छा उपजे चित, यह सिद्धांत अमोली ॥ ,,

चौसाधन बिन ज्ञान है निष्फल, नहीं अधिकारी कोई।
महावाक्य की बिधि तब सूझे, ज्ञान का परदा खोली ॥ ,,

गुरुमुख शब्द वाच है सांचा, लख गुरु का रूपा।
पिये भंग चिन्तन का नित ही, प्रेम के जल में घोली ॥ ,,

अधिष्ठान में वृत्ति जमावे, रहे मगन मन अपने।
शब्द ओम्‌कार सुरत घट निर्मल, सत पद जाय टटोली ॥ ,,

सुन्न शिखर पर ध्यान जमावे, भँवर में बंसी बजावे।
सतपद में करे सदा निवासा, अमल विमल सुरत भोली ॥ ,,

यहि विधि होली खेले सजनी, नाम संग गुरु साथा।
राधास्वामी दया रूप तब दरसे, लगे समाधि अडोली ॥ ,,

(२४-२५२)

होली आई खेले फाग, सुरतिया सुहाग भरी ॥टेक॥

दोऊ आँखों की बनी पिचकारी, प्रेम रंग भरपूर।
तक तक गुरु मूरति पर छिड़का, भक्ति दृष्टि से धूर ॥ सुरतिया

हिये की झोली गुलाल प्रीति का, बुक्का भाव सुहाना।
गोला कुमकुम फेंक के मारा, रूप बनाया निशाना ॥ ,,

अनहद राग फाग धुन लागी, साज भक्ति की होली।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, सुरत सुहागिन भोली ॥ ,,

(२५-२५३)

होली आई खेले फाग, सुरतिया सुहाग भरी ॥टेक॥
सोलह श्रृंगार के भूषन पहने, साड़ी प्रीत की धारी।
प्रेम अबीर गुलाल भक्ति ले, ठुमक चली मतवारी॥ होली०
तिल पर सहस्र कमल का बिंदा, माथे टीका त्रिकुटी।
सुन्न की टिकली सोहे मध्य में, भँवर की झूमर प्रगटी॥ ,,
भक्ति सेंदूर से माँग भराई, सत मोतिन लड़ माला।
राधास्वामी चरन परिक्रमा फिरती, सुरति नारि बर वाला॥ ,,

बिनती

(२५४ कुल सं० ११५६)

आंख में रूप अनूप बिराजे, जिभ्या पर तेरा नाम रहे।
मन में तेरा भजन ध्यान हो, इसीसे मुझको काम रहे॥
जो कुछ देखूँ तेरी हो लीला, जो कुछ कहूं हो नाम तेरा।
जो कुछ करूँ हो सेवा तेरी, सुमिरन आठों याम तेरा॥
राधास्वामी सतगुरु पूरे, दया दृष्टि मुझ पर कीजे।
जग के मोह जाल कटवाकर, चरन शरन में लीजे॥

पच्चीसवीं धुन

प्रार्थना

(२५४)

करम भोग अति कर सहे, पाया विपति कलेश।
दाता अब तो दया कर, पहुंचूँ सत के देश ।।
काल करम व्यापे नहीं, मिटे मोह संसार।
सहजे ही भव सिंध से, कर बेड़े को पार ।।
ज्ञान ज्ञान का ज्ञान तू, ध्यान ध्यान का ध्यान।
तेरी कृपा महान से, छूटे सब अज्ञान ।।
तुझ में बल और शक्ति है, तू है शक्तिवान।
अपने बल और शक्ति से, मेरा लगादे ठिकान ।।
राधास्वामी आदि गुरु, अब कर मेरी सहाय।
सुरत बहिरमुख ना रहे, अन्तरमुख बन जाय ।।

सोहर

(१-२५५)

बरसत धार अखण्ड, बूँद बिन पानी हो।
ललना, उठत फुहार, सुरत मुसकानी हो ।।१।।
बिन बाती बिन दीप, ज्योत प्रकासे हो।
ललना, ज्योत ज्योत विचित्र, प्रकाश विकासे हो ।।२।।
लीला अगम अथाह, अगाध की खानी हो।
ललना, देखि सुरत हैरान, चकित मन बानी हो ।।३।।

हरखि हरखि हरखान, न जाय बखानी हो।
ललना, जाने कैसे असन्त, सन्त कोई जानी हो ॥४॥
भाग्यवती बरनारि, बिलास बिलासी हो।
ललना, हुलसी हुलसी हुलास, हटी भव त्रासी हो ॥४॥

(२-२५६)

ब्रह्मा चौ मुख हीन, वेद मत सृष्टि हो।
ललना, हंस समान उड़ान, नयन बिन दृष्टि हो ॥१॥
बिना शंख का विष्णु, नाद धुनि गाजे हो।
ललना, गदा पदम नहीं चक्र, बजावे बाजे हो ॥२॥
बिन त्रिशूल का शम्भु, जगत संहारा हो।
ललना, बिना सीस का शेष, धरे महि भारा हो ॥३॥
मुख बिन बानी बोल, पांव बिन चाले हो।
ललना, बिनकर करे सुकर्म, कृपाल दयाला हो ॥४॥
भाग्यवती बरनारि, देखि हरखानी हो।
ललना, लखि लखि अलख विलास, हिया मगनानी हो ॥५॥

(३-२५७)

है कोई साध सुजान, शब्द अर्थ जाने हो।
ललना, भाग्यवती मनमान, मन ही मन माने हो ॥१॥
बुंद सिंध के रूप, सिंध गति सोहे हो।
ललना, भाग्यवती लख दशा, मगन मन मोहे हो ॥२॥
किरन में भानु प्रकासे, किरन भई भानु हो।
ललना, भाग्यवती के भाव, दोऊ एक ठानू हो ॥३॥
जीव में ब्रह्म समान, ब्रह्म जीव खानी हो।
ललना, भाग्यवती सब जान, भई असमानी हो ॥४॥
पृथवी अकास विराज, पिंड ब्रह्मांडा हो।
ललना, भाग्यवती चढ़ी गगन, किया खंड खंडा हो ॥५॥

[४-२५८]

गोद में मचल दयाल, खेल नित खेले हो।
ललना, भाग्यवती है निहाल, मेल सत मेले हो ॥१॥
गोद में बाल गोपाल, घर में ढिंडोरा हो।
ललना, भाग्यवती लखि हाल, चकित मन मेरा हो ॥२॥
बालक खेले गोद, खोज कहां कीजे हो।
ललना, भाग्यवती कर दृष्टि, प्रेम रस भीजे हो ॥३॥
गर्भ में बालक आय, गर्भ के बाहर हो।
ललना, भाग्यवती घट देखे, यहां वहां जाहिर हो ॥४॥
अन्तर बाहर एक, एक में एकी हो।
ललना, भाग्यवती रही झूम, 'दयाल' की टेकी हो ॥५॥

[५-२४९]

सहस कमल दल मांह, चन्द्र रवि तारा हो।
ललना, भाग्यवती चढ़ि देख, निरंजन द्वारा हो ॥१॥
त्रिकुटी महल्ल गुरु धाम, ओम धुन बानी हो।
ललना, भाग्यवती सुन कान, वेद परमानी हो ॥२॥
सुन्न शिखर अस्थान, अर्धशशी ज्योती हो।
ललना, भाग्यवती लखि रूप, समाहित होती हो ॥३॥
भँवर गुफा के बीच, बांसरी बाजी हो।
ललना, भाग्यवती सुन कान, सोहमस्मि राजी हो ॥४॥
सत्त लोक धुनबीन, अनोखी निराली हो।
ललना, भाग्यवती सुरतनारि, भई मतवाली हो ॥५॥

[६-२६०]

चुवत अमी रस बूंद, छमा छम बरसे हो।
ललना, भूमी पताल अघाय, पपीहा तरसे हो ॥१॥
प्रगटे दयाल कृपाल, दया की खानी हो।

ललना, दीन अधीन निहाल, दुखी अभिमानी हो ॥२॥
उदय प्रभात का सूर, कमल मुस्काने हो।
ललना, उल्लू गेदुरा डरे, वृक्ष में लुकाने हो ॥३॥
भाग्यवती लखि दशा, विचार परायन हो।
ललना, भाग्य सराहत धाय, परी गुरु पायन हो ॥३॥
बरस बरस चहुँ ओर, दया का पानी हो।
ललना, रिमझिम चहुंदिस होय सुरत मगनानी हो ॥५॥
देह की चूनर भीज, ताप त्रय हारी हो।
ललना, चरन दयाल के पाय, सन्त मत धारी हो ॥६॥
गुरु दयाल खिलाय, बाल गति सोहे हो।
ललना भाग्यवती का भाग, अलख लखि मोहे हो ॥७॥

(७-२६१)

बरसत धार अखण्ड, सुधा रस पानी हो।
ललना, धार में उठत फुहार, शब्द संग बानी हो ॥१॥
चमकत ज्योत अपार, ज्योत की खानी हो।
ललना, रवि शशि गयलें लजाय, दृश्य असमानी हो ॥२॥
बिन बाती जले दिया, दिया परमानी हो।
ललना, सूझे पिंड ब्रह्मांड, अकथ सो अगम कहानी हो ॥३॥
भीज रही सुरत नार, अंग नहीं पानी हो।
ललना, सुरत निरत के रूप, सहज मुसकानी हो ॥४॥
घट में अघट का पन्थ, चले गुरु ज्ञानी हो।
ललना, बूझे बिरला भेद, साधु कोई सन्त सुजानी हो ॥५॥
शब्द सुरत की बात, शब्द अलगानी हो।
ललना, अटक भटक मिट जाय, अधर लटकानी हो ॥६॥
कमल नीर की रहनी, जल पंछी जानी हो।
ललना, जो कोई बूझे भेद, बने निरबानी हो ॥७॥

ब्रह्मा विष्णु महेश, न गति यह जानी हो।
ललना, क्योंकर कहे सुनाय, कोई नर ज्ञानी हो ॥८॥
भाग्यवती नित सुने, यह राग पुरानी हो।
ललना, सुन सुन रीझे सन्त जन, मुनि ज्ञानी हो ॥९॥

[८-२६२]

प्रगट भईलें राधास्वामी, ध्यान गर्भ फूटल हो।
ललना, दरस परस सत्कार, जगत जस लूटल हो ॥१॥
चहुँ दिस मंगल राग, नाद धुनि गाजल हो।
ललना, त्रिकुटी महल अपार, अनाहद बाजल हो ॥२॥
सुरत सखी रही झूम, मगन मन नाचल हो।
ललना, पी पी अमृत रस सार, निरत रहि मातल हो ॥
पंडित वेद उचारि के, चौक पुरायल हो।
ललना, बन्दनवार सजाय, द्वार बंधायल हो ॥४॥
छवि पर बल बल जाय, उमंग बढ़ावल हो।
ललना, भाग्यवती बन याचक, भक्ति बर मांगल हो ॥५॥

(९-२६३)

कहां कहां गईलिउं, कहां कहाँ नित भरमइलिउँ हो।
ललना, देवी पितर मनवलिउं, जती सती पुजलिउँ हो ॥१॥
बाम्हन विप्र जेवइलिउँ, बरत बहु करलिउँ हो।
ललना, घूमेउँ देस विदेस, मन में पछतइलिउँ हो ॥२॥
निकसल एक न काम, चित्त में लजइलिउँ हो।
ललना, जंतर मंतर करइलिउँ, बयस बितइलिउँ हो ॥३॥
इहवां उहवाँ फिरइलिउँ, धूरि उड़इलिउँ हो।
ललना, अन्त मिलेन गुरुदेव, जन्म फल पवइलिउँ हो ॥४॥
घट कई खुलाल कपाट, घटहि में पइठलिउँ हो।
ललना, घट में ठाकुर द्वार, घटहि गुरु पवलिउँ हो ॥५॥
प्रगटल ज्योत अनंत आरती कइलिउँ हो।

ललना, बाजल अनन्द बधाव, हरखि हरखइलिउँ हो ॥६॥
धनि धनि सतगुरु देव, चरन में अइलिउँ हो।
ललना, भाग्यवती सुखी भइलिउँ, तब भाग सरहलिउँ हो ॥७॥

(१०-२६४)

सुमिर सुमिर राधास्वामी, नाम अमोला हो।
ललना, आय गई नभ पार, सुन्न के हिंडोला हो ॥१॥
धूम मचो अति घोर, ररंग मृदु बानी हो।
ललना, प्रगटा चन्द्र ललाट, स्वेत की निशानी हो ॥२॥
चन्द्र मौली सुरत बनी, समाधि रचाई हो।
ललना, काल भया तब मौन, मौन माया माई हो ॥३॥
बिस्माधी अस्थान, सूझ नहिं सूझे हो।
ललना, लखे सुसन्त सुजान, साध कोई बूझे हो ॥४॥
भाग्यवती को देख, दयाल बतावे हो।
ललना, यह नहीं ठहरन धाम, महासुन्न धावे हो॥ ५॥

बिनती

(२६५ कुल सं० ११६७)

तड़प रही दिन रैन, चित्त को शान्ति न आवे।
व्याकुल मन घबराय, कहीं सुख चैन न पावे ॥
मोह जाल में फँस रही, मुझे भरमावे माया।
परख न आवे हाय, धूप क्या क्या है छाया ॥
नहीं जब सूझा उपाय, पड़ी आकर गुरु द्वारे।
अब कुछ करो सहाय, तुम्हीं सच्चे रखवारे ॥
हरो हिये की पीर, बचन से मिले दिलासा।
छोड़ी सबकी आस, तुम्हारी अब रही आसा ॥
आस बँधाओ धरि धरि, गुरु राधास्वामी।
चरन कमल में बार बार, मैं करूँ परनामी ॥

छब्बीसवीं धुन

प्रार्थना

(२६६)

आनन्द मंगल साज, साज की बजी बधाई।
सतगुरु आये जगत में, मुझे लिया अपनाई ॥
जनम जनम भटकत फिरा, नहीं मिला ठिकाना।
आय मिले गुरुदेव, नाम का दे दिया दाना ॥
नाम पाय पाई शरन, पद कमल में बासा।
आस लगी गुरु चरन की, मन क्यों हो उदासा ॥
सुरत शब्द अभ्यास का, करूँ नित अब साधन।
निर्धनता का भय नहीं, मिला प्रेम का जब धन ॥
राधास्वामी की दया, मेरी बन आई।
दुखदाई संसार, बन गया अब सुखदाई ॥

॥ कुण्डलियां ॥

(१-२६७)

परमारथ का सार, साध कोई बिरला जाने ॥
बिरला जाने साध, करे सतगुरु की सेवा।
सेवा के प्रताप मिटे, सब भरम के भेवा ॥१॥
भेव भेद को त्याग, न राखे मन में शंका।
धर विवेक चित माँहि, चढ़े त्रिकुटी गढ़ लंका ॥२॥

लंका चढ़ दससीस, रजोगुण रावण मारा।
कुम्भकर्ण तम त्याग, विभीषण सत को धारा ॥३॥
मेघनाद को जीत, शब्द के चढ़े विमाने।
परमारथ का सार, साध कोई बिरला जाने ॥४॥

[२-२६८]

सुख परमारथ सार, सार लख पावे कोई ॥
लख पावे कोई एक, पुरुष जो होय सियाना।
तज अज्ञान विकार, विचार से गुरु का ज्ञाना ॥१॥
ज्ञान ध्यान के संग, परम पद आसा लावे।
आशा मन में लाय, सुन्न पद जाय समावे ॥२॥
सुन्न समाध लगाय, दशम दर पाट खुलाई।
मन के सकल विकल्प,त्याग करे शब्द कमाई ॥३॥
शब्द में वृत्ति जोड़, रूप है उसका सोई।
सुख परमारथ सार, सार लख पावे सोई ॥४॥

(३-२६९)

सुख का चिंतन यूँ करो, जैसे लोभी दाम ॥
जैसे लोभी दाम, चित्त वाही में राखे।
गढ़ा खजाना खाक में, नित धन धन भाखे ॥१॥
धन धन भाखे लालची, चिंता रहे धन की।
धन दौलत की चाह है, यह गति है मन की ॥२॥
गति है मन की यही, रात दिन धन का ध्याना।
धन की लालच में फँसा, हरदम अज्ञाना ॥३॥
अज्ञाना को लालसा, धन से रखना काम।
सुख का चिंतन यूँ करो, जैसे लोभी दाम ॥४॥

(४-२७०)

सुख का चिंतन यूँ करो, जैसे कामी काम ॥
जैसे कामी काम, कामिनी को चित धारे ।
सोये जागे बैठे उठे, नहिं ताहि बिसारे ॥१॥
ताहि बिसारे नांहिं, जागते सुमिरन उसका ।
सोते देखे स्वप्न, रहे मन में वही खटका ॥२॥
खटका खटकत रहे, खटक नहिं हिय से जावे ।
त्यागे जग व्यौहार, और कुछ मन नहिं लावे ॥३॥
मन नहिं लावे आपने, कामिन उसकी राम ।
सुख का चिंतन यूँ करो, जैसे कामी काम ॥४॥

(५-२७१)

सुख का चिंतन यूं करो, जैसे मन संकल्प ॥
जैसे मन संकल्प, रूप औरन का धारे ।
हो जाये वही रूप, व अपना रूप बिसारे ॥१॥
अपना त्यागे रूप, और का रूप बनावे ।
भृंगी कीट समान, कीट भृंगी हो जावे ॥२॥
भृंगी कीट बना, त्याग पृथ्वी को उड़ता ।
अपना नाता तोड़, उसी की ओर वह मुड़ता ॥
मुड़ता सब संकल्प ले, तजा विकार विकल्प ।
सुख का चिंतन यूँ करो, जैसे मन संकल्प ॥४॥

(६-२७२)

सुख का चिंतन यूँ करो, जैसे पानी मीन ॥
जैसे पानी मीन, तज नीर न जावे ।
कबहुं होय बिछोह, जीव और प्रान गँवावे ॥१॥
प्रान गँवाये आपना, पानी सों यूँ प्रीति ।
यही सार है भक्ति का, यही प्रेम की रीति ॥२॥

यही प्रेम की रीत है, महा कठिन व्यौहार ।
ऐसे ही सुख परमात्म का, मन में रहे पियार ॥३॥
रहे पियार विचार तज, दीन अधीन प्रवीन ।
सुख का चिंतन यूँ करो, जैसे पानी मीन ॥४॥

(७-२७३)

सुख की चिंता यूँ करो, ज्यों विरती व्यौहार ॥
ज्यों विरती व्यौहार, धार जो मन से निकसी ।
जाय मिले जिस वस्तु से, वा से नहीं बिछड़ी ॥१॥
वा से बिछड़ी नाहिं, उसी का रूप कहावे ।
उसी की होकर रहे, उसी से नेह लगावे ॥२॥
नेह लगावे ब्रह्म से, विरती ब्रह्माकार ।
ब्रह्मानन्द का भान हो, सत संकल्प विचार ॥३॥
सत संकल्प विचार से, गुन गह तजे विकार ।
सुख का साधन यूँ करो, ज्यों वृती व्यौहार ॥४॥

(८-२७४)

सुख का चिंतन यूँ करो, जैसे वृत्ति विवेक ॥
जैसे वृत्ति विवेक, सार गहे तजे असारा ।
बूँद लहर को छोड़, लहे सत सिंध अपारा ॥१॥
सिंध अपार महान, वह सबका है आधार ।
निराधार रह आप में, सबका उस पर भार ॥२॥
सबका उस पर भार है, भार को भार न जान ।
भार अभार का द्वन्द लख, रह निरद्वन्द महान ॥३॥
रह निरद्वन्द समान जब, व्यापे नहीं अनेक ।
सुख का चिंतन यूँ करो, जैसे वृत्ति विवेक ॥४॥

(९-२७५)

सुख की जड़ निज रूप में, विरला जाने कोय ।
बिरला जाने कोय, जिसे गुरु संग मिला है ।
उसका मन निज रूप के, बीच में जाय पिला है ॥१॥
जाय पिला है मन तब, निज रूप लखे वह ।
लख लख कर निज रूप, सांच सत बात भखे वह ॥२॥
बात भखे वह जान, समझ औरन समझावे ।
आप तरे भव सिंध, और दूजे को तरावे ॥३॥
दूजा दिया तराय कर, सो परमारथी होय ।
सुख की जड़ निज रूप में, बिरला जाने कोय ॥४॥

[१०-२७६]

निज सुख आतम राम में, सन्तन किया विचार ।
सन्तन किया विचार, खोज कर पता लगाया ।
सतचित आनन्द भानु, रूप प्रगट होय आया ॥१॥
रूप प्रगट होय आया, रूप का किया बिवेका ।
तज अनेक मत बाद, चित में धारा ऐका ॥२॥
धारा एका सोच समझ कर, ज्ञान बनाया ।
यही एक है सार, और सब झूठी माया ॥३॥
झूठी माया जान कर, जगत पे डारी छार ।
निज सुख आतम राम में, सन्तन किया बिचार ॥४॥

[११-२७७]

इस जग में तुम यूँ रहो, ज्यों मुरगाबी नीर ॥
ज्यों मुरगाबी नीर, नीर में गोते खावे ।
जल के बाहर आय, न अपनो पंख भिगोये ॥१॥
पंख न भीगे कभी, रहे सूखे का सूखा ।
जल थल एक समान, नहीं वह तृप्त न भूका ॥२॥

तृप्त न भूका नीरका, यूँ उमर बिताये ।
हँस गति वह पाय, जो मानसरोवर न्हावे ॥३॥
मान सरोवर न्हाय कर, हँस न पावे पीर ।
इस जग में तुम यूँ रहो, ज्यों मुरगाबी नीर ॥४॥

[१२-२७८]

सबसे मिल जुल चालिये, रूप न अपनो त्याग ॥
रूप न अपनो त्याग, रूप में स्थिर रहना ।
भव की धार प्रवाह वेग में, कबहुँ न बहना ॥१॥
कबहूं न बहना धार, शान्त होय निश्चल रहिये ।
चंचलता को त्याग, निश्चल की आदत लहिये ॥२॥
आदत लहिये साध, साध साधन का नेमी ।
जो कोई साधे भक्ति, ताहि को कहिये प्रेमी ॥३॥
प्रेमी जन का संग कर, सुख निदरा में जाग ।
सबसे मिल जुल चालिये, रूप न अपनो त्याग ॥४॥

[१३-२७९]

गुरु विवेकी जब मिलें, तब सूझे निरवान ॥
तब सूझे निरवान, नहीं कुछ समझ में आवे ।
सैन बेन के बीच, सन्त कोई सार लखावे ॥१॥
सार लखावे सन्त, सन्त की संगत करना ।
हित अनहित को त्याग, सन्त के गह ले चरना ॥२॥
गह ले चरना सन्त, सन्त तेरे हितकारी ।
राधास्वामी चरन शरन की, जा बलिहारी ॥३॥
जा बलिहारी गुरु के, गुरु से ले निज ज्ञान ।
गुरु विवेकी जब मिलें, तब सूझे निरवान ॥४॥

(१४-२८०)

विन साधन नहीं होय कुछ, यह जाने सब कोय ॥
यह जाने सब कोय, आग रहे लकड़ी भीतर ।
बिना मथे नहीं प्रगट होय, वह किंचित बाहर ॥१॥
किंचित बाहर प्रकट न होय, मेंहदी की लाली ।
जो कोई पीसे ताहि करे, सो हाथ गुलाली ॥२॥
हाथ गुलाली होय, पीस मेंहदी जब लावे ।
तैसे ही ब्रह्म का दरस, पुरुष साधन सों पावे ॥३॥
साधन सों सब पाइये, ऋद्धि सिद्धि बुद्धि सोय ।
बिन साधन नहीं होय कुछ, यह जाने सब कोय ॥४॥

(१५-२८१)

बिन साधन के साधुवा, कोई साध न होय ॥
कोई साध न होय, जो साधन चित नहीं लावे ।
जानो ताहि असाध, सदा सो बिपत कमावे ॥१॥
बिपत कमावे दुखी रहे, पड़ा काल के फंदा ।
ऐसा प्रानी मूढ़ रहे, बनत खुदा का बंदा ॥२॥
खुदा का बंदा बना, बंदगी जान है उसकी ।
बंदा बन्धुआ होय, बन्ध गति शान है उसकी ॥३॥
शान है उसकी बंदगी, स्वतन्त्रता खोय ।
बिन साध न के साधुवा, कोई साध न होय ॥४॥॥

(१६-२८२)

साधन मन का खेल है, और कहो मत ताहि ॥
और कहो मत ताहि, यह मन है बड़ा खिलाड़ी ।
कबहुं होय सचेत तो, कबहुँ निपट अनाड़ी ॥१॥
निपट अनाड़ी बना, कुबुद्धि की चढ़ी कमानी ।
त्याग दिया जब कुबुद्धि तो, होगया ज्ञानी ध्यानी ॥२॥

ज्ञानी ध्यानी बना जोड़कर, वृत्ती अपनी ।
वृत्ती बियोग कलेश, मेल ही सुख की रहनी ॥३॥
सुख की रहनी वृत्ती में, वृती साधन मांइ ।
साधन मन का खेल है, और कहो मत ताहि ॥४॥

(१७-२८३)

मन का अमन विमन करे, सोहै सन्त सुजान ॥
सोहै सन्त सुजान, ज्ञान का रूप है सोई ।
आवागंवन को मेट, लीन निज रूप में होई ॥१॥
लीन रूप में रहे, योनी का भर्म मिटावे ।
करम धरम पाखंड के, फिर फन्द न आवे ॥२॥
फन्द न आवें सन्त, काल यम से वह नहीं डरते ।
न वह जन्मे कभी, जनम जनम कर फिर नहीं मरते ॥३॥
फिर नहीं मरते सन्त कभी, मन के परे ठिकान ।
मन को अमन विमन करे, सोहै सन्त सुजान ॥४॥

(१८-२८४)

सहज समाध विचित्र गति, बरन बखान न जाय ॥
बरन बखान न जाय, थके जिभ्या मन बानी ।
अनुभव से लख पाय, कोई कोई बिरला ज्ञानी ॥१॥
बिरला ज्ञानी लखे, अलख गति अगम निशानी ।
जड़ चैतन नहीं होय, न बन्ध न मुक्ति कहानी ॥२॥
मुक्ति कहानी कहो, सूक्ष्म स्थूल न कारन ।
निरविकल्प सविकलप, न सुन्न न मोहन मारन ॥३॥
मोइन मारन कल्पना, कल्पित कल्प रहाय ।
सहज साधना विचित्र गति, बरन बखान न जाय ॥४॥

(१९-२८५)

ज्ञानी मूढ़ की एक गति समझ लेउ मनमांह ॥
समझ लेव मन माँह, समझ कर भ्रान्ती हटाओ ।
मेटो जग जंजाल, काम को तुरत बनाओ ॥१॥
तुरत बनाओ काम, फिर अवसर नहीं ऐसा ।
सन्त शरन में जाय, संग करो जैसा तैसा ॥२॥
जैसा तैसा करो संग, संगत फल लहना ।
अपने मन ही विचार, शान्त मति चुप होय रहना ॥३॥
चुप होय रहना हृदय में, सतगुरु चरन की छांह ।
ज्ञानी मूढ़ की एक गति, समझ लेउ मन मांह ॥४॥

(२०-२८६)

अपनी ओर निहारिये, औरन से क्या काम ॥
औरन से क्या काम, काम अब अपना कीजे ।
समय अमोलक मिला, चित कहीं और न दीजे ॥१॥
चित न दीजे और ठौर, नर जनम सुफल हो ।
अपना करो उपकार, हृदय तब शुद्ध बिमल हो ॥२॥
शुद्ध बिमल हो हृदय, सोध ले अपनी काया ।
काया मध्ये रहे, ब्रह्म जग, संस्रित माया ॥३॥
संस्रित माया कल्पना, कल्पित क्रोध और काम ।
अपनी ओर निहारिये, औरन से क्या काम ॥४॥

[२१-२८७]

भक्ति पन्थ में आय कर, तज दे भर्म विकार ॥
तज कर भरम विकार, ध्यान भगवत का करना ।
छूत छात बिसराय, नाम पर उसके मरना ॥१॥
प्रेम भाव से राम ने, खाये झूटे बेर ।
शबरी प्यारी भक्तिनी, लाई राम को घेर ॥२॥

साग विदुर घर खालिया, तज दुर्योधन खीर ।
कृष्ण को प्यारे भक्त हैं, धीर भीर गम्भीर ॥३॥
धर्मराज के यज्ञ में, घंटा बोला नांहि ।
ऋषि मुनि खाली भक्ति से, भक्ति श्वपच के मांहि ॥४॥
छूत छात और वरन का, भक्ति में कहाँ विचार ।
भक्ति पन्थ मे आय कर, तज दे भरम विकार ॥५॥

[२२-२८८]

सूरज चमका गगन में, मिटा जगत अंधियार ॥
मिटा जगत अंधियार, कमल विगसे बन अन्दर ।
भागा तिमिर विकार, रहा नहीं उसका कुछ डर ॥१॥
डर कोई कैसे करे, चोर डाकु सब भागे ।
पन्थी धरमी संयमी, पुरुषारथ लागे ॥२॥
दीपक जैसे दिप्त हो, निज घट दीवा बार ।
सूरज चमका गगन में, मिटा जगत अंधियार ॥३॥

बिनती

(२८६ कुलसं० ११६१)

आनन्द की वर्षा हुई, धुनि नाम जो पाया ।
दुख कलेश का भय मिटा, गुरु ने की दाया ॥१॥
भक्ति युक्ति का दान दे, मुझको किया अपना ।
मेट दिया निज कृपा से, भव दुख का सपना ॥२॥
धन्य धन्य गुरु देव, दया सागर धनी ।
दिया छुड़ा संसार गति, माया मनी ॥३॥
जन्म जन्म शरना गत, पद कमल की आसा ।
अब न सतावे काल करम, जग द्वन्द त्रासा ॥४॥
राधास्वामी दीन हित, दीनन के सहाई ।
रहूं मगन दिन रात, पाई चरनन शरनाई ॥५॥

सत्ताईसवीं धुन

प्रार्थना

(२६०)

दीन बन्धु दयाल स्वामी, तुम दया के सिन्ध।
निज दया से बन्ध काटो, छूटे द्वन्द का बन्ध ॥
काल करम का कड़ा बन्धन, जीव रहे लपटाय।
विधि न जाने छूटन की, उरझ उरझ फँसाय ॥
दया कीजे भक्ति दीजे, तार लीजे आप।
पुण्य फल तुम्हरे दरश, कटें जग के पाप ॥
सुरत शब्द का योग निर्मल, सहज सुगम सुहेल।
जीव पावें परम पद को, चित चरन से मेल ॥
राधास्वामी राधास्वामी, राधास्वामी नाम।
सब जपें हित चित से निस दिन, पावें अमृत धाम ॥

॥ फुटकल शब्द ॥

(१-२६१)

दयानिधि दीन दुख भंजन, कृपामय नाथ जन रंजन ॥टेक॥
चरन की ओट में लीजे, मुझे भक्ति का धन दीजे।
दुखी हूं तीन तापों से, मलिन मन जग के पापों से ॥ दया०
पड़ी अज्ञान की फाँसी, छुड़ालो आके अविनाशी।
तुम्हारा नाम लेता हूं, चरन में चित को देता हूं ॥ ,,
तुम्हारा एक सहारा है, नहीं कोई हमारा है।
खुली दृष्टि तो यह जाना, तुम्हीं को मीत पहचाना ॥ ,,

गहो तुम बांह अब मेरी, न लाओ नाथ कुछ देरी।
रहे लौ नाम की निस दिन, भजूँ मैं आपको छिन छिन ॥४॥
चरन को छोड़ कहां जाऊँ, सदा मन बुद्धि से ध्याऊँ।
सुफल कर दो जनम मेरा, मिटे संसार का फेरा ॥५॥
यही बिनती हमारी है, तुम्हीं से आस भारी है।
दया राधास्वामी अब कीजे, चरन की छाँह में लीजे ॥६॥

(२-२६२)

है कोई ज्ञानी ध्यानी, सत तत्व भेद पहिचानी ॥टेक॥
सिंध में सीप सीप मुख मोती, मोती आब रहानी।
चारों क्या है समझ न आवे, बुद्धि भई दीवानी ॥१॥
केला और प्याज को देखा, पात पात अलगाया।
निरख परख कर सोच विचारा, तत्व सार नहीं पाया ॥२॥
बरफ में जल जल भाप रहाणे, तीन तीन के रूपा।
इनके अन्तर क्या कोई देखे, पड़े भरम के कूपा ॥३॥
बीज में अंकुर पात फूल सब, फूल में फल का बासा।
फल में बीज अनेक भाँति के, हेर फेर का पांसा ॥४॥
माटी कमल कमल में डंडी, डंडी फूल बिराजा।
फूल में बास है किसकी फूटी, कौन है सब का राजा ॥५॥
सत में चित चित में है आनन्द, सतचितआनन्द एका।
तीन के अन्तर चौथा क्या है, कोई करे बिवेका ॥६॥
तत्व भेद द्रोपदी की साड़ी, तह पर तह की खानी।
दुश्शासन को नजर न आवे, देखे अर्जुन ज्ञानी ॥७॥
गुप्त में प्रकट प्रकट में गुप्ती, गुप्त प्रकट की रचना।
गुप्त प्रकट का अन्त कहा है, कैसे कहे कोई बचना ॥८॥
तुझे प्रगट किया गुरु ने गुप्त हो, सीख भक्ति की रीती।

आप गुप्त कर प्रगट गुरु को, तब प्रगटेगी प्रीती ॥६॥
राधास्वामी गुरु की संगत में जा, सीख शब्द मत युक्ति ।
तब कुछ पावे भेद तत्व का, मिले भरम से मुक्ति ॥१०॥
तीन छोड़ चौथा पद दरसे, सत्त नाम गति जाने ।
बिन जाने कोई कैसे बखाने, जाने तब मन माने ॥११॥
तेजस विश्व पराज्ञ तीन हैं, लख तीनों का भेदा ।
अन्तरयामी विराट हिरण्यगर्भ, ब्रह्म सुनावे वेदा ॥१२॥
चौथा पद इनसे है न्यारा, राधास्वामी बतावें ।
तुर्या तुर्यातीत नहीं वह, बिरले कोई कोई जानें ॥१३॥

[३-२६३]

है कोई चतुर सियाना ज्ञानी, लखे गुरु की बानी ॥टेक॥
रेत में गिरी शकर की पुड़िया, शकर रेत बिलगावे ।
चिउँटी बन कर निज युक्ति से, रेत से शकर हटावे ॥१॥
बानी बन में भरमे पंडित, अर्थ अनर्थ बतावें ।
अर्थ समझ नहीं आवे उनके, भूल भरम भरमावें ॥२॥
नीर से चीर मिलाकर देखो, एक अंग बन जावे ।
हंस विवेकी त्याग नीर को, चीर चीर पी जावे ॥३॥
जड़ चेतन की पड़ी है गांठी, छूटत अति कठिनाई ।
बिन गुरु ज्ञान के सुरझे केहि विधि, उरझ उरझ उरझाई ॥४॥
वेद उपनिषद नहीं हैं झूठे, झूठा जो न बिचारे ।
बिन विचार के सार न पावे, अटके भरम के मारे ॥५॥
श्रुति वह है जो सुनी गई है, और श्रुति नहीं कोई ।
ऋषियों ने चढ़ सुना अधर में, अपने घट बिच सोई ॥६॥
श्रुति धुन मात्र है अनहद बानी, वेद बरन के रूपा ।
धुन को सुनें बरन को त्यागे, तब घट दरसे भूपा ॥८॥

ओम् ओम् सब कोई कहते, ओम् की समझ न आई।
है उदगीत ओम धुन बानी, नहीं वह बरन में भाई ॥८॥
धुन को सुने ओम् गति दरसे, असुर मार रण जीते।
जनम मरन का खटका छूटे, अमी धार रस पीते ॥९॥
लाख वेद पढ़े लाख उपनिषद, ओम् सार नहीं पावे।
देवियान पन्थ जब पग धारे, तब धुन कान में आवे ॥१०॥
पित्रयान है करम का रस्ता, जो आया भरमाया।
ऊँचे नीचे चढ़ा विकट मग, करनी फल बिलगाया ॥११॥
देवियान है मरम का रस्ता, सूरज ज्ञान प्रकासा।
गुरु की दया चला जो प्रानी, सहे न यम के त्रासा ॥१२॥
पग पग पर ज्योती की धारा, जगमग ज्योति सुहानी।
चांद सूर तारागन मंडल, सो प्रकाश की खानी ॥१३॥
गुप्त भेद क्या मुख से भाखूँ, सैन बैन का रस्ता।
गांठी का कोई दाम न छीने, सौदा बहुत है सस्ता ॥१४॥
गुरु से मिल उपासना कीजे, भेद भाव सुन लीजे।
उप है निकट तो आसन बैठक, कुछ दिन संगत कीजे ॥१५॥
संग में कीट भृंग गति धारे, रूप गुरु चित आवे।
तब सत नाम के पाय भेद को, सत्त धाम चलि जावे ॥१६॥
पृथ्वी छोड़ गगन चढ़ आओ, सहस कमल दल बासा।
फिर त्रिकुटी ओंकार की धुन सुन, देखो अजब तमासा ॥१७॥
वहां उदगीत की धुन को सुनना, सुन सुन चित ठैराना।
लाली उषा निरख पड़े जब, निरख परख मन माना ॥१८॥
आगे तिसके सुन्न मंडल है, सुन्न समाध रचाओ।
चन्द्रलोक में बासा पाकर, अधर धाम चढ़ जाओ ॥१९॥
महासुन्न में मानसरोवर, हंसन संग बिलासा।

नहाओ अमी अहार को खाओ, हिये आनन्द हुलासा ॥२०॥
लगी समाध अखंड अपारा, रारंग सारंग बानी।
यह बानी है मंगल खानी, सुगम सुसाध सुहानी ॥२१॥
जब उत्थान समाध का देखो, चलो भँवर के देसा।
सोहंग सोहंग बजे बाँसुरी, दुख नहीं वहां लवलेसा ॥२२॥
सोहंग सूर बिमल प्रकाशा, नूर तूर का मंडल।
कुछ दिन ठहर के लीला देखो, फिर साजो सत का दल ॥२३॥
सत्त धाम सुख बीना बाजे, सत्त पुरुष का लोका।
कोटि सूर चन्दा की ज्योति, अद्भुत महा अशोका ॥२४॥
अलख अगम अव्यक्त अनामी, अमर अजर अविनासी।
आनन्द घन चेतन घन निर्मल, सतघन सुकृत सुबासी ॥२५॥
राधास्वामी चरन पखारो, गुरु चेला व्यौहारा।
फिर नहीं गुरु नहीं कोई चेला, ध्यान न सोच विचारा ॥२६॥
जो कोई इस मारग में आवे, सहज ज्ञान निधि पावे।
राधास्वामी को बलिहारी, भव सागर तर जावे ॥२७॥

(४-२६४)

तेरी लगन में हुई दिवानी, मेरे सतगुरु सत अस्थानी ॥टेक॥

बिछुड़ी और बिछुड़ के रोई, तन मन की बुध सुध खोई।
मेरी दशा न जाने कोई, दिन रात फिरूँ घबरानी ॥ तेरी०

अँखियों में से बहे जल धारा, हिया चीरे विरह का आरा।
क्यों देता नहीं मुझे सहारा, आयु मेरी बिपत बितानी ॥ ,,

मैं पृथवी तू नभ का बासी, मैं दुखी हूं तू सुखरासी।
तू स्वांती मैं पपीहा प्यासी, हो कैसे मेल मिलानी ॥ ,,

घट घट का तू अन्तरयामी, सुदयाल सुसाध सुस्वामी।
रज चरन सरोज नमानी, दे मेट द्वन्द की गलानी ॥ ,,

दरसत चित आनन्द धन खानी, कूटस्थ आधार महानी।
तेरी महिमा कौन बखानी, कर अपनी मुझे अभिमानी ॥ तेती०
राधास्वामी दीन दयाला, करुणा मय सहज कृपाला।
भक्ति दे करदेय निहाला, यही विनती नित्त सुनानी ॥ ,,

(५-२६५)

आजा गले लग जा, मुझे मोहनी रूप दिखाजा ॥टेक॥

तुझ बिन मुझको चैन न आवे, पीर बिरह की बहुत सतावे।
रह रह कर हिया जिया मुरझावे, जलती आग बुझाजा ॥ ,,
दिन में सोच तेरा है पल पल, रात को तन में रहती हलचल।
आजा प्रेम डगर में चलचल, सुख का भेद बताजा ॥ ,,
तड़पूँ तरसूँ प्यारे कारन, बिलपूँ तलपूँ दम दम छिन छिन।
व्याप रही चित चिंता डायन, उसका फन्द कटाजा ॥ ,,
मन मन्दिर मेरा पड़ा है सूना, बिपत कलेश रहे दिन राती।
तू क्यों हुआ बेदरदी ऊना, घट के घर को बसाजा ॥ ,,
ज्योत में ज्योत जले दिन राती, अन्धकार की मिटे उत्पाती।
तेरी छवि अति मुझको भाती, सूरज चन्द्र लजाजा ॥ ,,
अँखियन बहे नीर की धारा, जग में मेरा कोई न सहारा।
तू ही सांवा है रखवारा, काल से अब तू बचाजा ॥ ,,
योग विराग कछू नहिं सूझे, ज्ञान ध्यान गम नेक न बूझे।
माया करम से नित ही जूझे, भव दुख आप हटाजा ॥ ,,
सतगुरु रूप का दर्शन प्यारा, गुरु मूरती है सार का सारा।
मैं हूं प्रेम प्यास का मारा, अमृत बूँद पिलाजा ॥ ,,
तू है दाता तू हितकारी, तू समरथ तू जगदाधारी।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, बिगड़ी मेरी बनाजा ॥ ,,

(६-२६६)

ऐसी अभिमानी अज्ञानी है, यह दुनिया ।।टेक।।
सत को त्याग असत को धावे, झूठे भरम फँसानी दुनिया।
गुरु की संगत को नहीं दे चित, अटकी पत्थर पानी यह दुनिया।
दोहा रामकृष्ण जब लग जिये, निंदित रहा संसार।
पीछे देवल साज कर, अब पूजा सत्कार, दुनिया ।। ऐसी०
जीते पिता का करें अनादर, मुये श्राद्ध रचानी दुनिया।
सतगुरु देव प्रत्यच्छ न पूजें, गढ़ मूरत पुजवानी यह दुनिया।
दोहा मुये बैल की आख बड़ी, यह जग का व्यौहार।
मिली वस्तु का ध्यान नहीं, अनमिल सोच विचार दुनिया ।। ,,
सत संगत में कभी न बैठे, तीरथ बरत दिवानी दुनिया।
सोच विचार विवेक ज्ञान नहीं, भेड़ की चाल चलानी यह दुनिया।
दोहा तीरथ राज समाज गुरु का, सुख मंगल की खान।
सो तो नहाते ना बने, बन परबत हैरान दुनिया ।। ,,
साँची बात कहे नहीं कोई, झूठे को पतियानी दुनिया।
मानुष जनम का सार न जाने, भव की धार बहानी, यह दुनिया।
दोहा नर शरीर उत्तम महा, सुर को दुर्लभ जान।
अपनी गति मति ना लखे, देवी देव भुलान। दुनिया ।। ,,
इस दुनिया की लीला अद्‌भुत, अकथ अपार कहानी, दुनिया।
राधास्वामी दया ज्ञान गम पाया, छूटी द्वन्द गलानी, यह दुनिया।
दोहा धन्य भाग सतगुरु मिले, जनम को दिया सुधार।
सत संगत के बचन सुन, हो गया भवके पार, दुनिया ।। ,,

[७-२६७]

उठ जाग सवेरा री, सुरत मेरी भागवती।
मिटा भरम अँधेरा री, धारले हिये सुमती ।।टेक।।

क्या तू सोई मोह नींद में, उठ के भजन में लाग ।
सोये होय अकाज पियारी, जाग जाग उठ जाग ॥ सुरत०
चेत चेत है चेत का अवसर, काल है फन धर नाग ।
कब डस ले क्या कोई जाने, जाग जाग उठ जाग ॥ ,,
प्रेम प्रीत परतीत उमंग से, धर गुरु पद अनुराग ।
जो सोया सो खोया प्राणी, जाग जाग उठ जाग ॥ ,,
सीतल मंद सुगंध पवन बहे, गा गुरु मंगल राग ।
यह सोने का समय नहीं है, जाग जाग उठ जाग ॥ ,,
राधास्वामी तोहि चितावन, बख्शा अचल सुहाग ।
तज परमाद की निन्द्रा, जाग जाग उठ जाग ॥ ,,

[८-२९८]

पिला दे भक्ति का ऐसा प्याला, ममत्व मैं अपने मन का खोदूँ ।
न बुधि रहे और न सुधि रहे कुछ,अहंपना सारा मनका खोदूँ ॥टेक॥ पि०
जपूँ तपूँ और भजूँ न सुमिरूँ, न योग युक्ति के पन्थ दौड़ूँ ।
न नाम की माला हाथ में हो, हिये की माला का मनका खोदूँ ॥ पि०
वह राग क्या जिसमें राग आये, वह त्याग क्या त्याग में फँसाये ।
न बन्ध और मुक्ति का हो खटका, विवेक घर और बन का खोदूँ ॥ ,,
न दुख की दुविधा न सुख की चिंता,न चित की दुचिता का भय हो किंचित ।
न ज्ञान और ध्यान की हो इच्छा, विचार साधन यतन का खोदूँ ॥ ,,
न द्वन्द निरद्वन्द का हो झगड़ा, न द्वैत अद्वैत का हो बखेड़ा ।
झुका के सिर राधास्वामी पद में, विचार तक दास पन का खोदूँ ॥ ,,

[९-२९९]

साकारम निराकार ॥टेक॥
प्रथम सहसार, दुजे समझ ओंकार ।
तीजे शून्य महा शून्य, चौथे सोहंग सार ।

पंचम सतपद विचार, अलख अगम धुर अधार।
सोच समझ बार बार, चित मध्य धार धार ॥साकारम०
सगुन अगुन गुन प्रचंड, खंड खंड ब्रह्म अंड।
व्यापे सब करके पिंड, निश्फल सहे यम का दंड।
भूल गये मति के मंद, फँस काम क्रोध फंद।
भागें नित जगत द्वन्द्व, दिया जिया को हार हार॥ ,,
सतसंग में जाय जाय, गुरु स्वरूप ध्याय ध्याय।
धुरपद चित में बसाय, घट मंदिर में समाय।
अनहद धुन गाय गाय, दर्शन ज्योति का पाय।
मुक्ति युक्ति कर उपाय, सूझे अपरम अपार॥ ,,
गुरु स्वरूप धार रंग, भवका भाव कर दे भंग।
चित हो ज्यों कीट भृंग, रुके घट निध के तरंग।
शब्द सुनत हो कुरंग, कमल नीर सीख ढंग।
हो असंग रहके संग, जग चिन्ता जार जार॥ ,,
राधास्वामी परम रूप, चेतन रचना के भूप।
रूपवान और अरूप, ब्रह्म परब्रह्म कूप।
नहीं छांह नहीं धूप, अचरज अद्भुत अनूप।
नीर क्षीर सोत कूप, व्याप रहे वार पार॥ ,,

(१०-३००)

अँखियां खुली रहें दिन रात ॥टेक॥
खुले नयन से रूप का दर्शन, खुले कान सुन बात।
खुली जीभ से नाम का सुमिरन, खुले हाथ परसात ॥अँखियाँ०
तह में तह है तह में तह है, तह में तह के साथ।
आंख खुले तह दरस में आवे, ढेले का लख पात॥ ,,
तह अस्थूल सूक्ष्म भी तह है, कारन तह की जात।
बिना आंख क्या कोई देखे, आंख खोज कर बात॥ ,,

बाहर तो सब कोई देखे, अन्तर दृष्टि न जात।
अन्तर बाहर नैन खुलें जब, तब सत रूप लखात ॥ अंखियां०
राधास्वामी गुरु की दया भई है, धरा सीस पर हाथ।
अन्तर बाहर आंख खुलानी, भया तत्व का साथ ॥ ,,

(११-३०१)

दया मय दीन दुख भंजन, कृपा निधि भक्त मन रंजन।
कमल पद की शरन दीजे, पतित की लाज रख लीजै ॥ दया०
जगत में कष्ट बहु पाया, चरन में आपके आया।
विकल मन चित घबराया, तुम्हारा ध्यान तब आया ॥ ,,
चरन की ओट में लीजे, अटल भक्ति का वर दीजे।
भिकारी आपके द्वारे, पड़ा त्रयताप के मारे ॥ ,,
पिला दो प्रेम का प्याला, रहे दिन रात मतवाला।
करम के जाल से भागे, अमी रस नाम में पागे ॥ ,,
यही मन की है अभिलाषा, करो पूरी प्रभू आसा।
विनय राधास्वामी हितकारी, सुनो भव से करो पारी ॥ ,,

(१२-३०२)

गुरु पूरे ने दिखाया अपना धाम ॥टेक॥
सहज योग की बिधि बतलाई, बख्शा सांचा नाम।
सुमिरन भजन ध्यान निस बासर, व्यापे क्रोध न काम ॥ गुरु०
प्रथम बंद जब तीन लगाये, मन को दिया लगाम।
जब मन गगना चढ़ा सुरत ले, बंद का फिर नहीं काम ॥ ,,
क्यों कोई कान आंख को मूंदे, क्यों चित राखे थाम।
सुरत शब्द का साधन अद्भुत, अन्तर मूल कलाम ॥ ,,
चढ़ी सुरत छोड़ा नौ द्वारा, गगन में किया बिसराम।
पिंड ब्रह्मांड सेऊँची पहुँची, जहां न दच्छ न बाम ॥ ,,

सहस कमल दल त्रिकुटी मंडल, सुन्न महासुन्न ठाम।
भँवर गुफा सतलोक अलख लख, अगम परे गुरु धाम॥ गुरु०
राधास्वामी पद में ठौर ठिकाना, वहां सुबह नहीं शाम।
जो कोई घट चढ़ यहां तक पहुँचे, बिसमध आठों याम॥ ,,
मूल योग यह सबका टीका, निर्मल सुगम सुहाम।
राधास्वामी दया से काल दंड का, भेद साम नहीं दाम॥ ,,

(१३-३०३)

नाम रस पीले मेरे भाई ॥टेक॥
ध्रुव प्रह्लाद नाम रस माते, माती मीरा बाई।
शिव सनकादिक नाम दिवाने, गनिका सदन कसाई॥ नाम०
ब्रह्मा नाम जपे निस बासर, शिव रहे तारी लाई।
विष्णु गनेश नाम आधारा, शेष सहस मुख गाई॥ ,,
नानक जपे नाम गुरु निस दिन, सन्त कबीर बताई।
शबरी भीलनी नाम के पुन से, राम से नेह लगाई॥ ,,
तुलसी जपे प्रभु नाम निरन्तर, जपत सदा लौ लाई।
सूरदास नाम के बल से, हिये की आंख खुलाई॥ ,,
नाम बिना जीवन है बिरथा, बहु पाछे पछताई।
गुरु की कृपा मिला शुभ अवसर, नाम रतन धन पाई॥ ,,
गुरु की सेवा साध की संगत, दिन दिन बढ़े सवाई।
राधास्वामी नाम गुरु से मिलिया, परगट तोहि जताई॥ ,,

(१४-३०४)

सतगुरु एक तुम्हारी आस, दाता एक तुम्हारी आस ॥टेक॥
भूल भरम पड़ समझी अलग हूं, तुम तो मेरे पास।
रोम रोम व्यापक मेरे तन में, तुम सांसों के सांस॥ सतगुरु०
तुम नहीं गगन पता न पृथवी, तुम न मेरु कैलास।
हृदय गुफा में मेरे बिराजे, अन्तर घट में बास॥ ,,

सहसकमलदल सहस रूप हो, अठदल मध्य निवास ।
त्रिकुटी त्रिपुटी रूप त्रिगुन विधि, अ उ म परकास ॥ ,,
सुन्न में दुविधि प्रकृति पुरुष तुम, स्वामी सेवक दास ।
महासुन्न अद्वैत तत्व एक, स्वांस कहुं के भास ॥ ,,
भँवर में काली काल बन व्यापे, काल में काल बिलास ।
आगे सत पद सत्त तत्त्व प्रभु, सत में सत्त उजास ॥ ,,
अलख अगम राधास्वामी अनामी, सतचित आनन्द रास ।
सर्व कला संग मुझ में समाने, कैसे होऊँ उदासा ॥ ,,

(१५-२०५)

फकीरा रूप तेरा अति प्यारा ॥टेक॥
तू सत चित आनन्द की मूरत, तू तीनों से न्यारा ।
तेरी गति मति बुधि न जाने, अटक रही मँझधारा ॥ फकीरा०
करम किया सत की चढ़ा घाटी, चित में विवेक विचारा ।
सत्त चित्त आनन्द विलासा, चहुँ दिस हर्ष पसारा ॥ ,,
तीन त्याग चौथे को धारे, सो सब का अधारा ।
द्वन्द जगत त्रिपुटी की त्रिकुटी, छोड़ चला घरबारा ॥ ,,
नहीं तू दोय न तीन चार है, नहीं तू सहस हजारा ।
एक एक है एक एक है, जाने जानन हारा ॥ ,,
एक अनेक कहां है तुझ में, यह भी भूल विकारा ।
राधास्वामी दया रूप लख अपना, तू व्यापक संसारा ॥ ,,

(१६-२०६)

दुविधा है संसारा, कोई समझे गुरु का प्यारा ॥टेक॥
सत में एक अनेक नहीं है, वह है अपर अपारा ।
निराधार कूटस्थ अवस्था, अधिष्ठान आधारा ॥ दुविधा०
जैसे सिंध में लहर उठत है, लहरी लहर पसारा ।
तैसे सत की दशा फकीरा, कहन सुनन से न्यारा ॥ ,,

लहर उठी हुई मौज अनोखी, प्रगटे बुंद फुहारा।
बुंद सिंध से भये बिलगाने, मन बुधि चित हंकारा॥ दुविधा०
अहंकार में दृढ़ता आई, धरा रूप विस्तारा।
दृढ़ता के बस मन न चिन्ता, चिन्तन बुद्धि विकारा॥ ,,
बुद्धि ने प्रपंच रचाया, बुंद सिंध भये न्यारा।
कारन सूक्ष्म स्थूल बनाया, रचा प्रपंच अपारा॥ ,,
जड़ चेतन की गांठी पड़ गई, कठिन भया छुटकारा।
मध्य दशा में आन बिराजा, उपजा सोच विचारा॥ ,,
कभी नीचे कभी ऊँचे फुदके, कभी मध्य की धारा।
एक धार से सहस धार बन, धारा मूल विकारा॥ ,,
बिलपे तड़पे चैन न आवे, जनम जुआ गले डारा।
जनम मरन भोगें चौरासी, लखे न सार असारा॥ ,,
दुर्मति आई कुमति बसाई, स्वारथ बस भटकाया।
लोक परलोक में डोलत प्रानी, कभी जीता कभी हारा॥ ,,
कोटि जनम से धोखा खाया, काल कर्म का मारा।
अपनी चिन्ता और की चिन्ता, भोग संयोग अधिकारा॥ ,,
भरमे भरम भूल की लीला, नहीं पावे छुटकारा।
तीन ताप का बन्धन गाढ़ा, आय फँसा नो द्वारा॥ ,,
यह दुबिधा है यह दुचिताई, दुख सुख सिर पर भारा।
करम हिंडोले भूले प्रानी, नहीं पावे निस्तारा॥ ,,
बल में निबल निबल बल संयुत, करे उपाय निकारा।
दहे शरीर जरे उर निस दिन, रोय रोय बिकरारा॥ ,,
सतगुरु दया देख तब उमड़ी, धरा सन्त अवतारा।
जीव चितावन आये राधास्वामी, शब्द जहाज सँवारा॥ ,,
सुरत शब्द की युक्ति बताई, मुख से शब्द उचारा।

मैं तोहि लेऊँ छुड़ाय काल से, बन्धन काटूँ सारा ॥ ,,
एक अनेक की तज दे दुविधा, ले अब मेरा सहारा ।
तब फकीर ने दृष्टि उठाई, लखा रूप चमकारा ॥ ,,
सहस कमल चढ़ त्रिकुटी आया, सुन्न महासुन्न पग धारा ।
सहज समाधि रचाया अद्भुत, गुफा का निरख फुहारा ॥ ,,
जब सत पद की ओर दृष्टि गई, चमका रवि शशी तारा ।
एक अनेक की दुरमति नासी, नसा मूल हंकारा ॥ ,,
जीवन मुक्त की पदवी पाई, व्यापे न जग धन दारा ।
राधास्वामी खेल खेल में, किया सकल निरवारा ॥ ,,

(१७-३०७)

फकीरा जा भव सागर पारा ॥टेक॥
जग है दुविधा जग दुचिताई, जग दूई व्यवहारा ।
सुख दुख राग द्वेष विष अमृत, यह सब द्वन्द पसारा ॥ फकीरा०
सहज में जग का रूप लखाऊँ, सहित विवेक विचारा ।
यह समझाय तोहि अपनाऊँ, मेटूँ द्वन्द विकारा ॥ ,,
यह अनेक है द्वैत भाव है, द्वैत में द्वैत की धारा ।
द्वैत में खींच तान है प्यारे, ले अद्वैत सहारा ॥ ,,
सत संगत जब किया गुरु का, मिला ज्ञान मत सारा ।
लखा जगत का रूप अनोखा, लख लख किया प्रतिहारा ॥ ,,
गुरु से प्रेम बढ़ाया तूने, गुरु चेला व्यौहारा ।
गुरु चेला मिल एक हुये जब, एक का मिला सहारा ॥ ,,
मिला एक यह नियम है भाई, चित से द्वन्द बिसारा ।
यह है यम, यम और नहीं कुछ, नियम में चित को धारा ॥ ,,
सत का ग्रहण नियम है सांचा, यम असत्य छुड़कारा ।
समझ जो आई फुरा विवेका, सुख से आसन मारा ॥ ,,

आसन मार विचार की दृढ़ता, प्राणायाम तत सारा।
इस विचार में रेचक पूरक, कुम्भक का व्यौहारा ॥ ,,
चित की वृत्ती निरोध को पाकर, प्रत्याहार संभारा।
कर अभ्यास मगन मन माना, सत को चित से धारा ॥ ,,
यही धारना धारन करना, ध्यान का भया उभारा।
ध्यान बना जब हुआ फकीरा, तब समाधि विस्तारा ॥ ,,
समता जागी ममता भागी, चमका ज्ञान का तारा।
निरविकल्प सविकल्प समाधी, शम्भु ने मन को मारा ॥ ,,
यह अष्टांग योग है गुरु का, सांचा सहज अकारा।
सुरत शब्द योग के साधन, मिटा भरम अंधियारा ॥ ,,
छुटी समाधि भया उत्थाना, फिर प्रपंच परिवारा।
साधन साध सन्त मत समझा, सहज समाधि सँवारा ॥ ,,
सहज समाध सहज चित वृत्ती, सहज योग चित धारा।
सहज में सहज सहज चित डोले, जीवन मुक्त उद्धारा ॥ ,,
सहस कमल दल ज्योति का दर्शन, त्रिकुटी धुन ओंकारा।
सुन्न महासुन्न हंसन लीला, सोहंग भँवर फुहारा ॥ ,,
ऊँचे चढ़ सत पद में बासा, रूप रंग तज डारा।
अलख अगम की सुन्दरताई, राधास्वामी नाम निहारा ॥ ,,
जीते जी व्यौहार परमारथ, नहीं मीठा नहीं खारा।
नहीं कड़वा नहीं तीखा लागे, कोमल नहीं करारा ॥ ,,
यह विदेह गति जीवन मुक्ति, यह सिद्धांत अपारा।
मैंने यह सब तुझे सुझाया, मेटा सकल विकारा।
सहज में तेरा काम बना है, सहज सहज छुटकारा ॥ ,,
सहज में सहज रूप पद दरसा, काल कर्म भय टारा।
राधास्वामी दीन दयाला, सन्त रूप अवतारा।
'सालिग्राम' गुरु की दाया, भया सहज निरतारा ॥ ,,

जब लग प्रालब्ध है भाई, भोग काट दे सारा।
भोगे प्रालब्ध तब कुछ नाहीं, आगे अगम अपारा ॥ फकीरा०
कट गई काल कर्म की फांसी, जनम जुआ नहीं हारा।
राधास्वामी की बलिहारी, रहे फकीर सुखारा ॥ ,,

[१८-३०८]

बिदेसी समझ ले अपने मन में ॥टेक॥

सबको देखा किया परेखा, समझ पड़ा नहीं जग का लेखा।
भोगा बिपत कलेस विशेखा, मन में रही पछताय ॥बिदेसी०
कल्पित जग का भोग बिलासा, कल्पित सब प्रपंच तमासा।
कल्पित आसा कल्पित बासा, मुख से निकसत हाय ॥ ,,
भाई बन्धु कबीले सारे, निज स्वारथ बस लागें प्यारे।
बिगड़े समय हुये सब न्यारे, एक न आवे जाय ॥ ,,
तेरा प्रीतम तेरे घट में, तू है पड़ी जग की खटपट में।
क्यों नहीं देखे तू तिलपट में, रहा हृदय में छाय ॥ ,,
क्यों फिरती है मारी मारी, क्यों जग भरम में हुई दुखारी।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, घट गुरु चरन समाय ॥ ,,

[१९-३०९]

गुरु स्वामी दया करो आज नई ॥टेक॥

बन्धन छूटे मोह भरम का, मन से चिंता भागे।
दुख आपति और संकट जावे, भक्ति भजन चित लागे ॥ आज०
मात पिता की सेवा धारूँ, साध चरन में प्रीती।
सत संगत के बचन सुनूँ जब, उपजे घट परतीती ॥ ,,
सुमति बसे मन कुमति बिनासे, प्रेम प्यार उर आवे।
ज्ञान ध्यान से नेह लगाऊँ, दुख दारुन न सतावे ॥ ,,
मन कर्म बचन रहूं नित सेवक, सदा तुम्हारा ध्याना।
सुमिरन भजन में समय बिताऊँ, यही मूल है ज्ञाना ॥ ,,

राधास्वामी सदा मनाऊँ, राधास्वामी गाऊँ ।
राधास्वामी नाम जपूँ और, राधास्वामी ध्याऊँ ॥ आज०

(२०-३१०)

नाम गुरु नित गाओ मेरे साधु, नाम गुरु नित गाओ ॥टेक॥
नाम ही ज्ञान ध्यान पुनि नाम ही, नाम ही गाय सुनाओ ।
नाम ही पाठ नाम ही पूजा, नाम से नेह लगाओ ॥ मेरे साधु०
नाम ही योग और नाम ही मुद्रा, नाम ही ताड़ी लाओ ।
नामी नाम में अन्तर नहीं कुछ, भेद अलौकिक पाओ ॥ मेरे साधु०
नाम की महिमा क्या कोई जाने, नाम जपो जपवाओ ।
नौका नाम नाम है खेवट, नाम से तरो तराओ ॥ मेरे साधु०
नाम ही सेतबन्ध रामेश्वर, नाम से लंक जिताओ ।
लौ लगी रहे नाम संग निसदिन, नाम पदारथ पाओ ॥ मेरे साधु०
जप तप तीरथ सब कुछ त्यागो, नाम की ज्योत जगाओ ।
नाम से रूप गुरु हिये दरसे, नाम से अलख लखाओ ॥ मेरे साधु०
नाम द्वैत का भरम बिनासे, पद अद्वैत में जाओ ।
प्रेम प्रीत रहे नाम के अन्तर, नाम भजो भजवाओ ॥ मेरे साधु०
नाम सार है घट के भीतर, नाम की धूनी रमाओ ।
नाम अमीरस प्रेम पियाला, अमृत नाम चखाओ ॥ मेरे साधु०
नाम की बंसी नाम की मुरली, नाम का शंख बजाओ ।
मोर तोर की कठिन जेवरी, नाम से बंध कटाओ ॥ मेरे साधु०
दाह जगत से चित्त हटाओ, घट में शोर मचाओ ।
राधास्वामी नाम ज़ात है गुरु की, नाम हिये में बसाओ ॥ मेरे साधु०

(२१-३११)

ब्रह्म क्या है ब्रह्म की, सबको समझ आती नहीं ।
गुरु की जब संगत मिली, फिर माया भरमाती नहीं ॥१॥
'बृह' बढ़ना 'म' मनन और, सोचना है जान लो ।
सोचना बढ़ना है लक्षण, ब्रह्म का तुम मान लो ॥२॥

जगत है सब ब्रह्ममय, और ब्रह्म सबका खेल है ।
बुन्द गति है सिंध की गति, दोनों ही का मेल है ॥३॥
ऐसी दृष्टि जब मिले, तब ब्रह्म की आवे समझ ।
ब्रह्म जब आवे समझ में, भरम की जावे समझ ॥४॥
सच्ची बातें राधास्वामी, ने बताईं आन कर ।
भूल में अब तुम न पड़ना, मेरे प्यारे जानकर ॥५॥

बिनती

(३१२ कुलसं० १२१४)

बन्दना करता हूं अपनी, और की क्या बन्दना ।
कोई जब हो दूसरा, उसका करूँ तब सामना ॥१॥
द्वैत है अद्वैत द्वैताद्वैत, और कुछ भी नहीं ।
जिस जगह देखो हूं व्यापा, आप मैं हूं सब कहीं ॥२॥
शुद्ध चित हूं बुद्ध हूं, निर्द्वन्द हूं नित मुक्त हूं ।
सब से न्यारा सब में पूरा, पृथक और संयुक्त हूं ॥३॥
सत्त चित्त आनन्द हूं, तीनों में मेरा भास है ।
मेरे ही आधार पर, जल थल पवन आकास है ॥४॥
ब्रह्म हूं सर्वज्ञ मैं, और जीव हूं अल्पज्ञ मैं ।
यज्ञ का मन्तव्य हूं, और आहुती हूं यज्ञ में ॥५॥
जब मिले अनुभव तो मेरे, रूप की पहचान हो ।
ज्ञान हो अनुमान हो, सत मत हो और विज्ञान हो ॥६॥
राधास्वामी के बचन, सतसंग में जाकर सुनो ।
अपने आपा को पिछानोगे, जो सुनकर तुम गुनो ॥७॥

॥ फुटकल शब्द ॥

धुन २० [१-३१३]

बाँसुरी बाजी मधु बन में ॥टेक॥

बंसी की धुन सुन जिहा हिया मोहे, सुध बुध नहीं रही तन में ।
गोप प्रेम मद माते डोलें, गोपी अचेत है मन में ॥ बांसुरी०
बंसी रस कोई नहीं जाने, वह नहीं श्रवन मनन में ।
ज्ञानी ज्ञान ध्यान में भूले, जोगी जोग जतन में ॥ ,,
सोहंग सोहंग बंसी बोले, जाग्रत और स्वपन में ।
सुषुप्ति में व्यापी धुन अद्भुत, व्यापी चौथे पन में ॥ ,,
मन बानी से ऊँची बंसी, वह नहीं कहन सुनन में ।
गूँजत पिंड ब्रह्मांड के अन्तर, गूँजत बस्ती बन में ॥ ,,
अनहद नाद शब्द सुन सूरत, लड़न चली है रन में ।
माया कर्म का माथा काटा, धँसी धुर पद छिन छिन में ॥ ,,

धुन १९ (२-३१४)

बांसुरी बाजी बाजी बाजी ॥टेक॥

ऋषि मुनि का ध्यान छूट गयो, शब्द अनाहत गाजी ॥१॥
प्रीतम प्रेमी संग मिल बैठे, हो गये दोनों राजी ॥२॥
यह बांसी धुन भँवर गुफा की, ढोल पखावज लाजी ॥३॥
भक्ति भाव की धूम मची है, साज अनूपम साजी ॥४॥

धुन १९ [३-३१५]

जनम अन्मोल नसाय रहो री ॥टेक॥

उत्तम करनी उत्तम रहनी, उत्तम कथनी भुलाय रहो री ॥१॥
सुमिरन ध्यान भजन नहीं कीन्हा, भूल भरम अटकाय रहो री ॥२॥
चित मलीन हीन हिय व्याकुल, रात दिवस पछताय रहो री ॥३॥
जड़ चेतन की गांठ न खोली, उरझ उरझ उरझाय रहो री ॥४॥

कर्म फांस जम काल कठिन अति, छिन छिन अधिक फँसाय रहोरी ॥५॥
साज साज कुसंग कुबुद्धि, मन तीनों से लगाय रहो री ॥६॥
काल कराल बयाल इन्द्रिन को, गल में हार पहनाय रहो री ॥७॥
साधु संग तज तज सतसंगत, माया में लपटाय रहो री ॥८॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, तुम्हरे द्वारे आय रहो री ॥९॥

धुन २० (४-३१६)

गुरु चरन की आसा निसदिन, गुरु चरन की आसा ॥टेक॥
स्वाँति बून्द गति चित्त बसावे, रहत पपीहा प्यासा।
पल पल पल पल पी पी रटते, काल करम की त्रासा॥ गुरु०
पूरी आस लगी गुरु पद से, जग से सदा निरासा।
जा को चरन प्राप्त गुरू का, सो क्यों होय उदासा॥ ,,
खुल खेले संसार खेल में, काट मोह का फाँसा।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, सकल अविद्या नासा॥ ,,

धुन १७ [५-३१७]

प्रान दाता दान दाता, नाम दीजे दान।
भक्ति दीजे पतित पावन, नष्ट हो मदमान ॥१॥
कष्ट दारुन दूर कीजे, मेट कर अज्ञान।
चरन शरन की ओट पकड़ी, बख्शिये निज ज्ञान ॥२॥
आया शरनागत तुम्हारी, राख लीजे लाज।
राधास्वामी की दया से, मेरा हो न अकाज ॥३॥

धुन १९ [६-३१८]

मन का रूप निहारो साधु, मन का रूप निहारो ॥टेक॥
मन ही राजा मन ही परजा, मन का सकल पसारो ॥साधु०
मन ही कुटिल मन ही है निर्मल, मन है अति ही करारो ॥ ,,
मन रथ गज है मन सब कुछ है, मन ही बनो असवारो ॥ ,,

मन परलोक लोक यह मन है, मन ही जगत बिस्तारो ॥ ,,
ज्ञान बिराग भक्ति सब मन है, मन ही इष्ट करतारो ॥ ,,
समझ बूझ अनुभव सब मन है, मन ही आचार विचारो ॥ ,,
मन तिरिया मन मातु बंधु कुल, मन सुत गृह परिवारो ॥ ,,
मन सुध बुध मन काम क्रोध, मन में भरो विकारो ॥ ,,
मन को सोध चलो गगना पर, सुनो राधास्वामी पुकारो ॥ ,,

धुन १६ (७-३१६)

धन्य धन्य सतगुरु दयाला, कृपा सागर दुख भंजन ।
संकट मोचन भव भय खंजन, काम निकंदन जन रंजन ॥१॥
कोटि काम छबि अंग बिराजे, शोभा धारी हितकारी ।
सुर मुनि ऋषि सब ध्यान लगावें, इन्द्र वरुण आज्ञाकारी ॥२॥
शेष सहस मुख बरणे महिमा, नारद शारद गुन गावें ।
अस्तुति ठानें पूजा धारें, भक्ति अनूपम बर पावें ॥३॥
अपरम्पार पार पुरुषोत्तम, व्यापक बरज महान महा ।
वेद बखाने लीला तेरी, समझ समझ पद पदकमल गहा ॥४॥
तू है सिंध अगाध गंभीरा, लहर विष्णु अज त्रिपुरारी ।
धन्य धन्य तू धन्य धन्य है, धन धन तू जगदा धारी ॥५॥
सबका प्यारा सबका प्रीतम, घट घट का तू नित बासी ।
आनन्द मंगल रूप है तेरा, आनन्द मय आनन्द रासी ॥६॥
सहस कमल में ज्योति निरंजन, त्रिकुटी पद का ओंकारा ।
सुन्न महासुन्न पारब्रह्म तू, भँवर गुफा सोहंग सारा ॥७॥
सत्तलोक का सत्त पुरुष तू, अलख अगम का करतारा ।
राधास्वामी धाम में राधास्वामी, सुरत शब्द का भंडारा ॥८॥
तेरी सेवा तेरी पूजा, तेरा सुमिरन ध्यान रहे ।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, तेरा ज्ञान हर आन रहे ॥९॥

धुन १७ [८-३२०]

अपरम्पार पार गुरु देवा, वार पार से पार रहा।
पार वार नहीं पावे कोई, पार रहा और वार रहा ॥१॥
धन्य धन्य है तेरी महिमा, क्या कोई जाने ऋषि मुनि।
करता धरता आदि निरंजन, नागर आगर परम गुनि ॥२॥
चतुर सियाना पंडित ज्ञानी, मन बुद्धि के पार है तू।
सब में रहता सबसे न्यारा, प्रेत प्रीत भंडार है तू ॥३॥
तू महेश है तू ब्रह्मा है, तू है विष्णु जगत पति।
लीला तेरी विचित्र रूप की, तू नेती नहीं नहीं एती ॥४॥

धुन १७ (९-३२१)

आदि अन्त के मरम को, सतसंग में पाया।
खुली आंख तब तत्व पद, दृष्टि में आया ॥१॥
अपने आप में खो गये, भूला निज आपा।
मापा आपे को नहीं, किया सबका मापा ॥२॥
गुरु मिले निज दया से, आपा दरसाया।
अपने आपे में थे छुपे, सब ब्रह्म और माया ॥३॥
अपने आपका ज्ञान नहीं, औरों को जाना।
सब विधि जान जनजान था, बिन गुरु के ज्ञाना ॥४॥
आपे में गुरु ज्ञान था, गुरु आप लखाया।
भरम मिटा दुर्मति गई, आपे को पाया ॥५॥
आप आप में आप था, आपे के भीतर।
आप मिला निज घट मिला, कुछ रहा न बाहर ॥६॥
राधास्वामी की दया, आपे को बूझा।
आपे को जब लख लिया, सब कुछ तब सूझा ॥७॥

धुन १६ [१०-३२२]

प्रेमी सुनो प्रेम की बात ॥टेक॥

सेवा करो प्रेम से गुरु की, और दर्शन पर बल बल जात ॥प्रेमी०

वचन पियारे गुरु के ऐसे, जस माता सुत तोतरी बात ॥ ,,

जस कामी को कामिन प्यारी अस गुरुमुख को गुरु का गात ,,

खाते पीते चलते फिरते, सोवत जागत बिसर न जात ॥ ,,

खटकत रहे भाल ज्यों हियरे, दर्दी के ज्यों दर्द समात ॥ ,,

ऐसी लगन गुरु संग जाकी, वह गुरुमुख परमारथ पात ॥ ,,

जब लग गुरु प्यारे नहीं ऐसे, तब लग हिरसी जानो जात ॥ ,,

मन मुख फिरे किसी का नाहीं, कहो क्योंकर परमारथ पात ॥ ,,

राधास्वामी कहत सुनाई, अब सतगुरु का पकड़ो हाथ ॥ ,,

धुन १६ [११-३२३]

सजनी गुरु का मिला संदेशा ॥टेक॥

धीरज धरो शान्ति चित राखो, यह है निज उपदेशा।

माया काल की बस्ती तज कर, जाओ गुरु के देशा ॥ सजनी०

नहीं वहां शोक न चिंता व्यापे, नहीं वहां कलह कलेशा।

नित आनन्द विलास चैन सुख, धरो हंस का भेसा ॥ ,,

नहिं वहां ब्रह्मा नहीं वहां विष्णु, नहीं वहां इन्द्र गनेसा।

नहीं वहां वरुण न वायु न अग्नि, नहीं जल थल नहीं सेसा ॥ ,,

नहीं वहां पिंड नहीं ब्रह्मंडा, गांव न बस्ती देसा।

एक रस जीवन पद निरवाना, दुख सुख नहीं लवलेसा ॥ ,,

जो चल जाये राधास्वामी धामा, दुख सुख नहीं लवसेसा।

भाग्यवती चल काल लोक तज, त्याग जगत का अंदेसा ॥ ,,

धुन १७ (१२-३२४)

नारी देख काम अंग उपजे, साधु देखे भक्ति।

जल के देखे निर्मलताई, यह विचित्र है युक्ति ॥१॥

लोभी लोभ हृदय जब आवे, लालच अधिक सतावे।

पीक पान की रतन दिखावे, गोपी चन्द भरमावे ॥२॥
लालच बस जब निरखी सीपी, रूपा समझ उठाया ।
भूला भटका चतुर सयाना, पीछे बहु पछताया ॥३॥
तृष्णा जल की हिये में व्यापी, मृग लख रेत में पानी ।
मृग तृष्णा जल भरम भुलाना, अन्त में प्रान गँवानी ॥४॥
भय बस भूत ठूँठ में भासा, नसी बुद्धि चतुराई ।
वैद बिचारे औषध लाये, भई न कोई भलाई ॥५॥
यह जग है माया की छाया, माया आप है झाई ।
जो कोई माया चित बसाये, पड़े भरम में साईं ॥६॥

॥ प्रातः काल की प्रार्थना ॥

धुन २० (१३-३२५)

तुम्हारा एक सहारा नाथ ॥टेक॥
मैं अजान चिन्ता वस व्याकुल, मन में भरा हंकारा ।
तीन ताप की अग्नि जलावे, कौन करे निस्तारा ॥ तुम्हारा०
लोभ मोह ने मुझे फंसाया, बूझे वार न पारा ।
गुरु उपदेश न चित्त समावे, हार हार बहु हारा ॥ ,,
धीरज दे मेरी बांह पकड़ कर, भव से करो किनारा ।
राधास्वामी सतगुरु दाता, मैं हूं दास तुम्हारा ॥ ,,

॥ मध्यान काल की प्रार्थना ॥

धुन २० (१४-३२६)

आस लगी तुम्हरे दरस की, दरस दिखा दो नाथ ॥टेक॥
मात पिता भाई सम्बन्धी, इनके झूठे प्रेम में बधी ।
मैं तो सब बिधि भई हूं अन्धी, सांची डगर दिखाओ नाथ ॥ आस०
आओ आओ चित में समाओ, सांवरी मूरति हिये बस जाओ ।

बिगड़ी मेरी बना भी जाओ, प्रीत की रीत सिखादो नाथ ॥ ,,
तुम हो सांचे सखा संघाती, तुम्हें रिझाऊँ दिन और राती ।
राधास्वामी मेटो सब उत्पाती, घट का मरम लखा दो नाथ ॥ ,,

॥ सोने से पूर्व की प्रार्थना ॥

धुन २० (१५-३२७)

मेरा संकट काटो नाथ ॥टेक॥

दीन दुखित और मलीन चित, कोई संग न साथ ।
कैसे दुखी जीवन को बिताऊँ, धरो सिर पर हाथ ॥ मेरा०
तुम हो मेरे सांचे रक्षक, मैं अजान अनाथ ।
भूल चूक को क्षमा करो प्रभु, चरन झुकाऊँ माथ ॥ ,,
साँची भक्ति दो दयामय, और प्रेम की दात ।
राधास्वामी की कृपा से, छूटे सब उत्पात ॥ ,,

धुन १६ (१६-३२८)

दीन हीन शरण में आया, भेंट भाव स्वामी लीजे ।
कृपा दृष्टि से अपने दाता, शरणागत धन दीजे ॥१॥
मैं तो निबल कुटिल खल कामी, क्रोधी महा मलीना ।
तुमने अवगुन देख के मेरे, दया पात्र मोहि कीना ॥२॥
धन्य धन्य गुरु परम सनेही, परम दयाल कृपाला ।
तिमिर मिटा अज्ञान भरम का, हृदय भया उजाला ॥३॥

धुन १७ (१७-३२९)

धन्य धन्य गुरु लीला तेरी, धन्य तेरी है बानी ।
धन्य धन्य तू धन्य धन्य है, अगम अथाह निशानी ॥१॥
आप प्रगट हो मुझे बनाया, निज उपदेश सुनाया ।
जोग जुक्त की रीति सिखाई, भक्ति का पन्थ चलाया ॥२॥

मर्म लखाया भेद बताया, बूड़त जीव तराया।
शब्द जहाज बिठाकर तूने, भव के पार लगाया ॥३॥
तेरी महिमा अगम अलौकिक, क्या कोई बरन सुनावे।
आप कहे तब समझ में आवे, द्वन्द फाँस कट जावे ॥४॥
राधास्वामी सतगुरु पाया, चरन शरन गह पकड़ा।
बन्ध मुक्ति का संशय मेटा, तोड़ा काल का सकड़ा ॥५॥

धुन १७ (१८-३३०)

योग को है वियोग का डर, भोग रोग और सोग।
द्वन्द रचना में पड़े हैं, कैसे समझें लोग ॥१॥
ज्ञान ध्यान की गम नहीं, नहीं बानी मन में सार।
भक्ति मुक्ति के फल को क्या दूँ, वह है मनन विचार ॥२॥
सुन्न सिखर पर मार आसन, चित्त ध्यान लगाय।
जप किया बहु तप किया बहु, जड़ समाध रचाय ॥३॥
हाथ आया कुछ नहीं, नहीं खुले हिय के नैन।
आपके चरनों में आया, तब मिला सुख चैन ॥४॥
पाय कर सुख चैन कुछ दिन, साध शब्द का योग।
सार समझा भेंट लीजे, आज सन्त संजोग ॥५॥

धुन १६ [१६-३३१]

माया छाया एक रूप हैं, पकड़े हाथ न आवे।
रूप जान ले इनका भाई, फिर नहीं यह भरमावे ॥१॥
जो भागे माया के भय से, वह कायर अज्ञानी।
माया मिथ्या कल्पित झूठी, नाटक खेल की खानी ॥२॥
नाटकशाला सब जाते हैं, देखन खेल तमाशा।
किसी के चित्त उदासी आई, किसी को हर्ष हुलासा ॥३॥
साधु साची रूप से देखें, अपना रूप न त्यागें।
नहीं वह भिड़ें न लड़ भिड़ कल्पें, नहीं माया से भागें ॥४॥

सूम बना माया की गठड़ी, अर्थ का लाड़ पियारा ।
सखी माल दौलत को भोगे, रहे सदा छुटकारा ॥५॥
माया नहीं हैं दुख का कारन, दुख अज्ञान है भाई ।
समझले अपना रूप अनूपा, फिर यह हो सुखदाई ॥६॥
काम है माया धर्म है माया, अर्थ है माया रूपा ।
जो नहीं इनका रूप पिछाने, गिरे भरम के कूपा ॥७॥
कूप गिरे सो गोते खावे, कभी नीचे कभी ऊपर ।
चेत न आवे समझ न पावे, भार कष्ट का सिर पर ॥८॥
सन्त समागम जो कोई आवे, सार भेद कुछ बूझे ।
राधास्वामी गुरु की दाया, निज स्वरूप की सूझे ॥९॥

धुन १६ [२०-३३२]

काम से उपजी मन में आसा, आसा चित में धारी ।
आसा बासा दृढ़ता आई, दृढ़ता मूल विकारी ॥१॥
इस दृढ़ता में बन्धन की जड़, सूत कात मन लाया ।
ताना बाना तान चलाया, बन्धन बीच फँसाया ॥२॥
बन्धन के बस दुचिता बाढ़ी, दुविधा दुर्मति खानी ।
साँप छछूँदर की गति जैसी, वैसा ही अज्ञानी ॥३॥
आस न तोड़े पास न छोड़े, रहे ताहि के पासा ।
जहाँ आसा तहाँ बासा पावे, अचरज अजब तमासा ।
यह बन्धन है काल की रसरी, विरला कोई लख पावे ।
राधास्वामी दया करें जब, मन की दुविधा जावे ॥४॥

धुन २१ (२१-३३३)

मुक्ति साधु रूप में, साधु मुक्ति रूप ॥टेक॥

कमल नीर सम जग में रहनी, देवें बास सुबास ।
जहाँ जायें जंगल में मंगल, दुख नहीं साधू पास ॥
सच्चे अगम अनूप ॥१॥

देह गेह की चिंता नाहीं, करें और का हित ।
यह बर दीजे सतगुरु स्वामी, साध सेव करूँ नित ॥
पड़ूँ न भर्म के कूप ॥२॥
राधास्वामी दया के सागर, दया मेहर की खान ।
सन्त रूप धर मुख से अपना, महिमा साध बखान ॥
अचरज अमर अरूप ॥३॥

धुन १७ [२२-३३४]

बीज से अंकुर अंकुर कोंपल, पात फूल सब आये ।
फूल से फल फल मीठा लागा, खाय ताहि तृप्ताये ॥१॥
काम से धर्म धर्म से सबको, अर्थ प्रापत होई ।
रचना का सिद्धान्त अद्भुत, बिरला समझे कोई ॥२॥
राधास्वामी मौज दिखाया, सार तत्व समझाया ।
जो नहीं सार वस्तु को समझे, मानुष जनम गँवाया ॥३॥

धुन २० [२३-३३५]

साधु मिला ओम् अस्थान ॥टेक॥

सहस कमल दल वृत्ति जमाई, विश्वमित्र धर ध्यान ।
भ्रूमध्य मिथिला पर ठहरे, तोड़ी शिव की कमान ॥१॥
सीता सती से विवाह रचाया, राम हुये बलवान ।
आये अवध शरीर को सोधा, दशरथ का किया हान ॥२॥
बन में जप तप संजम नेमा, कर बाढ़ा अभिमान ।
सूर्पनखा की नाक कटाई, खर दूषन घुमसान ॥३॥
रज रावन ने सीता हरली, पाया दुख महान ।
चल विहंग मारग के रस्ते, कपि मारग दरसान ॥४॥
कपि की चाल कठिन अति भारी, पहुँचे बीर हनुमान ।
लंका जाय अशोक बाटिका, देखी सीता आन ॥५॥

तब पिपीलिका मारग सोधा, सप्त सिंध गति जान।
बानर रीछ राछस सैना, लंका किया चढ़ान ॥६॥
रज तम सत गुन इनको समझो, वृत्ति सुशील सुहान।
रज रावण तम कुम्भकर्ण को, मारा तक तक बान ॥७॥
मेघनाद त्रिकुटी गढ़ जीता, सत विभीषन सन्मान।
सीता सत वृत्ति ले लौटे, चढ़ पुष्पक बीमान ॥८॥
देह अवध का काज सुधारा, पाया अद्भुत ज्ञान।
ताके पीछे गुप्त घाट में, घट सरजू में आन ॥९॥
कथा सुनी पर भेद न पाया, खुली न हिय की खान।
राधास्वामी की दाया से, सुरत शब्द मिल छान ॥१०॥

धुन १७ (२४-२३६)

शिव बैठे कैलास शिला पर, नन्दी वाहन संग।
जगमग चन्द्र ललाट पै सोहे, सिर से बहती गंग ॥१॥
पारवती संसार की माता, बायें अंग बिराजी।
दायें गनपत स्वामिकातिक, शिव के नित्य समाजी ॥२॥
नीलकंठ विख्यात जगत में, गले मुन्ड की माला।
कर में डम डम बाजे डमरू, साथ भूत बैताला ॥३॥
ब्रह्मरेन्द्र के ऊँचे शिखर पर, मेरु सुमेरु बिलासा।
मानसरोवर हंस विराजें, धारें शिव की आसा ॥४॥
ज्ञान ध्यान बैराग की मूरत, समझे कोई कोई ज्ञानी।
गुरु मिलें तब भेद बतावें, राधास्वामी की सहदानी ॥५॥

धुन २ [२५-२३७]

सत है सुख चित है सुख, सुख आनन्द ही का रूप है।
यह हमारी देह क्या है, ब्रह्म सुख का कूप है ॥१॥
सोत निर्मल जल का जैसे, कूप के है बीच में।
वैसे ही सुख का भी झरना, रूप के है बीच में ॥२॥

बाहरी वृत्ती हटाकर, जब हुये अन्तरमुखी।
भर्म दुख का मिट गया, हम होगये सच्चे सुखी ॥३॥
अंतरी बिरती के साधन सें, गये सब रोग सोग।
योग सुख का होगया, इससे न होगा अब वियोग ॥४॥
राधास्वामी ने बताया, सुख का साधन आनकर।
अपने अन्तर देख लो तुम, पुतलियों को तानकर ॥५॥
घट में अनहद धुन सुनो, बाहर लगाकर तीन बंद।
सुन्न में जाते ही मिट जायगा, सब भवदुख का द्वन्द ॥६॥
शब्द सुख है सुरत सुख है, घट में सुख भंडार है।
शब्द के साधन से, भव सागर से बेड़ा पार है ॥७॥

धुन २७ (२६-३३८)

आके बंधादे धीर प्यारे, आके बंधादे धीर ॥टेक॥
जग की भूल भुलैय्यां फँसी हूं, माया के दलदल में धँसी हूं।
भरम की रस्सी से मैं कसी हूं, उर में साले पीर प्यारे ॥१॥
दुख की गले में फांसी पड़ी है, पीछे की उलझी गांठ कड़ी है।
क्या कहूं आपत बिपत बड़ी है, नैनों बहता नीर प्यारे ॥२॥
टूटी नाव भँवर में अटकी, दशा देख बुद्धि मेरी खटकी।
कब तक रहूं दुबिधा में लटकी, करदे भव जल तीर प्यारे ॥३॥
नहीं मुझे समझ बूझ है प्यारे, रहती हूं नित तेरे सहारे।
सबके भरोसे त्याग दिये सारे, तेरी आस शरीर प्यारे ॥४॥
राधास्वामी दीन दयाला, तू दुखियों का है प्रतिपाला।
चरन लगादे करदे निहाला, भीर धीर गम्भीर प्यारे ॥५॥

धुन ३ [२७-३३६]

गुरु दाता ने भेद बतला दिया ॥टेक॥
भेद बताया गुर जतलाया, अन्तर दृष्टि खुलाई।
कर्म ज्ञान का सार सुझाया, घट की राह दिखाई ॥ बतला०

बात बनाना छोड़ो भाई, बात का सार पिछानो।
जान पिछान मान मन अपने, करनी गति चित ठानो ॥ बतला०
बक बक बक कर कुत्ता मर गया, शीश महल की छाया।
भोंका भोंक के होगया निरबल, यूँ ही प्रान गँवाया ॥ ,,
आप पियासा पानी न पीवे, दूध दान औरों को।
देने चला पियासा मर गया, जान प्रान तन मन खो ॥ ,,
बक बक करना सहज रीत है, इसमें क्या कठिनाई।
बोल बोल कर बुद्धि मति खोई, अन्त में मिली बुराई ॥ ,,
बात सुनी तो करनी कर फिर, कथनी बदनी छोड़ी।
करनी तो पूरी उतरेगी, जब बक से मुंह मोड़ी ॥ ,,
पुस्तक पढ़ी पोथी नित बांची, पड़ा ग्रन्थ के बन्धन।
जड़ चेतन की ग्रन्थि गढ़ी हुई, सुलझी एक न उलझन ॥ ,,
करनी वाले निकट हैं मुझ से, बकवासी रहें दूरी।
करनी करो तो अंग लगा लूँ, करूँ कामना पूरी ॥ ,,
इस संसार में जब आये हो, सार ग्रहण कर लीजे।
तज असार मन मनसा त्यागी, चित गुरु चरनन दीजे ॥ ,,
औरों के विचार का झूँठा, कब तक खाओगे भाई।
क्यों नहीं करनी को चित देते, करनी में है भलाई ॥ ,,
कुत्ते का स्वभाव नहीं अच्छा, टुकड़े कारन भरमा।
हाथी रहे एक अस्थल में, जाने कर्म का मरमा ॥ ,,
झूठी पत्तल क्यों नित चाटो, सीखो सिंह की रीती।
अपना झूठा औरों देदे, जो मति नहीं विपरीती ॥ ,,
राधास्वामी जग में आये, सुरत शब्द मत गाया।
निज अनुभव का पन्थ दिखाया, जो आया सो पाया ॥ ,,

धुन २ (२८-३४०)

देख चिन्ता नाम की कर, और सब चिन्ता बिसार।
तुझ को गुरु से प्यार है तो, गुरु को होगा तुझसे प्यार ॥१॥
ध्यान धर सुमिरन भजन में, गुरु की मूरत का सदा।
शान्त हो निर्भ्रांत हो, निरद्वन्द होकर कर संभार ॥२॥
जिस को जिस से हेत है, वह है उसी के अंग संग।
इसको समझेगा कभी, मन में जो आवेगा विचार ॥३॥
करता धरता तू नहीं है, करता धरता और है।
मौज में रह मौज ही से, आप ही होगा सुधार ॥४॥
राधास्वामी की दया से, मिल गई गुरु की शरन।
होके शरनागत जुये में, मन में अपने को न हार ॥५॥

धुन १६ (२९-३४१)

सोया समझा समझ विचारा, सार हाथ नहीं आया।
पक्षपात के उलझन उलझे, अपना भेद न पाया ॥१॥
पंडित शेख किताब में अटके, भोगें दुख सुख नाना।
पशुओं के सरदार बने वह, ज्यों अन्धों में काना ॥२॥
नहीं खुदा के भेद को समझा, नहीं ईश्वर पहिचाना।
अपने रूप की गम नहीं पाई, कैसे कहूं सियाना ॥३॥
राधास्वामी सन्त रूप धर, बख्श दिया निज ज्ञाना।
जीते जी है जीवन मुक्ति, जीते जी निरवाना ॥४॥

धुन २० (३०-३४२)

जो आया गुरु चरन छांह में, मोक्ष भक्ति फल पावेगा ॥टेक॥
हुई चरन में दृढ़ प्रतीती, मन में बसी भक्ति की रीती।
सत सुगम सहज साधन से, नया नित अनुराग बढ़ावेगा ॥ जो०
दिन दिन गुरु रंग रंगाना, संसार के पन्थ नहीं जाना।
पी प्रेम का मद मस्ताना, पपिहा बन भक्ति गगन मंडल
में पी पी रटन लगावेगा ॥ ,,

राधास्वामी दीन दयाला, कर देंगे वह आप निहाला।
सुरत शब्द का जोग सुखाला, बिन जुक्ति जतन करतूत सतपद ओर सिधावेगा ॥ ,,

धुन २० (३१-३४३)

प्रेम की सड़कें देखीं यार ॥टेक॥
पहली सड़क सुनहरे रंग की, खिली बसन्त बहार।
जग मग जोत दिया बिन बाती, जोती जोत मंझार ॥ प्रेम०
दूजी सड़क लाल रंग बाना, बीर बहूटि के रंग।
चली सुरत अँखियां भई लाली, सुनी थाप मृदंग ॥ ,,
तीजी सड़क नील परबत पर, चन्द्र जोत उजियारा।
अमी कुंड बने दायें बायें, बरनत बने न पारा ॥ ,,
चौथी स्वेत बरन छबि अद्‌भुत, देख सुरत हरषानी।
यहां आये मन शान्ती आई, सो नहीं जाय बखानी ॥ ,,
चारों सड़क लांघ पद सूझा, प्रेम का महल दिखाना।
सतगुरु का दर्शन तब पाया, मिल गया ठौर ठिकाना ॥ ,,
घट के भीतर चार सड़क यह, प्रेमी पन्थी जाने।
बिन देखे परतीत न आवे, कैसे कोई माने ॥ ,,
राधास्वामी दया साध की संगत, हम धुरपद चल आये।
प्रेम की धार हृदय से फूटी, प्रेम में आय समाये ॥ ,,

धुन २१ (३२-३४४)

घट का परदा खोल रे, घट जगत पसारा ॥टेक॥
घट में कासी घट में फांसी, घट में जम का द्वारा।
घट में ज्ञान ध्यान सन्यासी, घट ही में निस्तारा।
घट में घट को तोल रे, घट अगम अपारा ॥ घट का०
घट में ब्रह्मा वेद बिचारे, घट में विष्णु करतारा।
घट में शिव संसार संहारे, घट शक्ति की धारा।
घट में शब्द अनमोल रे, घट का लेउ सहारा ॥ ,,

घट का घाट पाट पहिचानो, पिंड देस दस द्वारा।
घट में खेल खिलाड़ी जानो, घट है जीत और हारा।
घट के बीच तू डोल रे, घट सब से न्यारा॥ ,,

घट में अटपट घट में सटपट, घट में मोह अहंकारा।
घट में घटपट घट में चटपट, घट में ब्रह्म उचारा।
घट की बानी बोल रे, घट अधिक पियारा॥ ,,

घट की निरख परख रखवारी, घट का करे विचारा।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, घट का खुला किवारा।
बाजत अनहद ढोल रे, घट चमका तारा॥ ,,

धुन १७ (३३-३४५)

गुरु की बानी महा अनुभवी, कोई समझे गुरु ज्ञानी।
समझ समझ बूझे मन अपने, बचन सार निज जानी॥१॥
पच्छपात तज मर्म लखाऊँ, सच्ची बात सुनाऊँ।
जो कोई आवे प्रेम भाव ले, ताही भेद बताऊँ॥२॥
गुरु ने जैसे मुझे चिताया, मैं भी सबहि चिताऊँ।
नाम रतन धन खान खुली है, नित्त प्रति दिलवाऊँ॥३॥
बिन गाहक बिन पारख पाये, केहि विधि रतन दिखाऊँ।
पारख गाहक जो कोई पाऊँ, प्रेम से अंग लगाऊँ॥४॥
गुरु का सौंपूं माल खजाना, निरख परख अधिकारी।
अपने साथ औरन को तारूँ, राधास्वामी की बलिहारी॥५॥

धुन १८ (३४-३४६)

सर्व समरथ साइयां, तुम जगत के आधार।
जीव भव जल में पड़े हैं, तुम लगाओ पार॥१॥
भँवर में नैया फँसी है, बुद्धि से लाचार।
रात गहरी बहु अँधेरी, सूझे वार न पार॥२॥

आओ आओ आओ दाता, कर दो बेड़ा पार।
तुम सहाई जीव निर्बल, करो आज संभार ॥३॥

शब्द डोरी हाथ देकर, खींच लो करतार।
धाम में दो अपने बासा, तुमहि हो रखवार ॥४॥
राधास्वामी दया सागर, दया के भंडार।
दीन हीन शरन में आये, करो सब की सुधार ॥५॥

धुन १७ [३५-२४७]

चल सूरत गुरु देस को, जहां अनहद बाजे।
जगमग जोत प्रकाश लख, शत सूरज लाजे ॥१॥
अमृत बून्द फुहार रस, बरसा बिन पानी।
महिमा अकथ अपार अति, क्या बरने बानी ॥२॥
प्रेम झरे बिगसे कँवल, भँवरा मंडलाने।
मलियागर की बास सों, मन चित हरषाने ॥३॥
धर्मी करमी संजमी, क्या जाने महिमा।
तीन लोक के अंड की, नहीं तासूँ उपमा ॥४॥
जब लग देखे न नैन से, क्या कोई बखाने।
राधास्वामी दीन उपदेस जब, तब ही मन माने ॥५॥

धुन २७ [३६-२४८]

आ जा आ जा मेरे पास, या मुझे बुलाले पास ॥टेक॥
मैं हूं तेरे जीव का जीवन, मैं हूं तेरी सांस।
मैं तो घट में तेरे बसता, तू क्यों भया उदासा ॥ आजा०
मुझ को देख देख घट अपने, धर चरनन विश्वास।
एक पलक बिसरूँ नहीं तुझको, तेरा करूँ सुपास ॥ ,,
मेरी आस धार ले चित में, जग से होय निरास।
मेरी आस से काम किया कर, कभी न सहना त्रास ॥ ,,

मैं हूं ज्ञान ध्यान भी मैं हूं, मैं दासों का दास।
दास दुखी तो मुझे भी दुख हो, करदूँ दुख का नास ॥ ,,
द्वादस चक्र छोड़ चढ़ ऊँचे, कर सत पद में बास।
वही रूप मेरा है साधु, स्वयम् ज्ञान प्रकास ॥ ,,
मेरा धाम नहीं काशी में, ना गिरवर कैलास।
तेरे घट में रहूं बिराजत, कर ले वहां तलास ॥ ,,
राधास्वामी चरन शरन में, सुख आनन्द हुलास।
भँवरा पद सरोज का होजा, पाय सुरंग सुबास ॥ ,,

धुन १९ (३७-३४९)

घट मंन्दिर पट खोल कर, कर दर्शन चितलाय।
अपना आपा त्याग कर, गुरु आपा नित ध्याय ॥१॥
आरत कर गा अस्तुति, घंटा शंख बजाय।
बीन पखावज बांसुरी, अनहद नाद गुँजाय ॥२॥
दीवा बाला प्रेम का, जोती जगमग होय।
लख प्रकाश बिच हिये में, मन मंदिर में सोय ॥३॥
तेरा तुझ में क्या रहा, तेरा सब कुछ मोर।
मेरा ले अपना बना, फिर कर मोर न तोर ॥४॥
राधास्वामी की दया, रह अलमस्त फकीर।
कभी न व्यापे जगत गति, उर नाहीं साले पीर ॥५॥

धुन २० [३८-३५०]

मौज आधीन दास रहे निसदिन, एक दिन काम करें गुरु पूरा ॥टेक॥
सेवक भाव कठिन है भाई, नहीं रन में ठहरे नर कूरा।
मौज निहार करे सेवकाई, सीस उतार लड़े कोई सूरा ॥१॥
सुमिरन भजन ध्यान सेवा से, काम क्रोध मद सब हो चूरा।
घट की खटपट चटपट पलटे, प्रगट हिये रवि शशि का नूरा ॥२॥

दुविधा दुचिताई न सतावे, बाजे सुहाना अनहद तूरा।
राधास्वामी मौज निरख कर चाले, लोभ के सिर पर मारे हूरा ॥३॥

धुन १ [३६-३५१]

घट में जब अनहद राग सुना, बाहर का गाना छोड़ दिया।
जब गुरु चरनन से मेल मिला, भव फन्द में आना छोड़ दिया ॥१॥
अन्दर में जोत जगी जगमग, हुये दूर लोभ मद मोह के ठग।
नहीं रोके कोई मेरा अब मग, माया का ठिकाना छोड़ दिया ॥२॥
संसार है यह अगमापाई, नहीं अपने मीत पुत्र भाई।
गुरु की जब पाई शरनाई, मन इनसे लगाना छोड़ दिया ॥३॥
लो नींद गई मन जाग गया, भय द्वन्द से आप ही भाग गया।
वैराग गया अनुराग गया, यह ताना बाना छोड़ दिया ॥४॥
राधास्वामी ने की है दया भारी, अधिकारी भया अन अधिकारी।
सुरत सत पद की हुई दरबारी, सब करना कराना छोड़ दिया ॥५॥

धुन १६ (४०-३५२)

शब्द का भेद बता दो, सतगुरु शब्द का भेद बता दो ॥टेक॥
कैसे मन चढ़े गगन के ऊपर, वह उपाय समझा दो ॥ सत०
प्रगटे जोत में अद्भुत जोती, हिये की आँख खुला दो ॥ ,,
जोत देख सुध बुध तन बिसरूँ, ऐसी लगन लगा दो ॥ ,,
घट में शब्द की हो झनकारा, अनहद नाद सुना दो ॥ ,,
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, चौथा पद दरसा दो ॥ ,,

धुन २० (४१-३५३)

घट का शब्द सुने कोई ज्ञानी ॥टेक॥
शब्द की महिमा अगम अपारा, क्या कोई बरने बरनन हारा।
शब्दहि मुक्ति जुक्ति भंडारा, शब्द सुरत की खानी ॥ घट का०
शब्द का योग महा सुखदाई, शब्द योग में नहीं कठिनाई।
सुरत शब्द की करो कमाई, सूझे अगम निशानी ॥ ,,

शब्द भेद ले घट में आओ, शब्द धाम पर सुरत लगाओ।
मन चंचल को तहां ठहराओ, मिटे भरम की खानी ॥ ,,
बिना शब्द झूठा सब धन्दा, बिना शब्द नर डोले अंधा।
गले पड़ा है काल का फन्दा, छूटन विधि नहीं जानी ॥ ,,
शब्द शब्द का सकल पसारा, शब्द है सार सार का सारा।
राधास्वामी चरन शरन बलहारी, सतगुरु की सहदानी ॥ ,,

धुन २० (४२-३५४)

अब मैं नाथ शरन में आया ॥टेक॥
मैं अजान अज्ञान की मूरत, मोह मान लपटाया।
बुद्धि बिवेक समझ नहीं मुझ में, मन भरमा भरमाया ॥ अब०
बाल जान अन्जान परख कर, दीजे पद की छाया।
दुखी अधीन दीन चित व्याकुल, जान न आप पराया ॥ ,,
भूल चूक अपराध मेट कर, कीजे करुना दाया।
त्राह त्राह प्रभु रच्छा कीजे, करम ने बहुत सताया ॥ ,,
अब नहीं सहन की शक्ति स्वामी, चित है अधिक घबराया।
मुझे तो इतनी समझ न आई, क्या अपराध कमाया ॥ ,,
शरन में आया है शरनागत, झटका धोखा खाया।
राधास्वामी परम दयाला, अब नहीं व्यापे माया ॥ ,,

धुन २० (४३-३५५)

नन्दू माया की निन्दा नहीं करना ॥टेक॥
माया अगुन सगुन की खानी, निराकार साकारा।
माया चेतन जड़ की सूरत, माया ब्रह्म पसारा ॥ नहीं करना०
माया रोक थाम है प्यारे, माया सिद्धि शक्ति।
माया जोग जुगत व्यौहारा, माया प्रेम और भक्ति ॥ ,,
माया बुद्धि बिवेक जगत में, माया सत सत ज्ञाना।
माया जप तप संयम क्रिया, माया सुमिरन ध्याना ॥ ,,
माया अन्त आदि है सबकी, माया मध्य की बासी।

त्रिगुनात्मक माया को जीते, तब हो पुरुष अविनासी ॥ ,,
माया पारवती सावित्री, माया लक्ष्मी मूरत।
माया काली कराल बिकराली, माया सारद सूरत ॥ ,,
माया बिन कोई रहे न जग में, माया पाले पोसे।
कैसा मूरख है वह प्राणी, नित उठ माया जो कोसे ॥ ,,
माया बनी सहाई सबकी, करतब करम सिखाये।
धरम मरम की राह दिखाकर, सत्तलोक पहुँचावे ॥ ,,
करनी करो तो रहनी आवे, रहनी अनुभव जागे।
नन्दू गुरु सेवा में रह कर, और वस्तु नहीं मांगे ॥ ,,
राधास्वामी मन में आकर, कोई यथार्थ गति बूझे।
करनी की जब करे कमाई, सार तत्व तब सूझे ॥ ,,

धुन २० (४४-३५६)

गुरु ने चिताया जग में आकर ॥टेक॥
नर शरीर सतगुरु ने धारा, जीव निबल को दिया सहारा।
भवसागर के पार उतारा, अपना सच्चा रूप दिखाकर ॥ गुरु०
शब्द योग की बिधि बताई, सुखमन मध्य राह दरसाई।
सोई सुरत को लिया जगाई, दया से अपने अंग लगाकर ॥ ,,
सतसंग द्वारा बचन सुनाया, सहज रीति से जीव चिताया।
अपना आपा उसे दिखाया, अनहद बानी घट में सुनाकर ॥ ,,
सहस कमल त्रिकुटी लखपाई, सुन्न महासुन्न गति परखाई।
भँवर में माया काल लखाई, अन्त में सतपद धाम में लाकर ॥ ,,
अगम अलख के पार अनामी, सन्त कहें जिसे राधास्वामी।
उसके चरन सरोज नमामी, प्रीत रीति प्रतीत दिलाकर ॥ ,,

धुन २० (४५-३५७)

तू ढूँढे किसको प्यारे, मैं तो निसदिन तेरे संग ॥टेक॥
नहीं मैं जोग जुगत में रहता, मैं तेरे अंग संग।

घट में अपने ढूँढ ले मुझको, चित न हो फिर भंग ॥१॥
सुमिरन ध्यान भजन और सेवा, कर तू सहित उमंग।
आरत ठान धाम त्रिकुटी में, धारे मेरा रंग ॥२॥
तेरे भीतर जमुना सरस्वति, बहती निर्मल गंग।
कर अस्नान ध्यान और पूजा, सबसे होय असंग ॥३॥
त्याग भरम दुविधा चतुराई, मन के सभी उचंग।
निश्चय धार गुरु को चित में, काल को करदे दंग ॥४॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, कर माया से जंग।
जो कोई गुरु का ध्यान लगावे, जग में होय न तंग ॥५॥

धुन २० (४६-३५८)

सुरत सुन्दर नार जगत में, कोई कोई बिरला जाने ॥टेक॥
कर सिंगार पुरुष तब रीझे, रीझ रीझ हरखावे।
नार का रूप सुहाना लागे, हर्ष के अंग लगावे॥ सुरत०
भौं के बीच सुनहिला बिंदा, ऊपर टिकली सोहे।
टिकली लाल लाल रहे जगमग, शोभा देख मन मोहे॥ ,,
टिकली पर है दुपहले टीके, टीके को न भुलावे।
माथे पर झूमर की सोभा, जगमग जोत दिखावे॥ ,,
मांग काढ के लट बिलगावे, मोतिन माँग भरावे।
बीच में हीरे पन्ने का गहना, रूप विचित्र बनावे॥ ,,
सिर पर है सोने का झूपना, निश्चल अधर कहावे।
यह सिंगार है सुरत नारका, कोई समझे समझावे॥ ,,
सुरत सहेली रंग रंगीली, अलबेली मतवाली।
अटखेली खेले नित पिउ से, लाड़ प्यार की पाली॥ ,,
राधास्वामी गुरु ने भेद बताया, भेद सार का सारा।
गाजे सुरत जब शब्द सुहाने, पिया का परखे प्यारा॥ ,,

धुन २१ [४७-३५६]

चल गिरवर कैलास, जो तू सच्चा पन्थाई ।।टेक।।
हर की पौढ़ी हरद्वार चढ़, सहसकमलदल घाटी ।
रुद्र नेत्र को खोल अन्तर में, समझले जग को माटी ।।
आज तेरी बन आई ।। चल०
जगमग ज्योत प्रकाशे घट में, ज्योतिर्लिंग अकारा ।
जोत जोत में जोत का दर्शन, जोत में जोत पसारा ।।
जोत में जोत समाई ।। चल०
डमरू शब्द की गूँज परख सुन, भ्रू मध्य आसन डारी ।
व्यापे जोर शोर तहाँ छन पल, प्रेम प्रतीत संभाली ।।
घंटा शंख बजाई ।। चल०
सुरत के अरघ में जोतलिंग का, दरस परस ततकाला ।
सुमिरन भजन ध्यान का लेले, हाथ त्रिशूल का भाला ।।
रूप में मन को लगाई ।। चल०
नन्दी वाहन कर असवारी, बरध बृत्ति चित लाना ।
परब को साध पार्वती मति संग, तब समझे गुरु ज्ञाना ।।
रहे समता लव लाई ।। चल०
परवत के आकार अटल बन, संग भूत बैताला ।
राग सुहाना अद्भुत सुन सुन, मधुर मनोहर ताना ।।
अनहद धुन सुखदाई ।। चल०
पीले भंग प्रेम भक्ति की, चित चंचलता भागे ।
काम क्रोध नहीं तुझे सतावें, शब्दयोग मन लागे ।।
नहीं रहे मन दुचिताई ।। चल०
प्रथम अस्थान त्याग अब प्यारे, त्रिपुर ओर सिधारो ।
अ उ म मृदंग ओम् सुन, सत रज तम को मारो ।।
गुरु के सन्मुख जाई ।। चल०

दूजा त्रिकुटी पद का मंडल, बीज मन्त्र उच्चारन।
गुरु चेले की जुग जब सूझे, बने अनोखा चारन ॥
यह युक्ति अनूप सुहाई ॥ चल०
तीजी मंजिल सुन्न देस की, ब्रह्म सिखर कैलासा।
मानसरोवर कर असनाना, हो रह गुरु का दासा ॥
सहज समाध लगाई ॥ चल०
सुन्न में सूझे पद निरबाना, हंस गति को पाना।
शिव का रूप बने फिर तेरा, यही परम कल्याना ॥
समझ मन अपने भाई ॥ चल०
आगे भँवर गुफा की खिड़की, बंसी धुन जहां गाजी।
काया माया काल जीत ले, अपना आपा साजी ॥
न हो फिर जग दुखदाई ॥ चल०
सतपद अलख अगम चढ़जा तू, धर राधास्वामी की आसा।
संतन का यह बल अस्थाना, पावे गुरुमुख दासा ॥
करे जो सहज कमाई ॥ चल०

धुन ५ [४८-३६०]

मेरा रूप लखे नहीं कोई, जग में मैं हूं सुन्दर नार ॥टेक॥

पति के प्रेम में सदा दिवानी, पतिव्रत धर्म रीति हिये ठानी।
पति की मूरत लख हर्षानी, चित धर प्रेम पियार ॥ मेरा०
आंख के भीतर पति विराजे, सूरज चन्द्र देख छबि लाजे।
घंटा शंख सहस दल बाजे, पति का रूप निहार ॥ मेरा०
शील सिंदूर से मांग भराई, धर्म वस्त्र से देह सजाई।
पति को निरख निरख मुस्काई, आपा सकल बिसार ॥ मेरा०
नाम रूप की है अधिकाई, पति सेवा में रहे भलाई।
पति से मिल गई सुन्दरताई, पति सांचे भरतार ॥ मेरा०

पति की सेवा हिये बसाऊँ, पति को सुमिरूँ पतिहि मनाऊँ ।
पति से निस दिन नेह लगाऊँ, राधास्वामी भये दयार। मेरा०

धुन १६ (४६-३६१)

भाग जगा गुरु पूरा पाया, अब माया भरमावे क्यों।
काल कर्म का बन्धन कट गया, मोह जाल फैलावे क्यों ॥१॥

धन्य धन्य गुरु तेरी लीला, गुन गाकर हरषाता हूं ।
तेरे चरन कमल में आकर, जीव निबल कहीं जावे क्यों ॥२॥

तू है मेरा मैं हूं तेरा, मेरा तेरा है व्यवहार ।
परमारथ का भेद मिला जब, जग प्रपंच बहकावे क्यों ॥३॥

तू है सिंध बुन्द मैं तेरा, बुन्द सिंध से अलग है कब ।
सिंध बुन्द है बुन्द सिंध है, इसको कोई बिलगावे क्यों ॥४॥

राधास्वामी सतगुरु परमदयाला, सिर पर हाथ रहे तेरा ।
मेरा हाथ चरन पर तेरे, सेवक हाथ हटावे क्यों ॥५॥

धुन २ [५०-३६२]

ढूँढ लो तुम घट में अपने, घट ही उसका धाम है ।
ढूँढ कर हो नाम का जप, घट में उसका नाम है ॥१॥

वह अवश्य घट में मिलेगा, घट में रहता है सदा ।
घट ही में है शान्ती, और घट ही में विस्राम है ॥२॥

वह न तीरथ बरत में है, और न वह मंदिर में है ।
पाता है उसको जो जपता, घट में आठों याम है ॥३॥

तुम न बहको तुम न भटको, और न आओ धोके में ।
है अघट घट में तुम्हारे, और उसी से काम है ॥४॥

ढूँढो ढूँढो ढूँढो ढूँढो, नाम जब है ढूँढ राव ।
ढूँढने में मुक्ति है, और धर्म है सत काम है ॥५॥

धुन १७ (५१-३६३)

चल चल सुरत उस देस को, जहां अनहद बाजे ।
सत्त पुरुष की आन, नित छिन प्रति छिन राजे ॥१॥
बानी अद्भुत अचरजी, धुन कान में आवे ।
सुन सुन सुन तारी लगे, नहीं मन भरमावे ॥२॥
रम्भा सुन्दर अप्सरा, थिक थिक थिक नाचें ।
वह सब सुरत स्वरूप हैं, सत लोक में राचें ॥३॥
जमघट हंसों की बनी, हंसन की पांती ।
वहां न वरण न आश्रम, नहीं कुल नहीं जाती ॥४॥
दुख कलेश का नाम नहीं, आनन्द दिन राती ।
रैन दिवस की गम कहां, पपीहा नहीं स्वांती ॥५॥
आनन्द मंगल होत नित, एक चित मन रमा ।
चकित भई यह लख दशा, लक्ष्मी और उमा ॥६॥
जनम मरन का दुख मिटे, अमरापुर जाये ।
जो कोई पहूंचे सत्त पद, अजरा बन जाये ॥७॥
कारण सूक्ष्म स्थूल से, ऊँचा है सत पद ।
बानी सुन नहीं कह सकें, वह गद या निज पद ॥८॥
गद से पद का भास है, भाषा में भाखा ।
बानी निर्मल विमल सुन, निज हृदय राखा ॥९॥
दिश दस मंगल होय, मंगला रागनी ।
कुन्डलनी पहुँचे नहीं, नहीं नागनी ॥१०॥
शक्ति युक्त संयुक्त वह, मुक्ति अस्थाना ।
जब सुरत पहुँची वहां, निश्चय कर जाना ॥११॥
बिन जाने कोई क्या कहे, कैसे मन माने ।
बिन माने निश्चय नहीं, निश्चय नहीं आने ॥१२॥
निज नैनों से देख कर, संशय न रहाई ।

वह इनका विश्राम है, जो धुन लव लाई ॥१३॥
सतपद धुरपद एक है, सुन स्रत बाता।
सतपद पहुँचे सन्त जन, त्यागा उत्पाता ॥१४॥
नहीं काल नहीं कर्म वहां, नहीं माया लवलेस।
मैं कहूं तोय समझाय कर, धर सतपद भेस ॥१५॥
कर साधन इस शब्द का, बन साधन सन्पन्न तू।
कुछ दिन पीछे आय, हो साधन सम्पन्न तू ॥१६॥
अनुभव बिन कोई क्या कहे, क्या समझे बानी।
सतगुरु मिलें तो भेद दें, और भेद निशानी ॥१७॥
जब लग गुरु से गम नहीं, गुरु गम न विचारा।
बिन विचार कैसे मिले, निज सार का सारा ॥१८॥
गुरु बिन मत चल पन्थ में, बिन गुरु दुहीला।
गुरु संग जो कोई चले, तब पन्थ सुहीला ॥१९॥
पुस्तक पोथी क्या पढ़े, क्या उनमें पावे।
पोथी पढ़ भ्रम में फँसे, औरन भरमावे ॥२०॥
वाचक ज्ञानी बहु मिले करनी के द्रोही।
वाचक ज्ञान के बीच में, बने क्रोधी मोही ॥२१॥
तू इस मारग मत चले, अन्धों का रस्ता।
अन्धा चले टटोल कर, दुख सहता सहता ॥२२॥
कथनी तज करनी करे, करनी चित लावे।
करनी से रहनी मिले, रहनी पद पावे ॥२३॥
करनी वाला पुत्र है, सतगुरु का साथी।
कथनी वाला दूर है, सम्बन्धी नाती ॥२३॥
रहनी है गुरु नाम में, गुरु इष्ट का साखी।
आप इष्ट का रूप वह, सच्ची मैं भाखी ॥२४॥

राधास्वामी की दया, पाया निरवाना।
सूरत सुन मेरी बात को, कर सत का पयाना ॥२६॥

धुन २० [५२-३६४]

गुरु तेरे चरन की बलिहारी ॥टेक॥
भरम मिटाया मोह नसाया, माया की कटी जड़ सारी।
सार सुझाया तत्व लखाया, नहीं रहा मैं संसारी ॥ गुरु०
भय न सतावे भव न डरावे, निस दिन तेरी रखवारी।
मोह मया चिंता नहीं व्यापे, मेरी अवस्था भई न्यारी ॥ ,,
जाग्रत स्वप्न एक सम लेखा, हटी हिये की अँधियारी।
निज स्वरूप का दर्शन पाया, चहुं दिस रहे मंगलकारी ॥ ,,
अघट प्रेम घट अंतर आया, प्रेम की फूली फुलवारी।
चम्पा श्रद्धा भक्ति चमेली, निरखूँ हृदय की क्यारी ॥ ,,
राधास्वामी गुरु ने अंग लगाया, होगया मैं आज्ञाकारी।
शब्द योग की करूँ कमाई, ज्ञान भान घट उजियारी ॥ ,,

धुन १७ (५३-३६५)

कुरुक्षेत्र यह तन नगरी है, अर्जुन तीर चलावे।
अन्ध तीर दुर्योधन मारे, भरम अज्ञान मिटावे ॥१॥
अर्जुन दास गुरु का बांका, धीर भीर गम्भीरा।
साधे तीर ज्ञान का पल पल, सोधे विकल शरीरा ॥२॥
कृष्ण सारथी गुरु मूरत है, रथ यह देही भाई।
अहंकार मन बुद्धि चित्त सब, घोड़ों की समुदाई ॥३॥
लड़े भिड़े शत्रु दल मारे, रन भूमी यश पावे।
पाँडवों को जय विजय दिलावे, अंध का वंश मिटावे ॥
सहज सहज में काम बनावे, धर राधास्वामी की आस।
ऐसा सेवक प्यारा मुझको, सो है अर्जुन दास ॥५॥

धुन २ [५४-३६६]

ध्यान मन मोहन का करके, मैं भी मोहन होगया।
दुख गया चिन्ता मिटी, आनन्द तन मन होगया ॥१॥
कीट भृंगी की दशा है, रंग गुरु का धार कर।
जब खिला घट में कमल, घट मेरा मधुबन होगया ॥२॥
ढूँढता फिरता किसे है, किस लिये तू रात दिन।
अपने हृदय में जब उसका, आप दर्शन होगया ॥३॥
अपने आपे को भुलाकर, गुरु का आपा धारकर।
आप में आपा लखा, मन आप दरपन होगया ॥४॥
राधास्वामी की दया का, पात्र तुम समझो मुझे।
शान्त हूं निर्भ्रान्त हूं, यह सहज साधन होगया ॥५॥

धुन १६ [५५-३६७]

प्यारी रंगी प्रेम के रंग में, अब प्यारी घबरावे क्यों।
प्रेम प्यार का रस है मीठा, जग की प्यास सतावे क्यों ॥१॥
गुरु ने धरा हाथ सिर ऊपर, रक्षा पल पल होती है।
मन चंचल क्यों धूम मचावे, भूल भरम भरमावे क्यों ॥२॥
चिंता किसकी प्यारी तुझको, अब निचिंत रह सब विधि तू।
तेरी चिंता गुरु को रहती, चिंता बस तू आवें क्यों ॥३॥
तेरे मन में तेरे तन में, रोम रोम गुरु व्याप रहे।
उनका बल ले घट में प्यारी, अबला कोई बतावे क्यों ॥४॥
राधास्वामी अचल मुकामी, अंग संग तेरे रहते हैं।
घट में दर्शन कर हित चित से, इधर उधर तू जावे क्यों ॥५॥

धुन १५ [५६-३६६]

क्यों तू भरम रही संसार, तेरा स्वामी तेरे घट में ॥टेक॥
मन्दिर पूजा तीरथ नहाया, तिलक लगाया भाई।
माला फेरी ध्यान जमाया, घट का मर्म न पाई॥ तेरा०

पुरी द्वारिका काशी मथुरा, भरम फिरा चौदेसा ।
अटपट खटपट उमर गँवाई, ज्ञान नहीं लवलेसा ॥ ,,
गीता पढ़ी भागवत बाँची, रामायण पढ़ भूली ।
सार पदारथ हाथ न आया, आगे यम की सूली ॥ ,,
स्वांग बनाया भेस बनाया, यह पाखंड पसारा ।
भेस से न्यारा साहेब तेरा, लख निज घट मत सारा ॥ ,,
अपने घट में बैठक ठानो, घट में करो गुरु पूजा ।
राधास्वामी भेद बतावें, स्वामी और न दूजा ॥ ,,

धुन ६ [५७-३६६]

सुन चित से उपदेस, सुरत मेरी भाग्यवती ॥टेक॥
मन इन्द्री के देस पड़ी है, यह नहीं तेरा देस ॥ सुरत०
देस तेरा है राधास्वामी धामा, यह तो है परदेस ॥ ,,
प्रेम प्रीत की पहर ले चूनर, धार हंसनी भेस ॥ ,,
करम वचन को साध ले अपने, मन को न दे तू ठेस ॥ ,,
राधास्वामी धाम की बांध ले आसा, जहां न दुख लवलेस ॥ ,,

धुन २२ (५८-३७०)

मैंने अपना रूप बिसारा, तब आप ही अन्जान बना ।
भर्म विकार की हुई उत्पत्ति, काम क्रोध मद मान बना ।
भूला भटका और भर्माया, क्या था और क्या आन बना ।
इस प्रपंच की लीला न्यारी, कैसा लीलावान बना ॥१॥
कर्म किया हट साधन किया, तपसी जपी भक्ति साधी ।
ईश्वर की भक्ति को चित दिया, वह भी ठहरी उपाधी ।
चैन न पाया शान्ति न आई, पूरी मिली नहीं आधी ।
जोग जुगत कर थका, जतन ने बुद्धि को बाधी ।
मन चंचल में दुविधा आई, चित चिन्ता की खान बना ।
इस प्रपंच की लीला न्यारी, कैसा लीलावान बना ॥२॥

गुरु मिले सतसंग कराया, सत संगत के सुने बचन।
चित को रोका मन को रोका, रोक थाम से किया श्रवन।
श्रवन किया तो फिर इस श्रवन का, सहज में होगया आप मनन।
श्रवन मनन के पीछे कर लिया, उस बानी का निध्यासन।

तत्वमसि कहा तब गुरु ने, तब स्वरूप का ज्ञान बना।
इस प्रपंच की लीला न्यारी, कैसा लीलावान बना ॥३॥

मैं हूं ब्रह्म ब्रह्म नहीं मुझसे, कभी अलग और नहीं न्यारा।
मेरा रूप अगम और अलख है, मैं इनसे भी हूं पारा।
अपना प्यार प्रेम जब भाया, अपने आपका मैं प्यारा।
मैं हूं परे पार हूं सबसे, और कोई होगा वारा॥

सोहं अहं ब्रह्मास्मि कह निकला, ब्रह्म का पहिचान बना।
इस प्रपंच की लीला न्यारी, कैसा लीलावान बना ॥४॥

मैं नहीं कान आँख और देही, मैं नहीं मन चित हंकारा।
मैं नहीं कर्म भक्ति और बुद्धि, रूप मेरा सबसे न्यारा।
मैं नहिं उनका यह रहते हैं, क्यों मेरे आधारा।
अयं आत्मा ब्रह्म अखंडं, अद्वतीय अमृत सारा।

अपनी समझ आप अब आई, शान्ति का अवसान बना।
इस प्रपंच की लीला न्यारी, कैसा लीलावान बना ॥५॥

चौथे पद की समझ तब आई, तुर्या पद सहजहि पाई।
समझ बूझ नहिं किंचित मुझको, नहीं सहनी पड़ी कठिनाई।
तुर्या छोड़ा तुर्यातीत हुआ, तब मेरी बन आई।
अपने में अब आप समाना, कैसी दुर्मति दुचिताई।

गुरु दाता गुरु ज्ञानी ध्यानी, गुरु से नाम का दान बना।
इस प्रपंच की लीला न्यारी, कैसा लीलावान बना ॥६॥

मैं क्या हूं कोई कैसे जाने, कहन सुनन में नहीं आता।
नहीं मरता नहीं जीता हूं मैं, नहीं आता कहीं नहीं जाता।

आप भरम कर आपको भूला, कैसे कोई भरमाता।
यह भी लीला एक थी मेरी, नहीं तू क्यों धोका खाता।
राधास्वामी सतगुरु पूरे, मिले तो ज्ञान और ध्यान बना।
इस प्रपंच की लीला न्यारी, कैसा लीलावान बना ॥७॥

धुन ८ (५६-३७१)

दया कीजै मुझको चरनों में लीजे, बैठा संग में ज्ञान गम आप दीजे।
समझ आये संसार का तत्व सारा, मिटे भर्म माया करम का विकारा॥
विमल चित मन शुद्ध बुद्धि हो निर्मल, अहंकार में सच्ची शक्ति का हो बल।
खुले अनुभव और ब्रह्म का भेद पाऊँ, वह क्या है वह कैसा है सब को जताऊँ॥
दया दृष्टि हो दास पर राधास्वामी, कमल पद में निस दिन नमामी नमामी।

धुन १७ (६०-३७२)

धन्य धन्य गुरु देव दया सागर धनी। बख्शा सुरत शब्द भेद किया दिल का गनी॥
चरन कमल की धूर आंख में जब लगाई। खान खुली निज हृदय में सुख सम्पत पाई॥
सहस कँवल दल में किया ज्योती का दर्शन। घंटा शंख की नाद का हुआ सहज ही श्रवन॥
बंकनाल के पार चढ़ त्रिकुटी पद परसा। सुनी ओउम् धुनि घट में ही ओंकार जो दरसा॥
सुन्न महासुन्न दसम दर मानस अस्नाना। हंसगती जब पाईया चुना मोती ज्ञाना॥
चार शब्द जहां गुप्त हैं बानी अति निर्मल। अधिकारी कोई सुन हिये सुरत का बल॥

भँवर गुफा के मध्य में मुरली धुन गाजी। सुन सुन सूरत हरषती हुई मन में राजी ॥

सोहंग से परचा भया सोहंग गति पाई। अब भव में नहीं मैं फँसू गुरु की शरनाई ॥

सतपद में सत धाम है सत बीन का बाजा। सत्त सत्त का शब्द याम आठों तहां गाजा ॥

अलख अगम के पार पार संतन का धामा। राधास्वामी धाम में मिला अब बिस्रामा ॥

धन्य धन्य तू धन्य है यह धन्य कमाई। सहजहि कट गया जाल छुटा जग अगमा पाई ॥

बाहर भीतर एक रस निज रूप पसारा। प्रगटे दीन दयाल दिया मोहि आय सहारा ॥

राधास्वामी नाम कह कह तारी लागी। सुरत शब्द के योग से सुरत भई बिस्माधी।

धुन ४ (६१-३७३)

तू अमीर तू वजीर, तू फकीर सांचा।
तू गुरु की अब पकड़ी ओट, त्याग जगत भाव खोट।
सही घनी जम की चोट, अब न लगे आँचा ॥ तू०
सार गह तज असार, झूटा जग का पसार।
सतगुरु को कर ले यार, सांच मीत जांचा ॥ ,,
राधास्वामी राधास्वामी, सतगुरु हैं तेरे हामी।
राधास्वामी पद नमामी, गह के चरन बांचा ॥ ,,

धुन १६ [६२-३७४]

मैं पैय्यां परूँ अब मेरा आप सुधार करो ॥टेक॥
भव जल में नहीं नाव न बेड़ा, बहियां पकर मुझे पार करो ॥ मैं०
गोते खाते बहु दिन बीते, अब तो गुरु निस्तार करो ॥ ,,

लहर लहर विच भँवर भँवर है, अपनी दया उद्धार करो ॥ ,,
हाथ पांव नहीं शक्ति है बाकी, समरथ तुम ही संभार करो ॥ ,,
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, प्रेम अगनी उदगार करो ॥ ,,

धुन १६ [६३-३७५]

लीला तेरी न्यारी प्रभु जी, लीला तेरी न्यारी ॥टेक॥

ब्रह्मा विष्णु भेद नहीं पावे, नहीं जाने त्रिपुरारी ॥ प्रभु जी०
माया बस सब रहे भुलाने, भटक भटक भटकारी ॥ ,,
करम जाल और काल चक्र में, निसदिन जिया दुखारी ॥ ,,
सबहि नचावत नाच अनोखा, राजा रंक भिकारी ॥ ,,
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, चकित भये नरनारी ॥ ,,

धुन १६ [६४-३७६]

आजा रंगीले यार, छवि तेरी मुझको भागई ॥टेक॥

सूना पड़ा था यह मन मंदिर, अब तेरी मूरत आगई ॥आजा०
सुरत को घंटा शंख मिला जब, अनहद नाद बजा गई ॥ ,,
तिल को उलट सहस कमल में, जोत में जोत समा गई ॥ ,,
त्रिकुटी में ओंकार की लीला, अद्भुत रूप दिखा गई ॥ ,,
दृष्टि खुली हिया जिया हर्षाना, सुन्न समाध रचा गई ॥ ,,
भँवर गुफा में बंसी बाजी, कोटिन कृष्ण लजा गई ॥ ,,
सतपद अलख अगम राधास्वामी, चरन शरन गुरु पा गई ॥ ,,

धुन १७ (६६-३७७)

गुरु दरस दिखा गुरु दरस दिखा, तेरा अद्भुत रूप है प्यारा ।
मन तिमिर मिटा मन तिमिर मिटा, घट चमके रवि शशी तारा ॥१॥
तेरी बांकी अदा तेरी बांकी अदा, मेरे हिया जिया को अति भाई ।
तेरा ध्यान करूँ तेरा ध्यान करूँ, हित चित से मैं दिन राती ॥२॥

घट भीतर आ घट भीतर आ, घट का घर पड़ा है सूना।
तेरी लगन लगी तेरी लगन लगी, बिरह ज्वाला तपे दिन दूना ॥३॥

धुन १९ [६६-३७८]

प्रेम की भट्टी प्रेमी बैठे, पीते प्रेम पियाला हो ॥टेक॥
अमृत रस से भरा पियाला, अद्भुत अधिक रसाला हो ॥
जो नहीं पिया स्वाद क्या जाने, कैसे बने मतवाला हो ॥
इस प्याले का कठिन है पीना, मांगे सीस कलाला हो ॥
लोभी तन मन सीस न अरपे, उरझा जम की ज्वाला हो ॥
साधु संग में गुरु गम पाये, दुर्मति घट से निकाला हो ॥
पी पी तृप्त भये दिन राती, छूटा जग जंजाला हो ॥
लाली लाली अँखिया गुरु छवि देखी, अन्तर भया उजाला हो ॥
मतवाले से कोई न हटके, हानी करे नहीं काला हो ॥
कुंजी घर की सुरत शब्द की, खुल गया मनका ताला हो ॥
आपहि द्वन्द मिटा सब भव का, सुख से भया निराला हो ॥
नहीं कोई गुरु बिन है अपना, बहु बिधि देखा भाला हो ॥
एकचित होय स्वामी चरनन लागा, दुचिता का भय टाला हो ॥
नाम सुधा रस गुरु ने बख्शा, तन भया प्रेम पियाला हो ॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, होगया सहज निहाला हो ॥

धुन २१ (६७-३७९)

आजा रंगीले यार तेरी छबि चित में समा गई ॥टेक॥
दुर्मति त्यागूँ चरनों लागूँ, जग के मोह मया से भागूँ।
बाँकी अदा मन भागई ॥ अरे आजा रंगीले०
सबको छोड़ा, नाता तोड़ा, तुझसे नेह का रिश्ता जोड़ा।
तेरे शरन में आ गई ॥ अरे आजा०
नहीं संसारी न मैं विभिचारी, तुझ से होगई मेरी यारी।
भक्ति भाव फल पा गई ॥ अरे आजा०

गुरु है दाता गुरु पितु माता, गुरु हैं सम्बन्धी हित भ्राता।
गुरु के रंग रंगा गई ॥अरे आजा०

जगदाधारी जग हितकारी, राधास्वामी चरन शरन बलिहारी।
माया ओर मैं ना गई ॥अरे आजा०

धुन १८ (६८-३८०)

दीन बन्धु दयाल स्वामी, तुम दया के सिंध।
निज दया से बंध काटो, छूटे द्वन्द का बंध ॥१॥

काल कर्म का कड़ा बन्धन, जीव रहे लपटाय।
बिधि न जाने छूटने की, उरझ उरझ फँसाय ॥२॥

दया कीजे भक्ति दीजे, तार लीजे आप।
पुण्य फल तुम्हरे चरन में, कटें जग के पाप ॥३॥

सुरत शब्द का योग निर्मल, सहज सुगम सुहेल।
जीव पावें परम पद को, चित चरन से मेल ॥४॥

राधास्वामी राधास्वामी, राधास्वामी नाम।
दान दीजे बासना से, चित्त हो उपराम ॥५॥

धुन ६६ [६६-३८१]

सतगुरु प्यारे ने सुनाया, पिया का संदेशा हो ॥टेक॥
सुन सुन सुरत भई मस्तानी, मेटा भव का अंदेसा हो ॥१॥
छिन भंगी माया विस्तारा, व्यापा भरम कलेसा हो ॥२॥
काल मते की दुर्मति छोड़ी, ममता नहीं लवलेसा हो ॥३॥
तिल की ओट पहाड़ लखा जब, त्रिकुटी किया प्रवेसा हो ॥४॥
सुन्न में पहुंची सुन्न गति निरखी, महासुन्न का देसा हो ॥५॥
भँवर गुफा की खिड़का अद्भुत, पहुँचे कोई दरवेसा हो ॥६॥
अलख अगम के पार ठिकाना, राधास्वामी धाम उजेसा हो ॥७॥

धुन १६ [७०-३८२]

हम होगये गुरु के गुरु के, नाता नहीं जग से कुल से ॥टेक॥
गुरु देवन के देवा, सब करो गुरु की सेवा ॥१॥
गुरु मानुष तन धर आये, गुरु गुप्त भेद दरसाये ॥२॥
गुरु सम नहीं कोई रक्षक, सम्बन्धी जानो तक्षक ॥३॥
गुरु रूप लखे नैनों से, गुरु शब्द सुने श्रवन से ॥४॥
गुरु ने सत रूप दिखाया, गुरु अलख अगम दरसाया ॥५॥
गुरु रूप धरा राधास्वामी, गुरु के पद कमल नमामी ॥६॥

धुन १७ (७१-३८३)

धन्य घड़ी धन्य दिवस, धन्य समय आया।
धन्य धन्य धन्य धन्य, धन्य तेरी माया ॥१॥
भूले थे जग आस, ज्ञान रतन पाया।
तुझसे नहीं कोई निराश, धन्य तेरी दाया ॥२॥
भक्तन लाज काज, जोड़ा मंगल समाज।
आनन्द सुख बिभो आज, चारों ओर छाया ॥३॥

धुन १६ [७२-३८४]

गुरु जम का फन्द कटा दिया, भव दारुन द्वन्द हटा दिया ॥टेक
माया जाल का उलझन भारी, घटते घटते घटा दिया ॥१॥
अमृत नाम स्वाद रस मीठा, हितचित आन चटा दिया ॥२॥
नाम रतन के जो अधिकारी, तिन में आप बटा दिया ॥३॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, जिभ्या नाम रटा दिया ॥४॥

धुन १६ (७३-३८५)

चल गुरु मारग चल गुरु मारग, जगत वासना प्यारी रे ॥टेक
कान पड़े जब शब्द रसीला, सोया मनुआ जागी रे ॥१॥
मया मोह दुर्मति चतुराई, सबही अचानक भागी रे ॥२॥
पग पग बरसे अमृत धारा, जड़ी अखंडित लागी रे ॥३॥

भक्ति भाव सुख आनन्द मंगल, सूरत भई सुहागी रे।
चलत चलत धुरपद नियरानी, मन हुआ सहज बिरागी रे॥
कर्म धर्म का बन्धन टूटा, जम घर देदी आगी रे।
चमकत बिजली बोलत दादुर, चातक भये अति रागी रे॥
गुरु दया से निज पद पाया, अब क्या काहु से मांगी रे।
मेरु सुमेरु शिखर जब दरसा, मन भया सत अनुरागी रे॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, परम प्रीति रस पागी रे॥

धुन १६ (७४-३८६)

तेरे भक्ति भाव नहीं मन में प्रानी, भूला माया के पन में ॥टेक॥
काम क्रोध और छल चतुराई, रहा इसी के जतन में।
गुरु का ध्यान न गुरु की पूजा, नहीं तू गुरु की लगन में॥
मानुष जनम मिला रहो निस दिन, सुमिरन ध्यान भजन में॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, भजले गुरु छिन छिन में॥

धुन १६ (७५-३८७)

छांड़ो मन कुटिलाई साधो, छांड़ो मन कुटिलाई ॥टेक॥
अनहोनी कभी होनी नाहीं, होनी काटि न जाई॥
वृथा उपाय करे नर मूरख, गह सतगुरु शरनाई॥
सिंध अपार अगम जल भरिया, रह रह कर लहराई॥
ता में जीव जन्तु बहुतेरा, थाह न कोई पाई॥
बाढ़े घटे घटे और बाढ़े, रोक सके को आई॥
देव दैत नर सुर मुनि बूड़े, बूड़ी सब दुनियाई॥
ऊँचे गगन मंडल शशि डोले, प्रतिबिम्ब होय आई॥
जब लग चंद उदय हुये तारे, सिंध बाढ़ किम जाई॥
मिट गये चंद गुप्त भये बादर, धरती आकास समाई॥
आवागमन के फंद कटाने, राधास्वामी हुये हैं सहाई॥

धुन १७ (७६-३८८)

साधो यह जग अगमापाई, तासों कौन भलाई ॥टेक॥
छिन में उपजे छिन में बिनसे, ज्यों बादर की छांई ।
धन दौलत का रूप पिछानो, सपना है रैनाई ॥
बालू भीत उठाई दिन दिन, तासों नेह लगाई ।
पल छिन भीतर विनस जात है, यह तो महा दुखदाई ॥
पढ़ा लिखा भरमा भरमाया, भाई बुद्धि चतुराई ।
अवध घटी काया भई निर्बल, सूझ परी तब भाई ॥
आसा तृष्णा काल का फांसा, उरझ उरझ उरझाई ।
कैसे छूटन होय तुम्हारा, जो नहीं गुरु सुरझाई ॥
त्राह त्राह कर सतसंग आओ, ले उनकी शरनाई ।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, बिगड़ी बात बनाई ॥

धुन १८ (७७-३८९)

चरन गुरु हिरदे धार रही ॥टेक॥
भव की धार कठिन अति भारी, सो अब उलट बही ।
गुरु बिन कौन संभारे मन को, सुरत उमंग अब शब्द गही ॥
कोटिन जन्म भरमते बीते, काहू मेरी आन न बांह गही ।
अबके सतगुरु मिले दया कर, शब्द भेद उन सार दई ॥
नौ को छोड़ द्वार दस लागी, अच्छर मय नौनीत लई ॥
नौका पार चली अब गुरु बल, अगम पदारथ लान सही ॥
क्या क्या कहूं कहूं गति नाहीं, सुरत शब्द मिल एक हुई ॥
रहनी गहनी की बात नियारी, सन्त बिना कोई नाहिं कही ॥
सुन्न शिखर चढ़ महा सुन्न लख, भँवर गुफा पर ठाठ ठई ॥
सत्त नाम सत धाम निरख धुर, अलख अगम गति पाय गई ॥
सुरत निरत संग चली अगाड़ो, राधास्वामो राधास्वामी चरन मई ॥
अब आरत सिंगार सुधारी, प्रेम उमंग भी बहुत चढ़ी ॥

काल कला सब दूर बिडारी, दयाल सरन अब आन लई ॥
पचरंग बाना पहन विराजे, शोभा धारी आज नई ।
जीव काज निज भवन छोड़कर, जमा दूध फिर होत दही ॥
मथ मथ माखन काढ़ निकारा, बिरले गुरुमुख चाख चखी ।
राधास्वामी दीन दयाला, चढ़ो अधर निज धाम यही ॥

धुन २० (७८-३९०)

खोज री पिया को निज घट में ॥टेक॥

जो तुम पिया से मिलना चाहो, तो भटको मत मग में ।
तीरथ बरत कर्म आचारा, यह अटकावें मग में ॥ खोज री
जब लग सतगुरु मिलें न पूरे, पड़े रहोगे अघ में ।
नाम सुधारस कभी न पाओ, भरमो योनी खग में ॥ ,,
पंडित काजी भेष शेख सब, अटक रहे डग डग में ।
इनके संग पिया नहीं मिलना, पिया मिले कोई साधु समग में ॥
यह तो भूले विषय वास में, भर्म बसे इनकी रग रग में ।
बिना संत कोई भेद न पावे, वे तोहि कहें अलग में ॥ ,,
जब लग संत मिले नहीं तुमको, खाय ठगोरी तू इन ठग में ।
राधास्वामी शरन गहो तो, रलो जोति जगमग में ॥ ,,

धुन १९ (७९-३९१)

राधास्वामी करो मेरा बेड़ा पार ॥टेक॥

मुझ समान दुखिया नहीं कोई, देख लिया तिहुं लोक मँझार ।
दिन नहीं चैन रात नहीं निद्रा, कर्म का पड़ा बहुत सिर भार ॥ रा०
रहा किसी का नहीं सहारा, मेरी लाज के तुम रखवार ॥ ,,
अपने बैरी पराये शत्रु, मेरी दृष्टि नरक संसार ॥ ,,
चरन कमल में आन पड़ी हूं, राधास्वामी करो सँभार ॥ ,,

धुन १७ (८०-३६२)

मेरे घट में अनहद बाजे बाजे बाजे।
धुन मधुर रसीले गाजे गाजे गाजे ॥१॥
सत सार शब्द अब पाया पाया पाया।
सुरत साज अनूपम साजे साजे साजे ॥२॥
मन अद्भुत रंग दिखाया दिखाया दिखाया।
मद मोह लोभ सब भाजे भाजे भाजे ॥६॥
प्रकाश विचित्र प्रकाशा प्रकाशा प्रकाशा।
हिये सतगुरु मेरे विराजे विराजे विराजे ॥४॥
राधास्वामी खेल खिलाया खिलाया खिलाया।
निरवानी हुआ मैं आजे आजे आजे ॥५॥

धुन १७ [८१-३६३]

धुन अनहद में चित लाया लाया लाया।
चढ़ अधर घाट गुरु पाया पाया पाया ॥१॥
सुरत झूम चली मद माती माती माती।
घट राग सुहावन गाया गाया गाया ॥२॥
उत्तम पद निश्चल दरसा दरसा दरसा।
माया का देखा छाया छाया छाया ॥३॥
माया करम सब त्यागा त्यागा त्यागा।
धुरपद में आया आया आया ॥४॥
राधास्वामी मौज दिखाई दिखाई दिखाई।
गुरु चरन ओर तब धाया धाया धाया ॥५॥

धुन १६ (८२ -३६४)

नर भजन बिना पछतायेगा, नर अन्तकाल पछतायेगा ॥टेक॥
सांसों सांस जात है अवसर, फिर यह हाथ न आयेगा ॥
आवेगी जब लहर मौत की, फिर न संभाला जायेगा ॥

मुट्ठी बाँधे आया है नर, मुट्ठी बांधे जायेगा। नर०
जग का झूठा सकल पसारा, इससे क्या तू पायेगा ॥
करना है सो करले प्रानी, नहीं तो मुँहकी खायेगा ॥
ज्ञान ध्यान भक्ति गुरु सेवा, फिर क्या करे करायेगा ॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, भव के भरम मिटायेगा ॥

धुन १७ [८३-३९५]

मुझको बतादे अपना ठिकाना, तेरा है धाम कहां साधु।
नाम बतादे पता बतादे, अपना जतादे निशां साधु ॥
तेरी कुटी है किस तीरथ में, किस जां तेरा मकां साधु।
मैं भी करूँ हित चित से दर्शन, रहता है तू जहाँ साधु ॥
तेरी बानी अमृत मय है, मीठी तेरी जबां साधु ॥१॥
पढ़ा लिखा कुछ समझ न आया, भूल भरम में मन अटका।
जम के हाथ बिके सब प्रानी, माया काल का पड़ा झटका ॥
दुख कलेश से दुखी हैं सारे, जनम मरन का है खटका।
दया से नेह से हमें सुनादे, भेद गुप्त मानुष घट का ॥
तेरी बानी अमृत मय है, मीठी है तेरी जबां साधु ॥२॥
भवसागर का अगम पंथ है, नाव पड़ी मँझधारा है।
पग पग पड़े भंवर का धोका, यहां से दूर किनारा है ॥
काली घटा गगन में छाई, सूझे वार न पारा है।
सुन सुन कहते हैं क्या प्रानी, चहुँ दिस हाहाकारा है ॥
तेरी बानी अमृत मय है, मीठी है तेरी जबां साधु ॥३॥
तीन ताप के अग्नि कुन्ड में, सब निस वासर जलते है।
छोड़ धरम का सीधा रस्ता, टेढ़े रस्ते चलते हैं ॥
स्वर्ग नर्क में जीव जन्तु सब, नित नया चोला बदलते हैं।
दे उपदेश दीन दुखियों को, हाथ शोक से मलते हैं ॥
तेरी बानी अमृत मय है, मीठी है तेरी जबाँ साधु ॥४॥

कोई अद्वैत द्वैत में भूले, कोई बने योगी ज्ञानी।
किसी ने न्यारा पंथ चलाया, किसी की चाल है मनमानी।
भक्ति भाव से नहीं परिचय कुछ, प्रेम की महिमा नहीं जानी।
दरस दिखा दे डगर बता दे, आके सुना अपनी बानी।
तेरी बानी अमृत मय हैं, मीठी है तेरी जबाँ साधु ॥५॥

धुन १ [८४-३६६]

गुरु नाम से बेड़ा पार हुआ, सुखदाई सकल संसार हुआ।
अब जग नहीं कारागार हुआ, सुख चैन का नित व्यवहार हुआ ॥१॥
चिंता न रही दुविधा न रही, मन की सब दुर्मति दूर हुई।
मैं क्या थी क्या से क्या हूं बनी, कैसे कहूं क्या निस्तार हुआ ॥२॥
घर में सुख है मन में सुख है, सुख ही सुख व्याप रहा चहुँ दिस।
गुरु भक्ति में आनन्द हुआ, सब विधि मेरा उद्धार हुआ ॥३॥
सुख का जब तार बंधा जगमग, घट में प्रगटा भक्ति का मग।
भक्ति सुखदाई हुई मुझको, सुख भक्ति का व्यौहार हुआ ॥४॥
राधास्वामी ने की है दयाभारी, अब मैं नहीं किंचित संसारी।
जल पच्छी का जीवन प्राप्त हुआ, गुरु भक्ति का विस्तार हुआ ॥५॥

धुन ३ [८५-३६७]

राधास्वामी की मौज रहूं चित धार ॥टेक॥
जो कुछ होगा मौज से होगा, मौज विरुद्ध न करना।
मौज में सदा भलाई सबकी, क्यों चिन्ता कर मरना ॥ रा० स्वा०
बलि को इन्द्रासन की इच्छा, यज्ञ विधान रचाया।
मौज से वामन रूप प्रगट भया, तुरत पताल पठाया ॥ ,,
दशरथ राम तिलक को चाहे, करे उपाय घनेरी।
मौज उसे बनवासी बनावे, कथा ऐसी बहुतेरी ॥ ,,
दुर्योधन धन धाम का भूका, पांडव धोका दीन्हा।
मौज हुई महाभारत ठन गई, कुल कलंक सिर लीना ॥ ,,

यह सब हैं इतिहास पुराने, सोच समझ मन आया।
राधास्वामी दया से मौज पिछानी, मौज से चित्त लगाया॥ ,,

धुन २ [८६-३९८]

जिन को गुरु से प्रेम है, वह मौज के आधार हैं।
उनके बेड़े भव के सागर से, सहज में पार हैं॥१॥
थिर बचन मन थिर सुरत थिर, तन को अपने थिर करो।
नाम फिर सतगुरु का, स्थिरताई से घट में तुम जपो॥२॥
बंद मुँह हो कान और, आंखों को अपने करलो बंद।
नाम लो इस रीत से, घट में प्रगटे सूर चन्द॥३॥
किसकी इच्छा है तुम्हें, इच्छा ही यम की फांस है।
जब नहीं इच्छा रही, दुख और भरम का नास है॥४॥
राधास्वामी गाइये, और राधास्वामी ध्याइये।
राधास्वामी नाम ले ले, राधास्वामी पाइये॥५॥

धुन २० (८७-३९९)

मनुआ सोच समझ पग धरना ॥टेक॥
चंचल मनुआ कहा न माने, क्या उपाय अब करना।
गुरु के नाम का सुमिरन निसदिन, या बिधि भवजल तरना॥१॥
रोग सोग में आयु बीती, ठंडी सांस का भरना।
गुरु के नाम से संकट भागे, क्यों नहीं नाम सुमिरना॥२॥
सतगुरु तेरे सदा सहाई, यम के भय से डरना।
राधास्वामी अंग संग जब, क्यों फिर दुख से मरना॥३॥

धुन ११ (८८-४००)

है पिंड घट तुम्हारा, ब्रह्मांड घट बना है।
दोनों की न्यारी लीला, दोनों में घट पना है॥१॥
है ब्रह्म उससे व्यापक, और तुम हो इसमें व्यापक।
दोनों की एकता है, दोनों का सामना है॥२॥

जो इसमें उसमें भी वह, समझेगा कोई ज्ञानी ।
अज्ञानी समझे कैसे, अज्ञान में सना है ॥३॥
सतसंग गुरु का करले, जिससे विवेक बाढ़े ।
तब समझे भेद घट का, क्यों भरम से तना है ॥४॥
मन मत की चाल तजकर, गुरु मत का ले सहारा ।
मन मत भरम है मद है, और जग की बासना है ॥५॥
झूठी है देह काया, झूठे हैं काल माया ।
झूठी है चित की छाया, सब झूठी कामना है ॥६॥
बातें यह भेद की हैं, राधास्वामी ने बताया ।
बिन गुरु दया पवन को, मुठी में बांधना है ॥७॥

धुन १७ (८९-४०१)

क्यों सोवे जग में नींद भरी, उठ जागो जलदी भोर भई ।
पन्थी सब उठकर राह लई, तू मंजिल अपनी बिसर गई ॥१॥
सतगुरु का खोज करो प्यारी, संग उनके घाट चलो न्यारी ।
भवसागर है गहिरा भारी, गुरु बिन को जाय सके पारी ॥२॥
भक्ति की रीति सुनो प्यारी, गुरु चरनन प्रीति करो सारी ।
तज संशय, भरम करम जारी, तब सुरत अधर घर पग धारी ॥३॥
चढ़ गगन शिखर तन मन वारी, धुन बीन सुनो सतपद न्यारी ।
फिर अलख अगम जा परसा री, राधास्वामी चरन पर बलिहारी ॥४॥

धुन ६ [९०-४०२]

उदय हुआ मेरा भाग री, राधास्वामी गुरु पाया ॥टे॥

जब से गुरु के चरन में आई, सोया मनुआ जाग री,
व्यापे नहीं माया ॥ उदय०

जनम जनम के संकट मेटे, पाया अचल सोहाग री,
सत गुरु की दाया ॥ ,,

आंख खुली निज रूप संभाला, द्वन्द जगत से भाग री,
मोहे नहीं काया ॥ ,,
ज्ञान ध्यान का सार मिला अब, भक्ति अटल वर मांग री,
सुख चहुँ दिस छाया ॥ ,,
कहना मान पियारी मेरा, राधास्वामी पद से लाग री,
तज अपना पराया ॥ ,,

धुन ६ (६१-४०३)

सुरत चली पग धार री, राधास्वामी धुर धामा ॥टेक॥
पहली मंजिल सहस कमल दल, पीत ज्योत की धार री,
घंटा धुन काना ॥ सुरत०
दूसरी मंजिल त्रिकुटी आई, काल सूर विस्तार री,
धुन ओम का गाना ॥ ,,
तीसरी मंजिल सुन्न महासुन्न, सेत चन्द्र उजियार री,
सारंग गत जाना ॥ ,,
चौथी मंजिल भँवर गुफा की, सेत सूर पर कार री,
मुरली बजवाना ॥ ,,
पांचवीं मंजिल सत्त धाम की, ज्योती की भरमार री,
राधास्वामी बखाना ॥ ,,

धुन २ [६२-४०४]

तार सुमिरन का बंधा जब, समझो तब तरजाओगे।
जीते जी सुमिरन भजन और, ध्यान का फल पाओगे ॥१॥
तार सुमिरन का न टूटे, नाम की जब लौ लगी।
वह तरेगा तारेगा लाखों को, अपने जीते जी ॥२॥
तार सुमिरन का न टूटे, तार को रखो संभाल।
अन्त में है मुक्ति पद, हो जाओगे इससे निहाल ॥३॥

तार सुमिरन का न टूटा, नाम की तारी लगी।
शब्द धुन की गूँज मन को, मीठी और प्यारी लगी ॥४॥
तार सुमिरन का न टूटे, सुमिरो साँसों सांस तुम।
राधास्वामी की दया से, कर लो पूरी आस तुम ॥५॥

धुन २६ (६३-४०५)

लगी लगन उस पीव से, अब नहीं टूटे तार ॥
अब नहीं टूटे तार, प्रीत प्रीतम से लागी।
जग की आस भरोस, हिये से अपने त्यागी ॥
त्याग के तप से तपी, तपी मैं दिन और राती।
हृदय बिरह की आग तपे, ज्यों दीपक बाती ॥
प्रीत रीति अति कठिन है, कोई सके नहीं टार।
लागी लगन उस पीव से, अब नहीं टूटे तार ॥

धुन २६ [६४-४०६]

प्रेम में वर्ण विवेक नहीं, नहीं अचार व्यवहार ॥
नहीं अचार व्यवहार, कठिन है प्रेम का नाता।
प्रेम पन्थ की डगर, कोई कोई बिरला जाता ॥
बिरला जाता कोई, वरण और कुल को तज के।
प्रभु को ले अपनाय, नाम उस प्रभु का भज के ॥
खाये बेर प्रसन्न हो, शबरी से कर प्यार।
प्रेम में वरण विवेक नहीं, नहीं अचार व्यौहार ॥

धुन २६ (६५-४०७)

लौ लागी जब जानिये, तार टूट नहीं जाय ॥
तार टूट नहीं जाय, एक रस समय बितावे।
दुख सुख के व्यौहार भाव को, मन नहीं लावे ॥
अटल अचल दृढ़ प्रेम, मगन घट अन्तर रहना।
सुने न और की बात, न अपने मन की कहना ॥

जीते सुमिरे पीव को, मर कर पीव समाय।
लौ लागी तब जानिये, तार टूट नहीं जाय॥

धुन २६ (९६-४०८)

लगी लगन छूटे नहीं, कितनो करो उपाय॥
कितनो करो उपाय, रोग यह बड़ा है भारी।
सहे कलेजे घाव, लगी जब बिरह कटारी॥
घायल की गति लख, कौन जो घाव न खावे।
अन्तर में है चोट, कोई कैसे दरसावे॥
प्रेम का मारा न जिये, सिसक सिसक दम जाय।
लगी लगन छूटे नहीं, कितनो करो उपाय॥

धुन २६ [९७-४०९]

परमारथ धन क्यों मिले, लिया टके का मंत्र॥
लिया टके का मंत्र, गुरु किया भिक्षु भिकारी।
मांगे सबसे भीख, भीख का बन व्यवहारी॥
और की रोटी खाय, खोय पुरषारथ अपना।
जागृत में भी देखे तत्व का, वह नहीं सपना॥
झूठा पाखंड यन्त्र है, झूठा ही है तन्त्र।
परमारथ धन क्यों मिले, लिया टके का मन्त्र॥

धुन २६ [९८-४१०]

ब्रह्म बढ़े चिन्तन करे, यही ब्रह्म का अर्थ॥
यही ब्रह्म का अर्थ, और कोई अर्थ न दूजा।
सोये बढ़े सो ब्रह्म, वही करे ब्रह्म की पूजा॥
बढ़ो बढ़ो बढ़ चलो, सोच कर नित ही बढ़ना।
जीवन का रस मिले, बृद्धि में जीवन गढ़ना॥
बृद्धि भाव चिन्तन नहीं, उसका जीना व्यर्थ।
ब्रह्म बढ़े चिन्तन करे, वही ब्रह्म का अर्थ॥

धुन २६ [९९-४११]

लेना हो सो जल्द ले, अवसर जासी चाल।
अवसर के चूके नरा, मारे काल कराल ॥१॥
मारे काल कराल, फँसावे यम की फांसी।
बिगड़े अपना काम, होय जग भीतर हांसी ॥२॥
दया राखिये चित्त में, कीजे दुखी निहाल।
लेना हो सो जल्द ले, अवसर जासी चाल ॥३॥

धुन २६ [१००-४१२]

दया धरम यह लीजिये, यही वस्तु है सार।
दया धर्म का मूल है, साधो करो विचार ॥१॥
साधो करो विचार, मनुष देही जो पाई।
वृथा जन्म गया बीत, जो मन में दया न आई ॥२॥
जब लग स्वाँसा पिंड में, करले पर उपकार।
दया धरम गह लीजिये, यही वस्तु है सार ॥३॥

॥ कुण्डलियां ॥

(१०१-४१३)

मैंना तोता बोल कर, पड़े फन्द के जाल।
जो नर बोले बोल अति, कैसे होय निहाल ॥१॥
कैसे होय निहाल, शक्ति तन मन की खोवे।
बने दुखी और दीन, वह जन्मों को रोवे ॥२॥
रोवे जनम जनम को, सुखी न हो बाचाल।
मैंना तोता बोल कर, पड़े फन्द के जाल ॥३॥

छन्द

छन्द १ [१०२-४१४]

करम किया भक्ति किया ज्ञान कथा भाई।
हिये ना विवेक आया सार ना सुझाई ॥

गनपत हैं कर्म रूप विष्णु भक्ति देवा।
शिव हैं विज्ञानवान सुर नर करें सेवा॥
तीनों के तीन काम तीन भाव प्यारे।
तीन ही गुन तीन रूप तीन आधारे॥
गनपति से स्टष्टि कर्म विष्णु पालन पोषन।
शिव जी से ज्ञान मर्म हृदय आये तो बन॥
रज है गनेश सत विष्णु की बड़ाई।
तम शिव है महादेव दीनन सुखदाई॥

छन्द २ [१०३-४१५]

चूहा गनेश चढ़े गरुड़ विष्णु वाहन।
नन्दी बैल पीठ शम्भु मारें निज आसन॥
पांच हाथ के गनेश पांच भुजा धारी।
मस्तक सेंदूर सोहे मूष की सवारी॥
विष्णु स्वरूप देखा चार भुजा वाला।
मस्तक पर तिलक केसर उर मुक्ता माला॥
शिव का दर्शन विचित्र दोय भुजा सोहे।
भस्म देह चन्द्र मूल मुन्डमाल मोहे॥
गनपत का लाल रंग बिष्णु रंग नीला।
इन्द कुन्द शम्भु अद्भुत छवि लीला।

छन्द ३ [१०४-४१६]

तीनों तीन प्रश्न मैंने पूछे मन से।
यह क्या है कोई आखे भिन्न भिन्न तिनके॥
उत्तर यह मिला मुझे मन की प्रभुताई।
तीन के हैं तीन मन सोच समझ भाई॥
मूढ़ मूस गुरुड़ चंचल बैल है अज्ञानी।
इनकी दशा कोई लखे गुरु के संग प्रानी॥

कर्म करे मूढ़ भक्ति चंचल सुविवेका ।
ज्ञान अज्ञानी लहे धरे चित्त एका ॥
तीन के उपाय तीन तीन का हो साधन ।
तीन देव तीन विधि तीन आराधन ॥

छन्द ४ (१०५-४१७)

मूढ़ मूष के शरीर गनपत बन चढ़ना ।
कर्म धर्म साध कर्म पन्थ में न अड़ना ॥
चंचल गरुड़ चेत जाय बिष्णु भार पाकर ।
अज्ञानी भी बैल चढ़े शम्भु रूप आकर ॥
कर्म लहे भक्ति-लहे ज्ञान लहे निर्मल ।
सिद्धि ऋद्धि शक्ति लहे मन को करे प्रबल ॥
तीन गुन जीते या विधि आगे पद धारे ।
चौथा पद समझ आवे संगत के सहारे ॥
तब गिरे गुरु के चरन त्रिगुन दोष खोकर ।
जागे तब सोया हृदय मोह नींद सोकर ॥

छन्द ५ (१०६-४१८)

एक जन्म कर्म करे दूजे जन्म भक्ति ।
तीजे जन्म ज्ञान लहे सूझे निज युक्ति ॥
चौथे गुरु चरन कमल बास लौ लावे ।
नर शरीर सुफल करे भरम में न आवे ॥
मन चित बुद्धि त्याग दृढ़ किया हंकारा ।
शूद्र वैश्य चत्री छोड़ ब्राह्मण तन धारा ॥
ब्रह्मचर्य गृही और तपसी बनवासी ।
चौथा तब सार लहें कोई सन्यासी ॥
सार पाय पार जाय सुरत शब्द मत से ।
शब्द सार निरख परख तब सतपद पावे ॥

छन्द ६ [१०७-४१६]

सोच समझ गुरु के निकट तब आया भाई।
गुरु की पद कमल धूर सीस पर लगाई ॥
गनपत के भुजा शम्भु देह विष्णु माथे।
तीनों को लगा धूर रहा गुरु के साथे ॥
कर्म भक्ति ज्ञान तीनों सुधरे तब मेरे।
काल जम की फांसी कटी टूटे हेर फेरे ॥
जीते जी काम बना द्वन्द भाव भागा।
नित्य मुक्त शुद्ध भया बाढ़ा अनुरागा ॥
काम मिला धर्म मिला अर्थ मिला सारा।
मुक्ति मिली त्याग राग द्वेष संसारा ॥
राधास्वामी चरन कमल सीस जब झुकाया।
क्रोध गया लोभ गया काम मोह माया।

दोहा गुरु पद धूर को सिर चढ़ा, धार गुरु का रंग।
राधास्वामी दया करो, चित्त न हो कभी भंग ॥

॥ कवित्त ॥

कर्म (१०८-२४०)

कर्म का अर्थ है नाम का सुमिरन करो,
सुमिरन सों चित को अन्तर ठैराइये।
यही है परम मंत्र यही है निज तंत्र,
इसी के साधन से मूल तत्व पाइये।
नाम के महातम को कोई बड़भागी पाय,
नाम ही शब्द है तासों लौ लाइये।
नाम को सुमिर सुमिर दिन रैन साधन करो।
अन्त में राधास्वामी धाम को जाइये ॥

भक्ति (१०६-४२१)

मन के चिदाकाश में कोटि सूरज चन्दा उगे,
मन में गुरु रूप की मूरत निहारिये।
तारों के दीवे बाल जोती जगाय जगमग,
आरति कर नेत्र को अन्तर उघारिये।
मन के आकास को थाल के समान जान,
श्रद्धा और भक्ति के मोती भराइये।
प्रीति प्रतीति बढ़े सुख आनन्द लहे,
ऐसी कर आरति राधास्वामी को रिझाइये॥

ज्ञान (११०-४२२)

अनहद झनकार सुन शब्द की बहार देख,
शब्द की धार में मन को ठैराना है।
शब्द सत चित है शब्द आनन्द है,
शब्द में लय और चिन्तन को पाना है॥
सुन्न में समाधि लगी, ताड़ी अति गाढ़ी लगी,
भँवर की गुफा चढ़ सुरत को आना है।
सतपद धाम जा धुरपद विस्राम पाय,
राधास्वामी चरन निरवान पद सुहाना है॥

॥ कुण्डलियाँ ॥

धुन २६ (१११-४२३)

राधास्वामी बाग में, खिला सुहाना फूल॥
खिला सुहाना फूल, प्रेम का कमल कहावे।
फैली बास सुबास, निकट दुर्गन्ध न आवे॥१॥
जिस घट में नहीं प्रेमरस, सो मरघट सम होय।
द्वेष ईर्षा दुर्वचन, प्रगट सड़ांद होय॥२॥

प्रेम प्रीति परतीत लख, मेट हिये का सूल।
राधास्वामी बाग में, खिला सुहाना फूल ॥३॥

धुन २५ (११२-४२४)

फूटी आंख विवेक की, लखे न सन्त असन्त।
जाके संग दस बीस है, ताका नाम महन्त ॥
ताका नाम महन्त, करे अनुचित व्यवहारा।
त्याग सन्त मत राह, जनम के जुये में हारा ॥
सिख साखा तो बहुत हैं, सतगुरु संग न भाव।
ऐसे जन के निकट में, भूल कोई मत आव ॥
फूटी आंख विवेक की, लखे न सन्त असन्त।
जाके संग दस बीस हैं, ताका नाम महन्त।

धुन २६ (११३-४२५(

सिंहों के लँहड़े नहीं, हंसों की नहीं पांत।
लालों की नहीं बोरियां, साध न चलें जमात ॥
साध न चलें जमात, रहें वह सब से न्यारे।
दया भाव हिये धार, सदा सतगुरु के प्यारे ॥
प्रेम प्रीत परतीत में, अघट अमोघ अगाध।
दम्भ चाल करनी करे, ताहि कहो मत साध ॥
सिंहों के लँहड़े नहीं, हंसों की नहीं पांत।
लालों की नहीं बोरियां, सन्त न चलें जमात ॥

धुन २५ (११५-४२७)

गिरही में तो प्रेम गति, दासा तन का भाव।
नन्दू सहज है साधना, जो कोई जाने दाव ॥
दास बना तो दे सभी, इष्ट नाम तब ले।
सेवक है तो सेव कर, चित गुरु चरनन दे ॥

क्या गिरही का धर्म है,समझ के कर व्यवहार।
बिन समझे पग दे नहीं, मन में रहे विचार ॥

धुन २६ [११५-४२७]

भावी अटल अपार है, कोई समझे ज्ञानी ॥
समझे ज्ञानी ज्ञान से, नहिं बुद्धि लड़ावे।
तर्क कुतर्क निवार के, क्यों साख बढ़ावे ॥१॥
भावी बस श्रीराम, हिरन को मार गिराया।
रावन से अनबन हुई, बहु युद्ध मचाया ॥२॥
धर्मराज की बुद्धि को, भावी ने बिगाड़ा।
बन बन डोलत फिरे, बजा भारत का नगाड़ा ॥३॥
भावी बस श्री कृष्ण ने, अपना कुल मारा।
भावी बस नर का छुटे, सब बुद्धि विचारा ॥४॥
दुर्योधन की आंख में, पड़ी भर्म की धूरी।
आसा तृष्णा राज की, कर सका न पूरी ॥५॥
होनहार होकर रहे, यह निज कर जानी।
भावी अटल अपार है, कोई समझे ज्ञानी ॥६॥

धुन २६ (११६-४२८)

जग की आसा त्यागकर, कर सतगुरु की आस।
शक्ति शक्तिवान है, क्यों वह होय निरास ॥१॥
शक्ति शक्तिवान है, शक्ति सबका सार।
शक्ति गुरु की भक्ति में, शक्ति करे विचार ॥२॥
शक्ति में नहीं निबलता, सबला कहिये सोय।
शक्ति में शक्ति रहे, नहीं वह अबला होय ॥३॥
पदम रूप जल में रहे, नहीं व्यापे संसार।
छीर नीर का मथन कर, पिये अमीरस धार ॥४॥

राधास्वामी की दया, भक्ति पदारथ पाय।
शक्ति में शक्ति रहे, शक्ति पाय हर्षाय ॥५॥

धुन २६ [११७-४२६]

गुरु से मेरी प्रीत लगी भारी। भक्ति मिली अब नहीं संसारी॥
नित शीत प्रसाद को खाती हूं। पी चरनामृत तृप्ताती हूं॥
सुमिरन और भजन से लगन लगी। फिरती हूं जग से भगी भगी॥
माया से मुझको नहीं हानी। गुरु व्याप रहे तन मन बानी॥
राधास्वामी मेरे प्रीतम प्यारे। दिन रात साथ के रखवारे॥

(४३० कुलसं० १३३२)

न अपना नाम रखना तुम, न दुनियां में निशां रखना।
नहीं की जब गई आदत, जबां पर तब न हां रखना॥
मुकर होना अबस है, और मुनकर होना है गलती।
न सिर में ऐसे सौदा का, कभी बारे गिरां रखना॥
न साहिबे दिल न बेदिल, बनने की तुममें हविस आये।
न दिल देना न दिल लेना, न बहरे दिलस्ताँ रखना॥
अगर है तर्क तर्क करदो, तर्क का भी तर्क बेगुमां।
मकां जब छुट गया फिर, क्यों खयाले लामकां रखना॥
खामोसी मानये दारद, कि दर गुफ्तन नमी आयद।
न सच और झूठ कहने, के लिये मुँह में ज़ुबां रखना॥

सहज योग

सहज सुमिरन

[१-४३१]

अगम अपार अगाध अनामी । अलख अनादि आदि राधास्वामी ॥
सत्त रूप सतपद सत धामी । अच्चर निःअच्चर राधास्वामी ॥
अमर अजर अव्यक्त अकामी । अगथ अनेह व्यक्त राधास्वामी ॥
सुलभ सुगम सुविचार मुकामी । आतम परमातम राधास्वामी ॥
राधास्वामी आदि अंत राधास्वामी । राधास्वामी साध संत राधास्वामी॥

दोहा—एड़ी से चोटी तलक, सब राधास्वामी रूप ।
निराकार साकार दोऊ, रूपावन्त अरूप ॥

राधास्वामी कारन राधास्वामी कारज ।
राधास्वामी गुरु राधास्वामी अचारज ॥
राधास्वामी फल हैं फूल राधास्वामी ।
राधास्वामी बीज मूल राधास्वामी ॥
राधास्वामी तन राधास्वामी मन ।
राधास्वामी वित्त राधास्वामी धन ॥
राधास्वामी भक्ति ज्ञान राधास्वामी ।
राधास्वामी देह प्राण राधास्वामी ॥
राधास्वामी कठिन सुगम राधास्वामी ।
राधास्वामी अगम निगम राधास्वामी ॥

दोहा—पावक गगन समीर जल, पृथ्वी राधास्वामी रूप ।
निराधार आधार गति, अकह अनाम अरूप ॥

सुमिरन भजन ध्यान राधास्वामी । क्रिया भक्ति ज्ञान राधास्वामी ॥
तीरथ बरत धरम राधास्वामी । गुप्त अगुप्त मरम राधास्वामी ॥

शब्द स्पर्श रूप राधास्वामी । रसमय गन्ध कूप राधास्वामी ॥
अगुन सगुन सब गुन की खान । राधास्वामी मेरे पुरुष महान ॥
अक्षर निःअक्षर के पार । निराकार नहिं नहीं साकार ॥

दोहा—एक कहूं तो है नहीं, दूजा कहत लजाऊँ ।
एक अनेक के परे लख, राधास्वामी ठांऊँ ॥

राधास्वामी पिता मात राधास्वामी । राधास्वामी बन्धु तात राधास्वामी
राधास्वामी ऋषी मुनी राधास्वामी । राधास्वामी वेद गुनी राधास्वामी
राधास्वामी शब्द धार राधास्वामी । राधास्वामी मन विचार राधास्वामी
राधास्वामी मुक्त बद्ध राधास्वामी । राधास्वामी नित्य शुद्ध राधास्वामी
राधास्वामी पार वार राधास्वामी । राधास्वामी तत्व सार राधास्वामी

दोहा राधास्वामी सहस गति, राधास्वामी द्वैत ।
राधास्वामी एक हैं, सत धुर पद अद्वैत ॥

रेचक पूरक हैं राधास्वामी । प्राण योग कुम्भक राधास्वामी ॥
सहस कमल दल त्रिकुटी धाम । सुन्न महासुन्न राधास्वामी ठाम ॥
सोहंग रूप जान राधास्वामी । सत्य स्वरूप मान राधास्वामी ॥
लख गम अलख अगम बिस्तार । राधास्वामी पद में रा०स्वा० सार ॥
रात दिवस गाओ राधास्वामी । छिन प्रतिछिन ध्याओ रा०स्वामी ॥

दोहा सुमिरन साधन सहज का, सतगुरु दिया बताय ।
सांस सांस सुमिरन करो, राधास्वामी के गुन गाय ॥

सहज ध्यान

(२-४३२)

राधास्वामी संत रूप धर आये । राधास्वामी तत्व सार समझाये ॥
सुन्दर शान्त विशुद्ध शरीरा । रा० स्वा० प्रगटे धीर गम्भीरा ॥
सोभा धाम अकाम अमाया । रा० स्वा० अचरज भेष बनाया ॥
निराकार साकार स्वरूप । पद अनाम में नामी भूप ॥
अवगति गति तज गतिगत भाई । राधास्वामी संत समाज सजाई ॥

दोहा रूप रङ्ग रेखा नहीं, रूप रङ्ग से न्यार ।
रूप रङ्ग रेखा गहा, जीवों के उद्धार ॥

दया भाव ले जग में आये । राधास्वामी राधास्वामी पंथ चलाये ॥
सुरत शब्द की राह चलाई । शब्दयोग राधास्वामी बतलाई ॥
सेत सिंहासन विमल विराजे । राधास्वामी साज अनूपम साजे ॥
मृदुल मनोहर गात सुहाना । राधास्वामी धरा सन्त का बाना ॥
साध हंस संतन गति गाई । राधास्वामी सहज किया कठिनाई ॥

दोहा सांस योग हठ योग का, सब विधि किया निषेध ।
शब्दयोग उत्तम कहा, दिया ध्यान का योग ॥

सहसकमलदल पुरुष विराट । राधास्वामी जोत निरंजन ठाट ॥
पंच भूत पचरंग फुलवारी । श्याम कुंज राधास्वामी सँवारी ॥
त्रिकुटी ओंकार की लीला । राधास्वामी छवि अद्वैत सुहीला ॥
लाल रंग का चमका भान । राधास्वामी किया प्रणव अस्थान ॥
वेद ज्ञान का मूल मुकाम । अव्याकृत राधास्वामी नाम ॥

दोहा त्रिकुटी पद ओंकार बन, ब्रह्म सिखर पद ठाम ।
तेज पुंज सुप्रकाश मय, राधास्वामी ॐ के नाम ॥

सुन्न महासुन्न शून्याकार । हिरण्यगर्भ कारन अविकार ॥
मानसरोवर मानस पार । ब्रह्म शिखर कैलास बिहार ॥
हंस भाव सीतला सोम छवि । अन्ध घोर के परे स्वेत रवि ॥
अमृत मय अमृत की खान । सत सत्ता का नाम निशान ॥
गुप्त धार की निर्मल सोती । बीजा अन्धकार और जोती ॥

दोहा जब लग हंस स्वभाव लग, ले नहीं राधास्वामी नाम ।
राधास्वामी शून्य सरूप में, नहीं प्रगटे विस्राम ॥

उलट हंस सोहंग गति भाई । सोहंग 'मैं हूं' शब्द सुनाई ॥
जगमग बिजली जोत अपार । सोहंगम भ्रमर आकार ॥
रूप रंग रेखा की खानी । सोहंग पुरुष राधास्वामी जानी ॥

भाप में ज्यों सूरज छवि प्रगटे। आदि माया सोहंग त्यों दरसे ॥
भँवरगुफा भँवराकृत काल। राधास्वामी सोहंगम गति पाल॥

दोहा वरे सत्य पद के लखा, सोहंगम स्थान।
राधास्वामी का यह रूप, लख पावे कोई सुजान ॥

है है है है सहज विचार। सो "हैपना" है सत्याकार॥
सत्य भाव सत रूप सलोक। नहीं वहां चिंता नहीं वहां शोक ॥
जोत प्रकाश का सोत महान। राधास्वामी सत्य पुरुष परधान ॥
सुरत शब्द दुरबीन जो पावे। तब सतपुरुष के दरशन पावे ॥
सत सत सत सत है जोई। राधास्वामी सत्य पुरुष कहो सोई ॥

दोहा यहाँ लग रूप व रंग हैं, रेखा और आकार।
राधास्वामी सतगुरु रूप धर, सत्य सत्य दरबार ॥

अलख लखे और लखा न जाये, राधास्वामी अलख दशा कहलाये ॥
अगम की गम गम अगम की नाहीं। राधास्वामी अगम अमन दरसाहीं
नाम अनाम नाम नहिं जाका। राधास्वामी गाड़ा नाम पताका॥
क्या है सो कोई नहिं भाखे। अलख अनाम अगम कह आखे ॥
अचरज अचरज अचरज होई। अद्भुत अद्भुत समझो सोई ॥

दोहा इसके ऊपर परे गति, राधास्वामी का धाम।
सन्तन राधास्वामी नाम कहा, सो सन्तन का ठाम ॥

नहीं सत नहीं असत के रीत। नहीं तुरिया नहीं तुरियातीत ॥
नहीं रूप नहीं सो अरूप। नहीं वह परजा नहीं वह भूप ॥
नहीं जोत नहीं जोत्याकार। नहीं तिमिर न तिमिर बिस्तार ॥
आदि आदि और अनन्त अनन्ता। साध न परखे परखे सन्ता ॥
रूप अरूप नाम नहीं नामी। वरन सुनाया राधास्वामी ॥

दोहा मन बानी की गम नहीं, अगम निगम गम नाहिं।
राधास्वामी इष्ट धुर, पद राधास्वामी माहिं ॥

॥ सहजरूपता ॥

(३-४३३)

सहज सहज है सृष्टी कर्म। सहज ही सहज सहज का मर्म ॥
सहज ब्रह्म है सहज है माया। सहज रूप है सहज है छाया ॥
सहज स्थूल सूक्ष्म और कारण। सहज बोल है सहज उचारण ॥
सहज ज्ञान है सहज अनुमान। इन्द्रिय पंच सहज परमान ॥
सहज शक्ति है सहज है शिव। सहज प्रेम प्रेमी और पीव ॥

दोहा जो समझे सुख सहज को, उपजे सहज विचार।
सहज नाव व्यौहार चढ़, जावे भव जल पार ॥

सहज पके सो मीठा होय। खींच तान है कड़वा सोय ॥
सहज बूझ का सहज विचार। कठिनाई में रहे विकार ॥
सहज की खेती सहज का बान। सहज की सेवा मंगल खान ॥
सहज शब्द है सहजहि साखी। लखे जो मिले सहज की आँखी ॥
सहज सन्त मत सुगम सुहेला। कठिन जगत मत दुगम दुहेला ॥

दोहा कमल नीर रहनी रहे, कभी न व्यापे मोह।
सहज दशा करनी करे, उपजे काम न कोह ॥

सहज तजे और गहे कठिनाई। रहे सो भरम फन्द उरझाई ॥
भरम भूल है भरम अज्ञान। भरम छुटे तब सहज का ज्ञान ॥
भरम में दुविधा और दुचिताई। सार तजे संसार फँसाई ॥
व्यापे अहंकार और ममता। चित से हटे सुशील सुसमता ॥
अहंकार है मोर और तोर। मोर तोर में काल का जोर ॥

दोहा मोर तोर की जेवरी, बट बाँधा संसार।
दास कबीरा क्यों बँधे, सहज नाम आधार ॥

मोर तोर की रसरी भारी। बद्ध जीव भये कठिन दुखारी ॥
मोर तोर का मिथ्या भाव। पड़े जीव माया के दाव ॥

मैं तू मोर तोर है माया। माया बस रहा भरम भुलाया॥
कल्पित बिरथा कहे सब कोई। तदपि न झूठ कठिन अति सोई॥
मोर तोर के बन्धन नाना। को सुरझावे कठिन महाना॥

दोहा उरझ उरझ उरझे सकल, सुरझा नाहीं कोय।
ऋषि मुनि सुर नर प्रीतजन, गये भरम में खोय॥

नर्क स्वर्ग अपवर्ग त्रिलोकी। जनम मरन सहे जीव विशोकी॥
लख चौरासी योनि फँसाने। छूटन की विधि कोई न जाने॥
तीन ताप की अग्नि प्रचण्ड। तपे भोग माया के दंड॥
पुरुष दयाल दया उमगाई। सन्त रूप धर जग में आई॥
दुखी जीव को दिया दिलासा। सहज चाल जाओ सत देसा॥

दोहा सत्त सत्त वह धाम है, माया नहीं कलेस।
साध शब्द की सुगम विधि, धार शब्द का भेष॥

नहीं यह कर्म न धर्म कहानी। नहीं यह जप तप संयम खानी॥
नहीं यह तुरिया न तुरियातीत। नहीं तीरथ नहीं बरत की नीत॥
नहीं पाखंड न बाद विवाद। वाचक ज्ञान की नहीं मरियाद॥
शब्द भेद घट शब्द चढ़ाई। अन्तर शब्द का साधन भाई॥
शब्द का सुमिरन शब्द का ध्यान। शब्द का भजन सन्त परमान॥

दोहा शब्द सुरत एक अंग कर, परख साखी मत सार।
साखी शब्द जहाज चढ़, जा भवसागर पार॥

साधन शब्द बिना नहीं साखी। खुले न शब्द बिना हिय आंखी॥
जो कोई समझे शब्द हमारा। समझ जाय भव निधि के पारा॥
जो कोई गावे हमारी साखी। काल न सके त्रिलोकी राखी॥
कबीर का बूझा जो कोई बूझे। तीन लोक सब पल में सूझे॥
कबीर का गाया जो कोई गावे। तीन त्याग चौथा पद पावे॥

दोहा शब्द साची रूप है, साची रहे असंग।
संग दोष व्यापे नहीं, सुन सतगुरु परसंग॥

राधास्वामी संत कबीर। तुलसी जग जीवन मति धीर॥
नानक पलटू दास बखाना। गुरु की दया हमहुँ कछु जाना॥
वेद पढ़े और पढ़ा पुरान। सांख्य वेदान्त का परखा ज्ञान॥
प्राण योग कर आसन मारा। तो भी हाथ लगा नहीं सारा॥
भेद गुप्त बानी में है कुछ। समझें ताहि न जीव अधम तुछ॥

दोहा राधास्वामी प्रगट किया, शब्द योग की रीत।
सोई संत की बानी में, ऋति संयुत उद्गीत॥

पंचम नाम के पंच विधान। पंच अग्नि परचंड महान॥
पंच यज्ञ परमारथ बाद। नहीं वह आशय बाद विवाद॥
करनी करे सो भेद को पावे। कथनी कथे सो अवध गँवावे॥
करनी करे सो सेवक पूरा। करनी कर कायर हो सूरा॥
कथनी बदनी जब कोई त्यागे। तब करनी के शब्द में लागे॥

दोहा यह करनी का भेद है, नाहीं बुद्धि विचार।
कथनी तज करनी करे, तब पावे कुछ सार॥

सहज शब्द निर्णय

[४-४३३]

शब्द गुप्त तब रहा अनामी। शब्द प्रगट तब प्रगटा नामी॥
गुप्त प्रगट दोउ शब्द स्वरूप। रंक प्रजा कहीं राजा भूप॥
कहीं सामान्य और कहीं विशेष। कहीं विस्तार कहीं है शेष॥
सब में शब्द है ओत परोत। कहीं धार गति कहीं है सोत॥
माला मनका और सुमेर। गांठ गांठ में हेरा फेर॥

दोहा जहां छोब गति गम लहे, तहां शब्द की धार।
जहां छोब की गम नहीं, अधिष्ठान आधार॥

निराकार साकार की खानी। कारन सूक्ष्म स्थूल निशानी ॥
श्रुति जब अन्तःकरण में आवे। गगन मंडल उद्‌गीत कहावे ॥
जिभ्यातट सोई बने सुबानी। ब्रह्मा शारद शेस बखानी ॥
अनहद निराकार धुन सोहे। मुख जिभ्या बानी ह्वै मोहे ॥
बानी में सब गये भुलाई। अनहद धुन उनमुनि नहीं पाई ॥

दोहा बानी वरनात्मक है, सगुन गुनन की खान।
अनहद धुनात्मक धुन, निर्गुन अगुन महान ॥

शब्द शब्द का रचा पसारा। शब्द शब्द त्रिगुण विस्तारा ॥
अधि दैविक अधि भौतिक जानो। सोई अध्यात्मक रूप पिछानो ॥
शब्द भेद है शब्द अभेद। शब्द मुक्ति शब्दहि भव भेद ॥
एक शब्द भव फन्द कटावे। एक शब्द गले फाँसी लावे ॥
एक शब्द आनन्द विलास। एक शब्द दारुण दुख त्रास ॥

दोहा एक शब्द के सुनत ही, लगे कलेजे घाव।
एक शब्द औषधि करे, अपने सहज स्वभाव ॥

भोग शब्द उपजावे भोग। जोग शब्द प्रगटावे जोग ॥
एक शब्द हिये आवे ज्ञान। एक शब्द सुन बन्द निदान ॥
शब्द विवेक से बूझे एक। भव के शब्द से लखे अनेक ॥
एक अनेक शब्द परमाना। सोई अद्वैत और द्वैत कहाना ॥
माया ब्रह्म पुरुष प्रकृति। शब्द ही जीव शिव और शक्ति ॥

दोहा गुरु मुख शब्द में रहत है, अद्‌भुत अनन्त विचार।
गुरु का शब्द जो लख पड़े, सूझे अगम अपार ॥

शब्दहि मारे बन को जाये। शब्द से लोक परलोक नसाये ॥
शब्द सँवारे लोक परलोक। शब्दहि टारे भव का शोक ॥
शब्द वेद और शब्द पुरान। शब्दहि श्रुति स्मृति की जान ॥

शब्दहि प्रश्न शब्द ही उत्तर । शब्दहि मौन और शब्द ही सूत्तर ॥
शब्दहि उन्मुख शब्द समाधी । शब्दहि बन्धन शब्द उपाधी ॥

दोहा शब्द शब्द में भेद है, शब्द शब्द में भाव ।
गुरु का शब्द से पाइये, भक्ति मुक्ति का दाव ॥

शब्द त्रिलोकी रचा पसारा । शब्द मांहि त्रिगुन निस्तारा ॥
गगन पवन अगनी जल पृथ्वी । शब्द आदि जानो इन सबकी ॥
शब्द स्पर्श रूप रस गन्ध । शब्द मुक्ति और शब्द है बन्ध ॥
शब्द पुरुष है शब्द प्रकृती । शब्द शम्भु और शब्द है शक्ति ॥
जीव ब्रह्म ईश्वर और माया । शब्द तत्व और शब्द है काया ॥

दोहा बिना शब्द रचना नहीं, शब्द है सबका सार ।
कोई कोई सन्त जन, शब्द का करे विचार ॥

शब्द से सुरत सुरत से शब्द । शब्द अलब्ध शब्द है लब्ध ॥
त्वचा आँख जिभ्य और कान । शब्द हैं शब्द रूप पहिचान ॥
पश्यन्ती मध्यमा बैखरी । अपरा परा शब्द है बैखरी ॥
निराधार और सर्वाधार । अधिष्ठान गति शब्द विचार ॥
तुरिया तुरियातीत शब्द । साध सन्त अतीत शब्द सब ॥

सोरठा रवि शशि मंगल बुद्ध, और बृहस्पति शुक्र शनि ।
शब्दहि शुद्ध अशुद्ध, निरख परख पहिचान ले ॥

शब्द विराट शब्द है माया । जोत निरंजन शब्द की काया ॥
शब्द है मूल मंत्र ओंकार । अन्तरयामी शब्द मंझार ॥
सुन्न महासुन्न शब्द पसार । शब्द भँवर सोहं झनकार ॥
शब्द पुरुष है शब्द अकार । शब्द करे सत धाम पुकार ॥
अलख है शब्द अगम है शब्द । अगम है शब्द निगम है शब्द ॥

दोहा राधास्वामी शब्द है, मुख से लेते नाम ।
गुप्त तो शब्द अशब्द है, अमला अचल अनाम ॥

सत पद है कूटस्थ का थाना। अचरज अद्भुत अकह अमाना ॥
अलख अगम और राधास्वामी। निगम अगम के पार मुकामी ॥
साखी शब्द शब्द और साखी। जिनकी गति है पहले भाखी ॥

दोहा शब्द कमाय साखी लहे, साखी रूप प्रमान।
धुर पद जीवन मुक्त मति, आवागमन नसान ॥

सुरत टिके अन्तर कर बासा। सतचितआनन्द लहे बिलासा ॥
सत में बल चित में है ज्ञान। आनन्द है आनन्द के ध्यान ॥
तीन त्रिबेणी कर अस्नान। मेटे सत रज तम का मान ॥
मान सरोवर मारे गोता। निर्मल होय अमी के सोता ॥
तब चौथा पद पड़े लखाई। बिन चौथे पद नहीं भलाई ॥

दोहा तीन छोड़ चौथा दिया, पाया पद निर्माण।
राधास्वामी दीन हित, सतगुरु संत महान ॥

सहज चेतावनी

(६-४३६)

रचना सहज सहज प्रकृति। सहज वृत्ति में सहज सुकृति ॥
सहज सरल चित कबहुँ न त्यागे। बाल दशा व्यौहार में लागे ॥
सनक सनन्दन सनत कुमारा। सहज वृत्ति को चित में धारा ॥
तजे न चित से रूप आनन्द। भूल न व्यापे जग का द्वन्द ॥
अहंकार से खींचा तान। ता से उपजे मन अज्ञान ॥

दोहा यह अज्ञान है भरम गति, जग का मूल विकार।
भूल भरम में जो फँसा, खोया तत्व का सार ॥

काम क्रोध मद लोभ प्रचंड। अनसमझी से बढ़ा घमंड ॥
यह घमंड जाके चित आया। ताके हृदय व्यापी माया ॥
माया सौ सौ नाच नचावे। छल बल जीव को अधिक सतावे॥

हिरण्यगर्भ रहे शून्य मँझार। बीज रूप सोई अपरम्पार॥
तीन चक्र यह मस्तक मध्य। बिन बूझे क्या जाने बद्ध॥

दोहा सुन्न के फिर दो भेद हैं, सुन्न महासुन्न जान।
यह मस्तिष्क में गुप्त हैं, कर साधन पहिचान॥

सुन्न देश में है सविकल्प। महासुन्न नहीं कल्प विकल्प॥
उतपति बीज यहां से आवे। स्थिति सृष्टि का रूप दिखावे॥
ज्यों सुषुप्ति का होय उत्थाना। सुन्न से त्यों सृष्टि उत्पाना॥
एक सबल है एक है शुद्ध। लख पावे कोई ज्ञानी बुद्ध॥
सृष्टि स्थिति लय व्यौहारा। तीनों हि समझो बीज पसारा॥

दोहा काल चक्र कौतुक महा, जाका आदि न अन्त।
भूले सुर नर ताहि लख, पाया मूल न तन्त॥

सुन्न के परे काल बरियार। भँवरगुफा रहा बैठक मार॥
ज्यों कुम्हार निज चक्र चलावे। गढ़ बासन फिर ताहि नसावे॥
जैसे सिंध में लहर बूँद जल। तैसेहि काल में चल और निश्चल॥
कभी द्वन्द और कभी निरद्वन्द। काल चक्र का फैला फन्द॥
काल में जीव ब्रह्म लपटाने। द्वैत अद्वैत में रहे लुभाने॥

दोहा सिन्ध मध्य ज्यों लहर है, बुद बुद नीर तरंग।
काल चक्र में सब रहें, पाय सुसंग कुसंग॥

काल चक्र के परे अधार। सतपद धुरपद अगम अपार॥
अधिष्ठान कूटस्थ समाना। अहिरन लोह के रूप पिछाना॥
नहीं वहां एक न दोय न तीना। नहीं वहां सिंध तरंग नवीना॥
नहीं द्वैत अद्वैत का भाव। नहीं अज्ञान न ज्ञान का दाव॥
'है पद' सतपद शब्द के योग। नहिं वेदान्त न साँख्य न योग॥

दोहा मति न लखे जेहि मति लखें, कुमति सुमति मति नाहिं।
अनुभव सिद्ध अलख अगम, राधास्वामी माहिं॥

सहज भेद नं० २

(११-४४१)

सहज सहज की चाले चाल। तब समझे गति माया काल ॥
शब्द योग की करे कमाई। कुछ दिन गुरु संगत लौ लाई ॥
गुरु बिन पावे भक्ति न ज्ञान। गुरु बिन हिये न मोह न मान ॥
गुरु बिन सार तत्व क्यों बूझे। गुरु मिलें तो सब कुछ सूझे ॥
गुरुमत हो मनमत को त्याग। गुरु बिन पंथ के पंथ न लाग ॥

दोहा कबीर निगुरा ना मिले, पापी मिलें हजार।
एक निगुरे के सीस पर, लख पापी का भार ॥

गुरु वही जो शब्द सनेही। गुरु बिन दूसरे और न सेई ॥
लच्छ का लच्छ वाच का वाच। गुरु का रूप लख भक्ति में राच ॥
गुरु संगत है सत का संग। सत के संग धार सत रंग ॥
गुरु की भक्ति रहे निष्काम। धर्म अर्थ मुक्ति सत काम ॥
गुरु से पावे बिना प्रयास। ताते कर गुरु दया की आस ॥

दोहा गुरु बिन माला फेरते, गुरु बिन देते दान।
गुरु बिन नाम हराम है, जाय पूछो वेद पुरान ॥

जब कुछ दिन सतसंग अभ्यास। तब गुरुमुख गुरु का निज दास ॥
गुरु हद बैठ सहारा देवे। चेला बेहद चढ़ सुख लेवे ॥
हद बेहद के परे ठिकाना। सत्त लोक सतगुरु अस्थाना ॥
वहां गुरु का पावै भेद। नहीं वहां कथा कतेब न वेद ॥
यहां कथा वहां कथा नहीं है। कैसे कोई समझे कथे झूठी है ॥

दोहा नहीं कथनी का देश वह, अनुभव गति मन सार।
सो तो निश्चय पाइये, सतगुरु के उपकार ॥

अकथ अलौकिक अगम कहानी। जान अजान सुजान अजानी ॥
नहीं वह सत्त असत्त कहावे। बिना कहे क्यों समझ में आवे ॥

समझ बूझ की पहुँच से पार। समझ बूझ तिस के आधार ॥
नहीं तुरिया नहीं तुरियातीत। नहीं ऊष्ण और नहीं वह तीत ॥
अन्धे हाथी हाथ टटोले। कहते निज मन भिन्न भिन्न बोले ॥

दोहा सबमें है सबसे पृथक, है नहिं नहिं है सोय।
गुरु की दया अपार बिन, लख पावे नहीं कोय ॥

अकथ कहन में कैसे आवे। बिना कहे कोई क्या बतलावे ॥
सैन बैन की युक्ति न्यारी। हद बेहद चढ़ कोई विचारी ॥
नहीं वह बुन्द न सिंध समान। नहीं मिलाप गम नहीं अमगान ॥
रूप अरूप सरूप बिहीना। राव रंक नहीं दीन प्रवीना ॥
जीव न ईश न ब्रह्म न माया। नाम अनाम सनाम कहाया ॥

दोहा जीव मुक्त न बिदेह है, कैसे कहूं सुझाय।
राधास्वामी सैन लख, अनुभव में कुछ आय ॥

सहज कीर्तन

(१२-४४२)

कथा कीर्तन का व्यवहार। सहज करे भवसागर पार ॥
कथा चित्त उत्साह बढ़ावे। सत मारग की राह दिखावे ॥
जिसका निस दिन कथा का नेम। ता संग अवश्य कीजिये प्रेम ॥
नहीं कीर्तन जिसको प्यारा। सो तो भरम रहा संसारा ॥
करम बोझ लादे सिर ऊपर। जग में जीवे ज्यों खर कूकर ॥

दोहा कथा कीर्तन जगत में, उत्तम साधन जान।
धीरे धीरे सहज में, उपजावे सत ज्ञान ॥

जो नित कथा करे चितलाई। बिगड़ी बनत बनत बन जाई ॥
कथा प्रेम प्रतीत की खानी। श्रद्धा की जड़ सन्त बखानी ॥
कथा कीर्तन कथा प्रसंग। करे जो चढ़े परमारथ रंग ॥

काम कथा से उपजे काम । नाम कथा पावे गुरु नाम ॥
एक चौरासी धार बहावे । दूजा काढ़ किनारे लावे ॥

दोहा कथा कीर्तन रात दिन, जो कोई करे सनेह ।
जीवन मुक्त गति सो लहे, नहीं यामें संदेह ॥

रस रस सोत से पानी आवे । कथा प्रसंग हृदय गुन पावे ॥
कथा दृढ़ावे नाम की आस । बिना कथा नर फिरे उदास ॥
नहीं प्राप्त जाको सतसंग । सो नित धारे कथा प्रसंग ॥
मलिन वासना मन से जावे । शुभ इच्छा सहजहि उपजावे ॥
शुभ विचार शुभ इच्छा साथ । ज्ञान रतन धन आवे हाथ ॥

दोहा कथा ज्ञान की भूमिका, पहिली सीढ़ी जान ।
तिसके पीछे ज्ञान है, साध बचन परमान ॥

कथा कीर्तन कर गुरु संग । बिन गुरु निष्फल कथा प्रसंग ॥
कथा कीर्तन जोग अष्टांग । और सकल बहु रूप का सांग ॥
गुरु समीप बैठे सोई आसन । त्याग ग्रहन यम नियम का साधन ॥
गहे बचन सो प्राणायाम । सांस सांस ले गुरु का नाम ॥
बार बार जो करे विचार । सोई जानो प्रत्याहार ॥
धारन करे सोई धारना । ध्यान धारना में मन मारना ॥
गूढ़ ध्यान है गूढ़ समाधी । कथा कीर्तन मिटे उपाधी ॥

दोहा कथा कीर्तन नित किये, मन बाढ़े गुरु प्रीत ।
प्रीत प्रेम की वृद्धि से, उपजे दृढ़ परतीत ॥

कथा कीर्तन जो नहीं करे । बहु दुख व्यापे दुख में मरे ॥
नित प्रति कथा कीर्तन करना । प्रीत प्रेम चित बासन भरना ॥
कथा कीर्तन सबका सार । सहज जनम का होय सुधार ॥
पढ़े सुने जो नित गुरु बानी । बने विवेकी साधु ज्ञानी ॥
कथा कीर्तन नहीं कठिनाई । सहज सहज में होय भलाई ॥

दोहा राधास्वामी की दया, कर गुरु का सतसंग।
कथा कीर्तन संग गुरु, फिर नहीं चित हो भंग॥

सहज गुरु विचार

(१३-४४३)

राधास्वामी पद में कोटि प्रणाम। राधास्वामी राधास्वामी धारा नाम॥
गुरु स्वरूप धर जग प्रगटाने। निजपद अपना आप बखाने॥
राधास्वामी द्वन्द का फंद कटाया। चार खान के पार लगाया॥
आप आप में आप दिखाया। आप आप को आप लखाया॥
'मैं' छुड़ाय 'तू' में ठहराया। 'मैं' 'तू' का फिर भेद मिटाया॥

दोहा भली भई जो गुरु मिले, मन का भरम नसान।
मन का भरम है फन्द जम, चार योनि की खान॥

गुरु समुद्र सिख बुन्द समान। गुरु में लाभ बिना गुरु हान॥
हानि लाभ का संशय मेटा। मोर तोर का सिर किया हेटा॥
राधास्वामी धर कुम्हार का भेस। घड़ सिख कुम्भ दिया उपदेस॥
घड़ घड़ मन के खोट निकारे। बचन चोट दे ताहि संवारे॥
माटी ले जब कुम्भ सजाया। वस्तु विचित्र अपार बनाया॥

दोहा धर्म दया श्रद्धा क्षमा, प्रेम प्रतीत पियार।
राधास्वामी की दया, चित्त पात्र लिया धार॥

गुरु का निरख आँख और माथा। सत का नूर रहे जिस साथा॥
अस चिन्ह देख करे पहिचान। जाके मन सतगुरु का ज्ञान॥
अन्धा काना ऐंचा तान। आँख दोष यह ले पहिचान॥
सिमटा माथा कुबुद्धि निशानी। ऐसे गुरु के संग में हानी॥
द्रोह ईर्षा द्वेष की खान। समझ बूझ गुरु संगत ठान॥

दोहा पानी पीजिये छानकर, गुरु को कीजे जान।
यह लक्षण गुरु रूप का, सन्तन किया बखान॥

शब्द भेद के मरम को जाने । सन्त मता का सार बखाने ॥
परिचय देवे सैन बुझावे । बचन प्रभाव युक्त समझावे ॥
माँग ताँग नहीं व्यवहार । ऐसे गुरु से सहज सुधार ॥
ममता नहिं नहिं मन हंकार । केवल परमारथ आधार ॥
अन्तर मुखी सिखावे साधन । परियय दे करावे निध्यासन ॥

दोहा ऐसे गुरु के संग से, लाभ होय ततकाल ।
माया का संकट कटे, अन्तर जीव निहाल ॥

गुरु के पद जब हो परतीती । तब तो सीख शब्द मति रीती ॥
सुमिरन भजन ध्यान लौ लाई । कर अन्तर घट सहज चढ़ाई ॥
घट चढ़ गुरु की गति मति देख । निरख परख लख अगम अलेख ॥
सहज जोग थोड़े दिन साध । मेट द्वन्द के कठिन उपाध ॥
सहज जोग सहज है युक्ति । साधन कर ले जीवन मुक्ति ॥

दोहा राधास्वामी की दया, कमल नीर व्यवहार ।
जग में रह जग करम कर, नहीं व्यापे संसार ॥

सहज शब्दार्थ

(१४-४४४)

जैसे सहज संत का पन्थ । तैसे उनके सहज है ग्रन्थ ॥
सहज बात और सहजहि बानी । सहज ज्ञान और सहज अनुमानी ॥
साधारण वार्ता विलाप । साधारण गत और अलाप ॥
खींच तान नहीं तोड़ मरोड़ । नहीं कहीं जोड़ नहीं कहीं तोड़ ॥
जैसा शब्द वैसा ही अर्थ । अर्थ का कभी न करें अनर्थ ॥

दोहा शब्द अर्थ के बीच में, नहीं युक्ति नहीं दाव ।
जो बोलें सो सरल है, सरल स्वभाव उपाव ॥

सतसंग कहिये सत्त का संग । सत जीवन और संग प्रसंग ॥
सत जीवन कहिये गुरु देव । तिन का संग करो निर भेव ॥

सत का अर्थ जो दूजा करे। भरम फांस में फँस कर मरे ॥
बिनसत संग विवेक न आवे। बचन बिना कोई क्या समझावे ॥
जीवन गुरु के संग में जाय। सुन गुन बचन के जनम बनाय ॥

दोहा यह सतसंग का अर्थ है, नहीं सो कथा विलाप।
सत जीवन के मेल को, कहिये सहज मिलाप ॥

उप है निकट और आसन बैठना। नहीं वह कर्म धर्म में ऐंठना ॥
यह उपासना का सिद्धांत। निकट बैठ मन को कर शान्त ॥
प्रश्न पूछ कर उत्तर लीजे। उत्तर सुन चित उसको दीजे ॥
और उपासना का अर्थ बताय। सरल जीव को भरम फँसाय ॥
भर्म फँसाय जनम को नाशे। समझ पड़े नहीं भर्म न आशे ॥

दोहा नहीं उपासना और कोई, कहिये तहिं सतसंग।
गुरु समीप आसन करे, धारे गुरु का रंग ॥

उप है निकट देस अस्थाना। यह उपदेश का अर्थ बखाना ॥
सहज योग की करे कमाई। गुरु गम लहे देश बदलाई ॥
तीन देश मैं पिंड मँझार। काया काल दयाल विचार ॥
काया पिंड देश है भाई। काल देश ब्रह्मांड कहाई ॥
देश दयाल काल के परे। चेतन शुद्ध का निर्णय करे ॥

दोहा यह उपदेश का अर्थ है, सुन लीजे सब कोय।
देश न बदले सुरत के, परमारथ नहीं होय ॥

बृः बढ़ना और मनन मन। सोचे बढ़े "ब्रह्म" तेहि भिन ॥
सोचे बढ़े सो ब्रह्म कहावे। यही अर्थ सन्तन को भावे ॥
ब्रह्म अधिष्ठित अचल न होई। नाम अर्थ भेद कहो सोई ॥
ब्रह्मांडी मन सोई ब्रह्म। जो समझे मन रहे न भर्म ॥
अ उ म ओंकार सो जान। सतरज तम का रूप पिछान ॥

दोहा ब्रह्म भेद निर्णय किया, चित में आवे मान।
माने कैसे जीव यह, जब लग अर्थ न जान ॥

परब्रह्म है परे का ब्रह्म। शुद्ध सतोगुन का लख मर्म ॥
महाकाल की गति मति सोई। ब्रह्म में गति मति दोनों होई ॥
गति है चाल मति है बुद्धि। सोच समझ कर मनकी शुद्धि ॥
ब्रह्म न परब्रह्म है इष्ट। इनको जान के हो न कनिष्ट ॥
ऊँचा इष्ट सन्त मत का ये। कर सतसंग तो समझे आशे ।

दोहा सतपद धुरपद इष्ट है, शब्द योग कर जान।
ऊँचे चढ़ सत धाम ले, सार तत्व पहिचान ॥

जीव जो जीवन की करे आशा। ईश ब्रह्म निज भाव प्रकाशा ॥
जीव पिंड धारी अल्पज्ञ। दृष्टि ब्रह्मांड से वह सर्वज्ञ ॥
जीव ब्रह्म का इतना भेद। नहीं तो दोनों रहें अभेद ॥
यहां जाग्रत और स्वप्न सुषुप्ति। वहां प्रलय सृष्टि और स्थिति ॥
तेजस विश्व प्राज्ञ है जीव। तीनहि नाम ब्रह्म लख पीव ॥

सोरठा अन्तरर्यामी विराट, हिरण्यगर्भ यह ब्रह्म है।
लख कर इनका ठाठ, जीव ब्रह्म का भेद भिन्न ॥

'मा' है माप और 'या' है यंत्र। यह माया का अर्थ स्वतन्त्र ॥
यंत्र से जो सब वस्तु को मापे। माया भेद संत यह थापे ॥
माया और नहीं वह बुद्धि। यह व्यष्टि रहे वहां समष्टि ॥
नहीं वह हुई नहीं अनहुई। व्यक्त अव्यक्त के रूप है सोई ॥
ब्रह्म के साथ शक्ति बन रहे। जीव के संग बुद्धि सब कहे ॥

दोहा माया का यह अर्थ है, सन्तमता के भाव।
कर सतसंग विवेक से, तब मन आवे दाव ॥

गुरु महिमा

(१५-४४५)

गुरु पूजो गुरु पुजवाओ। गुरु बिन कोई देव न ध्याओ ॥
गुरु ब्रह्मा विष्णु महेशा। गुरु शेष धनेश गणेशा ॥

गुरु ब्रह्म सच्चिदानन्दम । गुरु व्यापक अमित अखंडम ॥
गुरु परब्रह्म अविनाशी । गुरु सबके घट घट बासी ॥
गुरु परम तत्व परमाना । गुरु ज्ञानी ज्ञाता ज्ञाना ॥
गुरु का दरस आंख से कीजे । गुरु के चरणों में चित दीजे ॥
गुरु सुमिरो दिन और राती । गुरु मेटें सब भव उत्पाती ॥
गुरु रूप से प्रेम बढ़ाना । गुरु आगे नित सीस झुकाना ॥
गुरु पर तन मन धन अर्पण । गुरु पद सब करो समर्पन ॥
गुरु भक्ति सबका सारा । गुरु अस्तुति कर करो बिचारा ॥
गुरु ही गुरु निसदिन भजना । गुरुमुखता गुरु से लेना ॥
गुरु की महिमा है भारी । गुरु जगजीवन हितकारी ॥
गुरु प्रेम अमी मतवाले । नहीं पड़ें काल के पाले ॥
गुरु संगत में नित जाओ । गुरु से परमारथ पाओ ॥
गुरु बिन नहीं करम न धरमा । गुरु बिन नहीं भक्ति का मरमा ॥

दोहा जो रांचे गुरु रूप पर, दुख न सहे संसार ।
राधास्वामी नाम ले, उतरे भव जल पार ॥

(१६-४५६)

सुरत है पात्र शब्द है धार । सुरत शब्द के है आधार ॥
ज्यों बासन में जल ठहराय । शब्द सुरत में रहा समाय ॥
अंधी सुरत शब्द बिन जान । शब्द सुरत की जान और प्रान ॥
शब्द प्रेम सुरत शब्द की प्रेमी । शब्द नेम सुरत शब्द की नेमी ॥
शिव शक्ति का ज्यों व्यवहार । सुरत शब्द संग करे बिहार ॥
विष्णु लक्ष्मी दोउ मिल एक । सुरत शब्द त्यों नहीं अनेक ॥
ब्रह्मा शब्द सुरत गायत्री । ऋषि सत शब्द सुरत सावित्री ॥
शब्द नाद घट करे पुकार । सुरत सुने चित वृत्ती धार ॥
सुरत स्मृति आस विश्वासा । शब्द है निश्चय बिमल प्रकाशा ॥
जग जग जो नहीं चहे त्रास । कर घट सुरत शब्द अभ्यास ॥

सुरत शब्द का आतम जोग । सुरत दुखी लख शब्द वियोग ॥
सुरत शब्द की जग में रचना । सुरत शब्द बिन बीन न बजना ॥
प्रगटे शब्द जो लिंगाकार । अर्घ बन सुरत सहित विचार ॥
संतन सुरत शब्द मत गाया । जो माना तेहि पार लगाया ॥
सुरत शब्द की अकथ कहानी । सुरत शब्द मिल ही निर्वानी ॥

दोहा सुरत साध कर शब्द सुन, अन्तर बाहर दोय ।
राधास्वामी की दया, नहीं भरमावे कोय ॥

(१७-४४७)

शब्द अपार शब्द है पार । शब्द का नहीं है वारापार ॥
शब्द की महिमा कही न जाय । शब्दहि मारे शब्द जिलाय ॥
शब्द की जग में सारी रचना । शब्द राग धुन शब्दहि बचना ॥
शब्द से सब होते व्यवहार । शब्द है परमारथ का सार ॥
शब्द ब्रह्म और माया शब्द । शब्द जोति और छाया शब्द ॥
शिव है शब्द शब्द है शक्ति । शब्द ज्ञान और शब्द है भक्ति ॥
धरम करम सब शब्दहि शब्द । मरम भरम सब शब्दहि शब्द ॥
शब्द है गुन और शब्द अगुन है । शब्द त्रिकुटी शब्दहि सुन्न है ॥
शब्द औषधी शब्द है रोग । शब्द बियोग शब्द है योग ॥
शब्द समझ और बूझ है शब्द । बुद्धि शब्द और सूझ है शब्द ॥
शब्दहि बन्धन शब्दहि मुक्ति । शब्द उपाय शब्द है नीति ॥
शब्द करे सबका निरवार । शब्द फँसावे भव मँझार ॥
शब्द की समझ बूझ तब आवे । शब्द गुरु जब चरन लगावे ॥
बिना शब्द निष्फल सब काम । शब्द से मिले परम पद धाम ॥
शब्द सिंध और शब्द है मीन । शब्द सबल और शब्द दीन ॥
राधास्वामी गुरु ने अंग लगाया । शब्द योग की रीत सिखाया ॥

दोहा शब्द सुरत एक अंग कर, ले सतगुरु का नाम ।
जीते जी इस जनम में, चढ़ राधास्वामी धाम ॥

(१८-४४८)

ले सतगुरु से नाम की भीख । सुरत शब्द का साधन सीख ॥
तिल को फोड़ सहसदल आओ । फिर त्रिकुटी ओंकार को पाओ ॥
त्रिकुटी ऊपर सुन्न अस्थान । नहीं मंडली शोभा मान ॥
मानसरोवर कर स्नान । होकर शुद्ध ले गुरु का ज्ञान ॥
गंग जमन सरस्वती की धारा । अन्तर लख हो देह से न्यारा ॥
महासुन्न पर आसन मार । सहज समाध का कर व्यवहार ॥
कुछ दिन सुन्न समाध अवस्था । भँवरगुफा की देख व्यवस्था ॥
सोहंग धुन सोहंग गति जान । फिर आगे का साधो ज्ञान ॥
आगे अलख अगम मैदाना । अद्भुत ग्राम अद्भुत थाना ॥
लख लख अलख अगम की गम ले । फिर राधास्वामी को चित दे ॥
यही सुन्न का है निज ठाम । सुरत शब्द में ले विश्राम ॥

दोहा राधास्वामी योग कर, शब्द सुरत व्यवहार ।
शब्द सुरत मिल एक जब, तब माया रहे हार ॥

॥ दोहे ॥

(१६-४४६)

आज्ञाकारी दास मैं, नहीं ममता अभिमान ।
सुख दुख सिर ऊपर सहूं, त्याग मोह मद मान ॥१॥
वह स्वामी मैं दास हूं, जहां भेजे तहां जाउँ ।
हर्ष शोक में सम सदा, ले सतगुरु का नाउँ ॥२॥
जो चाहे सो करे वह, करता धरता वह ।
मुझको दुख व्यापे नहीं, दुख का हरता वह ॥३॥
काला पानी क्यों गहे, क्यों नहीं सागर चीर ।
परख मौज कर बन्दगी, सेवक धीर गम्भीर ॥४॥
जहां चाहे गुरु हैं वहां, करे तहां सतसंग ।
प्रेम भाव जो मन बसे, कबहु न हो चित भंग ॥५॥

धीरज धरकर जतन कर, व्याकुल चित्त न होय।
कुछ दिन के अभ्यास से, बदले मन ढँग सोय ॥६॥
जग में आया क्या भया, नहीं हानी है तोर।
कर प्रार्थना हृदय में, फिर आवेगा ठौर ॥७॥
दया की आस भरोस कर, आस भाव चित धार।
आस भाव है दास का, दास मौज आधार ॥८॥
राधास्वामी नाम ले, राधास्वामी गाव।
राधास्वामी सुमिर नित, पाव अपार स्वभाव ॥९॥

(२०-४५०)

सुख का जीवन पाय कर, मन का भया मलीन।
हँसी आवे मोहि देखकर, जल में प्यासी मीन ॥१॥
मानुष तन जब मिल गया, सो सुर दुर्लभ जान।
साधन सहज उपाय ते, लह सुख भक्ति सुज्ञान ॥२॥
सत के संग में बैठकर, सुन सतसंग के बैन।
योग युक्ति गुरुभक्ति का, तब पायेगा नैन ॥३॥
बिन सतसंग विवेक नहिं, बिन विवेक नहिं ज्ञान।
बिन गुरु सतसंगत नहीं, गुरु सत रूप पिछान ॥४॥
सतसंगत अभ्यास दोऊ, नर का जनम बनाय।
राधास्वामी नाम ले, सोई सहज उपाय ॥५॥

(२१-४५१)

सत श्रद्धा विश्वास से, सो आस्तिक का रूप।
बिन श्रद्धा विश्वास के, नास्तिक गिरा भवकूप ॥१॥
अपनी अपनी क्या करे, अपना आपा ठान।
सेवक मौज अधीन है, मौजवान गुनवान ॥२॥
गुरु चरनन में सीस दे, जो न उभारे सीस।
पहुँचेगा गुरु धाम में, सेवक बिस्वा बीस ॥३॥

सीस दिया नहीं आपना, सो नहीं मौज अधार।
अपना आपा ठानकर, क्यों न सहे सिर मार ॥४॥
गुरु समरथ ने बांह गही, करेंगे पूरा काज।
क्यों निचिंत होता नहीं, बांह गहे की लाज ॥५॥
संस्कार गुरु भक्ति का, गुरु दयाल ने दीन।
काम करेंगे आपना, मन क्यों किया मलीन ॥६॥
निश्चय कर विश्वास कर, नित सतसंग विलास।
राधास्वामी दीन. हित, पूरी करेंगे आस ॥७॥
जो करना है कर सदा, दुविधा दुर्मति खोय।
मन न दुखावे किसी का तू, संत का मारग सोय ॥८॥
समझ बूझ कर बन्दगी, मिथ्या बचन न बोल।
गुरु के शब्द अमोल को, हिये तराजू तोल ॥९॥
थिरता समता चित्त धर, भक्ति साज दल साज।
सेवक का होता नहीं, जग में कभी अकाज ॥१०॥
दुविधा दुर्मति त्याग दे, ले राधास्वामी नाम।
गुरु समरथ की दया से, एक दिन पूरा काम ॥११॥

अरदास (साखी)

(२२-४५२)

गुरु के चरन सरोज में, कोटि कोटि परनाम।
गुरु के पद में मुक्ति पद, सतपद धुरपद ठाम ॥१॥
गुरु बानी सत मान सर, मैं तो हंस स्वरूप।
अमृत पान सदा करूँ, त्याग भरम भव कूप ॥२॥
गुरु बानी सुख दायनी, निर्बानी निज सार।
बोलूँ तो गुरु बचन नित, महिमा अगम अपार ॥३॥
गुरु संगत जग दुख मिटा, सूझा अलख अरूप।
गुरु में गुरुपद तत्व सब, गुरु सत मत के भूप ॥४॥

ब्रह्मा विष्णु महेश सुर, निगम अगम सद्ग्रन्थ।
गुरु पद नख में सब बसें, वेद शास्त्र शुचि पंथ ॥५॥

(२३-४५३)

ईश ब्रह्म अवगत कला, उन्मनि लगी समाध।
जब मस्तक गुरु पद झुका, पाया अगम अगाध ॥१॥
सगुन अगुन गुन सम्पदा, माया ब्रह्म विचार।
गुरु संगत मिल सब लखें, तज अविवेक विचार ॥२॥
सहसकमलदल जोति मय, त्रिकुटी ओउम् अस्थान।
सुन्न भँवर सत धाम गति, गुरु के बचन निशान ॥३॥
शब्द अशब्द अनाम अज, अद्भुत विमल प्रकास।
एक गुरु के बचन में, आस सुआस सुपास ॥४॥
विज्ञानी ज्ञानी यती, योग युक्ति के दाव।
बिन गुरु मर्म न पावहीं, कोटिन करे उपाव ॥५॥

(२४-४५४)

जप तप संयम बहु किये, घूमे देश बिदेश।
भटक भटक भटकत मरे, बिन गुरु के उपदेश ॥१॥
विद्या बुद्धि चातुरी, झूठा वाद विवाद।
गुरु पद मिल सबका तजा, लागी सुन्न समाध ॥२॥
भरम मिटा संशय गया, खुली मर्म की खान।
जड़ चेतन ग्रन्थी खिसी, जब पाया गुरु ज्ञान ॥३॥
पढ़ लिख दुविधा में फँसे, मन तो भया अशान्त।
जब आये गुरु चरण में, बुद्धि भई निरभ्रान्त ॥४॥
तीरथ में पापान जल, बन परबत दुख धाम।
बिन गुरु कृपा न गम लखे, मिले न सत सतनाम ॥५॥

(२५-४५५)

साध समान न कोई सगा, सन्त समान न मीत ।
गुरु सम हितकारी नहीं, लहे न प्रेम प्रतीत ॥१॥
विद्या पढ़ पंडित मुये, अटके माया जाल ।
ज्ञान कथन ज्ञानी थके, शब्द जाल जंजाल ॥२॥
वेद पढ़ा तो खेद अति, शास्त्र शासना पाय ।
ऐसा कोई ना मिला, सहजे लिया छुड़ाय ॥३॥
ऐसे तो सतगुरु मिले, दीनबन्धु सुदयाल ।
बांह पकड़ खींचा अधर, आपहि लिया सँभाल ॥४॥
हाथी अटका कीच में, केहि विधि निकसे आय ।
जितना बल पौरुष करे, उतना ही धँस जाय ॥५॥

[२६-४५६]

निज बल त्याग भरोस गुरु, आस कुआस निरास ।
प्रगटे पल में सतगुरु, छुटा फंद से दास ॥१॥
ऋद्धि सिद्धि नौ निद्धि यह, माया ही के भर्म ।
सिद्ध साधक भूले सकल, लखा न निज पद मर्म ॥२॥
उरझ उरझ उरझे महा, अब सुरझावे कौन ।
सुरझावन हारा गुरु, कर जो संगत गौन ॥३॥
ना विद्या ना बांह बल, ना मन में हंकार ।
ना भक्ति ना प्रीत रुचि, सतगुरु करो उद्धार ॥४॥
गुरु से कोई नहीं बड़ा, यह जाना अब जान ।
गुरु चरनन पर वारिया, देह गेह मन प्रान ॥५॥

(२७-४५७)

गुरु से भेद जो मिल गया, सीस उतारा आप ।
चरन शरन बल बल गये, मिटा देह का पाप ॥१॥

मानुष जनम अमोल था, नहीं तोल नहीं मोल।
सुफल भया जब गुरु मिले, सुनी जो अद्भुत बोल ॥२॥
एक आस गुरु चरन की, एक भरोसा मन।
एक दास की बीनती, एक ही प्रेम जतन ॥३॥
प्रेम गुरु से कीजिये, गुरु जो करे सहाय।
जो गुरु शरणागत भया, फिर नहीं भटका खाय ॥४॥
आप मिले आपहि कहा, आपहि लिया बुझाय।
आप आप मिल आप है, आप आप समझाय ॥५॥

(२८-४५८)

गुरु समुद्र हैं अगम गति, लहर देव मुनि वृन्द।
ईश ब्रह्म हैं धार सम, जीव जन्तु सब बुन्द ॥१॥
प्रगट प्रगट प्रगटा प्रगट, आप जीव के काज।
अब तो मैं गुरु का भया, त्याग जगत की लाज ॥२॥
गुरु तड़ाग मैं कमल जिमि, शोभा पाया आय।
जग में फैली बास भली, गुरु चरनन बल जाय ॥३॥
गुरु तो चन्द्र स्वरूप हैं, मैं चकोर बलवान।
पल पल गुरु मूर्ती लखूँ, कहीं और नहीं ध्यान ॥४॥
गुरु गम सिंध अगाध में, करूँ सदा अस्नान।
त्यागूँ जग का मैल सब, पाऊँ गति मति ज्ञान ॥५॥

(२६-४५६)

मैं बालक गुरु मात पितु, खेलूँ प्रेम की गोद।
संशय भरम में ना पड़ूँ, पाऊँ बोध सुबोध ॥१॥
नाथ तुम्हारा आसरा, तुमने किया सनाथ।
साथ न छोड़ूँ चरन का, रहूं तुम्हारे साथ ॥२॥
काम सकाम अकाम की, रहे न मन में आस।
तुम तो सांचे सतगुरु, मैं सांचा सत दास ॥३॥

सेवा हित चित से करूँ, फल की चाह न कोय।
सुख दुख सिर ऊपर सहूं, होना होय सो होय ॥४॥
किसकी कीजे बन्दना, किसकी कीजे सेव।
केहि बल जीतूँ जगत को, पूज कौन सत देव ॥५॥
गुरु की कीजे बन्दना, गुरु की कीजे सेव।
गुरु बल जीतो जगत को, पूज पूज गुरु देव ॥६॥

(३०-४६०)

लहर जो उठी समुद्र में, बुन्द पड़ा अति दूर।
बिलपे तड़पे रात दिन, यह वियोग दुख मूर ॥१॥
देख दशा तब बुन्द की, छोभा सिंध अपार।
लहरी आई दया की, बुन्दहि लिया संभार ॥२॥
बुन्द सिंध की एक गति, लख पावे कोई साध।
जब लख पावे मर्म यह, छूटे सकल उपाध ॥३॥
पंडित तो पोथी पढ़े, मन में बड़ा हंकार।
पाँडे तीरथ में खपे, दान दच्छिणा लार ॥४॥
भेख सतों का भेष धर, घर घर माँगी भीख।
सतगुरु की संगत बिना, लही न पूरी सीख ॥५॥
ज्ञानी ग्रन्थन में बंधे, नहीं कुछ जाना भेद।
बक बक निस दिन खोगये, हटा न संशय खेद ॥६॥
माया ब्रह्म समान दोऊ, दोउ द्वन्द अज्ञान।
द्वन्द वास जब मन बसे, केहि बिधि सूझे ज्ञान ॥७॥

(३१-४६१)

मैं तो गुरु चरनन लगा, जैसे दीप पतंग।
जरी कामना कल्पना, रहा न बाकी अंग ॥१॥
मैं तो कीट समान हूं, गुरु भृंगी के रूप।
ध्यान लगा पद कमल का, प्रगटा अमर अरूप ॥२॥

मैं हूं बन की मृगनी, गुरु बीन के बोल।
तन मन की सुधि बिसर कर, सहजे भई अडोल ॥३॥
मैं मछली गुरु सिंध गति, खेलूँ जल के माहिं।
मीन सिंध गति क्यों तजे, सतगुरु पकड़ी बाँह ॥४॥
मैं तो किरन के भाव हूं, सतगुरु भानु महान।
किरनी मिली जो भानु में, क्या कोई सके अलगान ॥५॥
भक्ति दान गुरु दीजिये, चरन पखारूँ नित।
चरनामृत की लालसा, और न कोई चित ॥६॥
निरबैरी निहकामना, निहकामी निज दास।
राधास्वामी दया कीजिये, सबसे रहूं उदास ॥७॥

प्रार्थना

(३२-४६२)

विद्या बुद्धि विवेक की, चरन कमल में खान।
दया मेहर गुरु कीजिये, दीजे शुभ मति ज्ञान ॥१॥
प्रेम भक्ति सद्‌गति सुगति, सब तुम्हरे आधीन।
दया दृष्टि गुरु कीजिये, चरन पड़ा जन दीन ॥२॥
खटक खटक सालत रहे, दुख दारुण उर सूल।
अपनी दया से काटिये, भव कलेश का मूल ॥३॥
चन्दन के ढिग आय के, सुधरे नीम पलास।
मैं आया तुम शरन में, कीजे अपना दास ॥४॥
चरन ओट में राखिये, शरनागत पहिचान।
राधास्वामी सतगुरु, दीजे भक्ति दान ॥५॥

अभ्यास की विधि

॥ चौपाई ॥

(३३-४६३)

गुरु की दया सुसंगत पाई। प्रेम उमंग रहा मन में छाई।
यह प्रपंच है दुख की खानी। काल कर्म के जाल फँसानी॥
तलपत बिलपत अवध सिरानी। छूटन की कोई बिधि नहीं जानी॥
उर में तीर बिपत का साले। बैद न मिला जो ताहि निकाले॥
कसक कसक भई पीर घनेरी। तड़प रहा ज्यों अग्नि भँमेरी॥
तीरथ बरत धरम अटकाना। पूजा पाठ नेम अभिमाना॥
जप तप संयम बहु बिधि किया। शान्ति न पाई भरमत रहा॥
भेद भाव से जब घबराया। गुरु सतसंग महिमा सुन पाया॥
दोहा श्रद्धा भाव की भेंट ले, आया गुरु दरबार।
दर्शन करतहि मिट गया, भव भ्रम मूल विकार॥

[३४-४६४]

गुरु ने हाथ सीस पर फेरा। दिया ज्ञान निज करके चेरा।
जीव ईश का मर्म जनाया। माया काल का भेद बताया॥
सतसंग की महिमा अति भारी। शेष महेश न बरने पारी॥
सहज योग सतसंग प्रतापा। करे तो समझ परे निज आपा॥
आपा समझ ईश पद सूझे। ब्रह्म सबल शुद्ध की गति बूझे॥
ज्ञान ध्यान की बिधि मन भाई। गुरु संगत में सब सुधि पाई॥
समझ परी श्रीगुरु मुख बानी। लखा अलख सतपद निर्बानी॥
हिये उठा आनन्द महाना। गुरु की दया सन्त गति जाना॥
दोहा बाच लच्छ निर्णय किया, उपजा प्रेम प्रतीत।
अनुभव मिला विचार पद, सूझ पड़ी धर्म नीत॥

(३५-४६५)

तब गुरु ने यों दिया संदेसा । करो जतन जाओ सत देसा ।
काल देश और माया देश । नित उपजावे कष्ट कलेश ॥
भूल भरम के यह अस्थान । यहां जीव रहे बंध फँसान ॥
जाग्रत स्वप्न का ज्यों व्यवहार । तैसाहि समझो जगत असार ॥
निश्चल अचल न होय मन चंचल । डांवाडोल रहे अति बेकल ॥
ज्ञान कथा मन काज कमाओ । धर विवेक उर ध्यान लगाओ ॥
वाचक ज्ञान का नहीं ठिकाना । यह नहीं मुख्य न सांचा ज्ञाना ॥
विना योग नहीं ज्ञान अखंड । बिन साधन नहीं सुमति प्रचंड ॥

दोहा ब्रह्माकार न वृत्ति जब, निष्फल वाचक ज्ञान ।
गुरु मत ले कुछ युक्ति कर, मेट देउ अज्ञान ॥

(३६-४६६)

सुरत शब्द का योग सुहावन । सुगम सुसाधन सुरुचि सुभावन ॥
शब्द में सुरत आपनी जोड़ो । सहजे भव के बन्धन तोड़ो ॥
चित को साध बैठ एकान्त । साधन कर मन को करो शान्त ॥
जब यह चित निर्मल हो जावे । तब कुछ रस साधन में पावे ॥
ज्यो ज्यों अधिक स्वादरस प्रगटे । त्यों त्यों मनकी गांठी खुले ॥
जड़ चेतन की ग्रंथी भारी । उरझ उरझ जीव भये दुखारी ॥
साधन से जब गांठी खोले । तब नहीं मन चंचल होय डोले ॥
मन चंचल का ज्ञान न निर्मल । चंचल नहीं है आतम निश्चल ॥

दोहा गुरु का यह उपदेश सुन, पूछे शिष्य सुजान ।
प्रभु साधन की बिधि कहो, दीन दुखी मोहि जान ॥

(३७-४६७)

सतगुरु ने तब बचन सुनाया । शब्द योग साधन ठहराया ॥
उलटो पुतली रोको मन को । बिधि से नित प्रति करो जतन को ॥
गुरु का नाम सुमिर हिय अंदर । योग कमाई करो निरंतर ॥

पहिले सहसकमल चढ़ जाओ । महिमा जोति का दीप जलाओ ॥
जब आँखों पर बांधे बन्द । जोती निरख प्रगटे आनन्द ॥
तत्व भास की लीला निरखो । विमल विलास हिये बिच परखो ॥
ज्यों जोती बीच जले पतिंगा । जरत न मोड़े अपनो अंगा ॥
त्यों तुम ध्यान जोति में लाओ । जोति देखकर चित ठहराओ ॥

दोहा ध्यान सुगम है जोति का, जोती अद्भुत रूप ।
इस जोती के मध्य में, व्यापक पुरुष अनूप ॥

(३८-४६८)

फिर तुम सुनो शब्द झनकारा । घंटा शंख की ध्वनी अपारा ॥
जब प्रगटे धुन घट में भाई । तब समझो घट पन्थ खुलाई ॥
धुन में नाम नाम में धुन है । गुन में गुनी गुनी में गुन है ॥
घंटा शंख बजे घट अन्तर । उपजे प्रेम प्रतीत निरंतर ॥
चित नहीं डोले रहे अडोल । आप न बोले सुन धुन बोल ॥
भाव कुभाव चित जब रुके । धुन आप ही प्रगटे मन नसे ॥
धुन से खिंचे सुरत धुन माहीं । अन्त न मन और चित कहुं जाहीं ॥
तार न टूटे ध्यान न छूटे । सहजहि मन आतम सुख लूटे ॥

दोहा देवल सहसकमलदल, प्रथम आरती कीन ।
दीवा बाला जोति का, घंटा शब्द प्रवीन ॥

(३९-४६९)

पहिली मंजिल हो गई पूरी । सुरत निबल अब हो गई सूरी ॥
गुरु बल पाय चली आगे को । तोड़ दिया भव के तागे को ॥
दूसरी मंजिल त्रिकुटी धाम । ओंकार का यही मुकाम ॥
एक ओं सतगुरु प्रसाद । पाय सुरत लागी विस्माद ॥
मूल मंत्र का यह अस्थान । ॐ प्रणव श्रुति पथ का ज्ञान ॥
सूरज मंडल लाली उषा । निरख हटाया मन का दोषा ॥

गुरु पद गुरु संग गुरु का मंडल। गुरु की बानी निर्मल निश्चल ॥
ओंकार की लाली जोत। है त्रिलोकी का यह सोत ॥

दोहा व्यापक ओम् का शब्द है, ज्यों मृदंग की धुन।
सुरत हुई अति बिमल गति, ओम् ओम् धुन सुन ॥

(४०-४७०)

मेघनाद लंका की बानी। रावणगढ़ की अटल निशानी ॥
जो कोई इस पद बासा पावे। सहजहि इन्द्री जीत हो जावे ॥
गगन चढ़े सुरत सुघड़ सहेली। अलबेली अल्लहड़ी नवेली ॥
यकटक होय लखे गुरु मूरत। अगम अगोचर अद्भुत मूरत ॥
मस्ती छाई ध्यान जमाया। ओंकार पद लख हरषाया ॥
काम क्रोध के मस्तक फोड़े। लोभ मोह के नाते तोड़े ॥
राम रूप मन सीता पाई। अवध राज की ली ठकुराई ॥
तन में रहे काज सब करे। तन के मोह मया सब हरे ॥

दोहा जैसे जल के बीच में, कमल रहा बिगसाय ॥
तैसी देह के बीच में, सुरत रही अलगाय ॥

(४१-४७१)

जब लग ओंकार नहीं दरसे। तब लग कबहुं न कारज सरसे ॥
ओम् विशेष पुरुष गुरु रूप। ओम् त्रिलोकी का निज भूप ॥
ओम् बीज है ओम् है सार। त्रिलोकी का यह आधार ॥
ओम् तीन साधन का मूल। ओम् जाप जग मेटे सूल ॥
ओम् आधार ओम् करतार। ओम् मूल बाकी सब डार ॥
ओम् तत्व है ओम् है मुख। ओम् से उपजे हिये का सुख ॥
ओम् वेद है ओम् पुरान। ओम् श्रुति स्मृति की जान ॥
निर्गुन सगुन में निर्गुन ओम्। व्याप रहा जग में धुन ओम् ॥

दोहा उत्पति सृष्टि प्रलय जग, प्रलय के आधार।
ब्रह्म खंड त्रिलोक में, ओम् है सबका सार ॥

(४२-४७२)

त्रिकुटी लख सुरत बढ़ी अगाड़ी । सुन्न समाध की आशा बाढ़ी ॥
कभी चिउंटी बन कभी बिहंगम । मकर तार गति मीन दीन सम ॥
कपि की चाल कूद मतवारी । सुन्न नगर की करी तैयारी ॥
स्वेत चन्द्र की जोत अपारा । आई दसवें द्वार पसारा ॥
नौ को छोड़ दसम दर लागी । नौ की नींद से सुन्न में जागी ॥
नौ के पार का नौका पाया । जल थल बन उपबन मन भाया ॥
ऊँचा परबत गहरी खाड़ी । लख लख चली सुरत मति गाढ़ी ॥
सारंग सारंग धुनी विचित्र । सुन्न में देखी सुन्न चरित्र ॥
दोहा गति सो सूक्ष्म निर्मल अमल, सुरत निरत रही झूम ।
सारंग सारंग शब्द की, पड़ी सुन्न में धूम ॥

(४३-४७३)

सुरत देख अति चित हरखानी । ज्ञान दशा लख भई विज्ञानी ॥
आनन्द दरसा अमित अपारा । शेष गनेश न बरने पारा ॥
आगे महासुन्न मैदाना । घोर तिमिर प्रकाश छुपाना ॥
कभी आगे कभी पीछे चाली । नाम सुमिरि मिली शक्ति निराली ॥
गुरु बल अंधकार सब नासा । पुरुषारथ की पाई आशा ॥
मान सरोवर किया अस्नान । हंसन गति लख लागा ध्यान ॥
सुरत हुई सहजहि विस्माध । ताड़ी लागी अगम अगाध ॥
चित भया अचित बिमन मन भया । चार शब्द सुने गुरु की दया ॥
दोहा घोर अखंड समाध लगी, तन मन की सुध नाहिं ।
महासुन्न कैलास गति, ब्रह्म शिखर के माहिं ॥

(४४-४७४)

आनन्द हर्ष अपार महाना । अचल अमल निर्मल गति भाना ॥
गुरु की दया सुरत जब जागी । प्रेम प्रीत भक्ति रस पागी ॥
निरविकल्प सविकल्प अस्थाना । देखा उपजा मन गुरु ज्ञाना ॥

हंस मंडली अद्भुत लीला। अमी अहार सप्रेम सुशीला ॥
सम दर्शी समचित सविवेका। पद दरसा नहीं एक अनेका ॥
कहत न आवे मुख से बैन। गुरु लख दीन्ही अपनी सैन ॥
बोले यह नहीं ठहरन धाम। चलो बढ़ो ले सतगुरु नाम ॥
सुरत नवीन चली जब आगे। पहुंची भँवरगुफा के नाके ॥

दोहा भँवर के बीच में गुफा है, सोत विचित्र अनूप।
चक्कर खाता रात दिन, रूप कहूं कि अरूप ॥

(४५-४७५)

सूर स्वेत पर दृष्टि जमाई। महा प्रकाश तेज अधिकाई ॥
कोटि कृष्ण छवि रही लजाई। मुरली धुन तहां पड़ी सुनाई ॥
सोहंग सोहंग बानी प्रगटी। अटल अटूट नहीं अबढ़न अघटी ॥
ओंग भया सोहंग आकार। "हूं" या "हू" अव्यक्त अपार ॥
सूक्ष्म प्रमाणु दृष्टि सब आवे। लख लख सुरत निरत हरखाये ॥
माया काल के रूप दिखाने। बिन यहां पहुँचे कोई क्यों जाने ॥
महाकाल का यह अस्थान। तप जप धाम अलौकिक भवन ॥
यही चक्र रचना की आदि। लखे सन्त बिरला बिसमाधि ॥

दोहा जो कोई इतने पद चढ़े, काल करे नहीं हान।
सृष्टि प्रलय उत्पति विषय, का तब पावे ज्ञान ॥

(४६-४७६)

सतगुरु कृपा हंस कोई आया। पूछा कौन कहां से आया ॥
बोली सुरत संत की दासी। सन्त मिले तब भई उदासी ॥
सत्य धाम की आसा धार। पहुँची यहां लग संग विचार ॥
हंस सुरत को लेकर साथ। चला जहां सत पद पद नाथ ॥
सत्य पुरुष का दर्शन दीन्हा। लख प्रकाश रूप सत चीन्हा ॥
कोटिन चन्द्र सूर उजियारी। बीन सुनी सत सत धुन भारी ॥

यह है सत सब और असत । यह हक नाहक और सब मत ।
माया काल से ऊँचा धाम । सन्तन का सतपद सत नाम ॥
दोहा यही ज्ञान का मूल है, यही रूप की खान ।
सतपद धुरपद आदि पद, अन्तिम पद निरवान ॥

(४७-४७७)

ली दुरबीन सुरत ले बढ़ी । आगे अलख अगम पद चढ़ी ॥
कौन लखे लख अलख निशानी । कौन कथे यह अकथ कहानी ॥
गम के पार अगम का देस । क्या कोई दे तिस का संदेश ॥
मन बानी दोउ रहे अलसाने । ज्ञानी योगी भेद न जाने ॥
अलख अगम के पार अनामी । अगति अगाध पुरुष राधास्वामी ॥
रूप न रंग न रेख न काया । अजर अमर अव्यक्त अमाया ॥
निज प्रकाश शोभा अति भारी । राधास्वामी धाम अपारी ॥
यह सत सिंध सत्य निज धाम । अमल अचल अविकार अकाम ॥
दोहा पाई सतगुरु की दया, आदि अनादि अगाध ।
निज स्वरूप निज रूप, तिन घन चैतन्य अबाध ॥

(४८-४७८)

धन्य धन्य गुरु धन्य दयाला । धन्य उदार सुसहज कृपाला ॥
तुम्हारी दया कटी जम फांसी । तुम्हरी कृपा अविद्या नासी ॥
जड़ चेतन का बन्ध कटाना । सकल उपाधी भरम हटाना ॥
अब नहीं व्यापे काल न माया । अब मैं रहूं न जग उरझाया ।
जीवन मुक्ति दशा चित लाऊँ । जल में कमल समान रहाऊँ ॥
कर्म अकर्म ज्ञान अज्ञाना । द्वन्द अवस्था से बिलगाना ॥
चेतन घन आनन्द घन बासी । धन आनन्द न पास सुपासी ॥
जीवन में विदेह गति पाई । जनक राज की बजी बधाई ॥
दोहा गुरु मिले सीतल भया, दूर भया उत्पात ।
राधास्वामी की दया, काल करे नहीं घात ॥

साखी

[४९-४७९]

शब्द अगम साखी निगम, महिमा अमित महान।
साखी शब्द को जानिये, निगमागम की खान ॥१॥
श्रुति स्मृति का सार है, मर्म न जाने कोय।
जो कोई पढ़े विचार से, सहजे पंडित होय ॥२॥
श्रुति धुनात्मक नाम घट, श्रुति गुरु का बैन।
मूल शब्द सिद्धान्त है, सुन चित प्रगटे चैन ॥३॥
साखी साक्षी स्वरूप है, स्मृति सुमिरन सार।
सुरत सखी साखी बनी, शब्द का किया निरवार ॥२॥
राधास्वामी नाम है, सुरत शब्द भंडार।
भाग्यवती गुरु नाम से, उपजे विमल विचार ॥५॥

[५०-४८०]

कथा कीर्तन जगत में, अति उत्तम व्यवहार।
भाग्यवती इस जगत से, गह परमारथ सार ॥१॥
कथा कीर्तन रात दिन, जो कोई करे विचार।
भाग्यवती व्यापे नहीं, उसको अशुभ विकार ॥२॥
कथा कीर्तन सुगम है, तू इसको चित दे।
भाग्यवती संसार में, धर्म मुक्ति फल ले ॥३॥
कथा कीर्तन कीजिये, त्याग मोह मद काम।
भाग्यवती भव दुख मिटे, मन पावे विश्राम ॥४॥
नाव पड़ी मंजधार में, केहि विधि उतरे पार।
भाग्यवती गुरु नाम ले, कथा कीर्तन सार ॥५॥
कथा कीर्तन कीजिये, सतगुरु के आधार।
भाग्यवती सहजे मिले, सत दयाल करतार ॥६॥

कथा कीर्तन कीजिये, भक्ति साज दल साज।
भाग्यवती मन में जुड़े, मंगल मोद समाज ॥७॥
कथा कीर्तन सार है, साधन सुगम सुभाव।
भाग्यवती जग तरन का, नहीं कोई और उपाव ॥८॥
कथा कीर्तन के किये, उपजे हृदय विवेक।
भाग्यवती इस विधि लहे, इष्ट देव की टेक ॥९॥
कथा कीर्तन ध्यान है, सुमिरन भजन सुसंग।
भाग्यवती सहजे बने, कीट से भृंग सुरंग ॥१०॥
कथा कीर्तन कीजिये, भाग्यवती निष्काम।
ऐड़ी से चोटी तलक, व्यापे गुरु का नाम ॥११॥
कथा कीर्तन में रहे, ज्ञान भक्ति का मूल।
भाग्यवती सब भूल जा, किंचित इसे न भूल ॥१२॥
कथा कीर्तन में बसे, जप तप परम विराग।
भाग्यवती कर ग्रहन यह, और सबन को त्याग ॥१३॥
कथा कीर्तन में बसें, डार पात फल फूल।
भाग्यवती अब क्या गहे, गह लिया भक्ति का मूल ॥१४॥
कथा कीर्तन का मिला, दान तो हुई निहाल।
ध्यान गर्भ से भाग्यवती, प्रगटे गोद दयाल ॥१५॥
आंख कान मुख नासिका, मस्तक तन भये गोद।
खेलें गोद दयाल नित, भाग्यवती लह मोद ॥१६॥
लाल दयाल हुए मेरे, मैं हो गई निहाल।
भाग्यवती लख लाल को, व्यापा चहुँ दिस लाल ॥१७॥
लाली अपने लाल की, जहां देखूँ तहां लाल।
भाग्यवती खोजे किसे, यहां वहां लाल दयाल ॥१८॥
लाल लाल सब लाल है, प्रगटा लाल गुलाल।
भाग्यवती सहजे तरी, सतगुरु हुये दयाल ॥१९॥

कथा कीर्तन में मिला, राधास्वामी नाम।
भाग्यवती हुई मगन मन, सब विधि पूरन काम ॥२०॥
राधास्वामी गायकर, जनम सुफल कर ले।
यही नाम निज नाम है, मन अपने धर ले ॥२१॥

॥ चौपाई ॥

(५१-४८१)

राधास्वामी मेरे धीर गम्भीर। राधास्वामी जोधा राधास्वामी वीर ॥
राधास्वामी गुन आगर गुन नागर। राधास्वामी दया प्रेम के सागर ॥
राधास्वामी सुरत शब्द भंडारा। राधास्वामी मन बानी के पारा ॥
राधास्वामी अधिष्ठान आधार। राधास्वामी अचल अटल भव पार ॥
राधास्वामी राधास्वामी राधास्वामी गाऊँ।
राधास्वामी राधास्वामी राधास्वामी ध्याऊँ ॥

दोह पतित पावन भय नसावन, दया करुना रूप।
राधास्वामी सन्त सतगुरु, पद अगाध अनूप ॥

राधास्वामी नाम जो चित से धारे। सहज जाय भव सागर पारे ॥
राधास्वामी नाम हिये से गावे। करम भरम के फन्द कटावे ॥
राधास्वामी नाम नाम निज नामा। जो गावे सो पूरन कामा ॥
राधास्वामी महिमा बरनि न जाय। शेष महेश रहे सकुचाय ॥
राधास्वामी सुमिर सुमिर राधास्वामी। राधास्वामी चरनन सदा नमामी

दोहा बसे हृदय में हमारे, राधास्वामी जान हो।
राधास्वामी ठहरे मन में, ज्ञान सत अनुमान हो ॥

राधास्वामी सन्त भेष जब धारा। राधास्वामी रूप लगा अति प्यारा ॥
राधास्वामी भाव बसा जब मन में। राधास्वामी छबि छाई नैनन में ॥
राधास्वामी शब्द पड़ा श्रवन में। जाग सुरत लगी शब्द जतन में ॥
कुण्डलिनी शक्ती सुरत वारी। बसी सहसदल मूलाधारी ॥

राधास्वामी शब्द रूप जब परखी। खिसकी अधर धाम गति निरखी

दोहा त्रिकुटी महल में आन पहुँची, ओम् के दरबार।
धुन मृदंग कानों सुनी, मिला पद ओंकार ॥

राधास्वामी अलख अगम राधास्वामी।
राधास्वामी ताल सुसम राधास्वामी ॥
राधास्वामी नाम अनाम अनामी।
राधास्वामी इष्ट धाम निज धामी ॥
राधास्वामी शब्द सुरत के पार। राधास्वामी शब्द शब्द से न्यार ॥
राधास्वामी धुन राधास्वामी राग। राधास्वामी प्रेम भक्ति वैराग ॥
राधास्वामी चमन फूल राधास्वामी। राधास्वामी पौद मूल राधास्वामी ॥

दोहा राधास्वामी नाम में जो, रत रहे दिन रैन।
राधास्वामी की दया से, पावे आनन्द चैन ॥

सतपद सत्य रूप राधास्वामी। सोहंग भँवर भूप राधास्वामी ॥
निःअच्चर पद शून्याकार। अच्चर धाम रूप ओंकार ॥
च्चर में सहस सहस के भाव। राधास्वामी नाम से लहे उपाव ॥
आदि अनादि जुगादि अनाम। राधास्वामी ऋर्थ धर्म सतकाम ॥
राधास्वामी मुक्ति युक्ति निरबान। राधास्वामी भक्ति भजन विज्ञान ॥

दोहा राधास्वामी नाम धन नित, सुरत निरत से गाइये।
राधास्वामी पद कमल में, अपना सीस झुकाइये ॥

(५२-४८२)

राधास्वामी साँस भास राधास्वामी। राधास्वामी भाव आस राधास्वामी
राधास्वामी प्रान व्यान राधास्वामी। सम समता समान राधास्वामी ॥
तीजे तिल उदान राधास्वामी। मूला चक्र अपान राधास्वामी ॥
राधास्वामी श्रोत्र नैन राधास्वामी। राधास्वामी बचन बैन राधास्वामी
राधा अंतर राधास्वामी बाहर। राधास्वामी घट राधास्वामी जाहिर ॥

दोहा दृष्टि सृष्टि दृश्य को लखि, राधास्वामी गाइये।
राधास्वामी की दया से, राधास्वामी पाइये ॥

राधास्वामी ब्रह्मा विष्णु महेशा। राधास्वामी देवी देव गनेशा ॥
राधास्वामी ब्रह्म ब्रह्म के भेस। राधास्वामी परब्रह्म के देस ॥
राधास्वामी ईश्वर और परमेश्वर। राधास्वामी अच्चर और निःअच्चर ॥
राधास्वामी सम कोई और न जानूँ। राधास्वामी सबमें व्यापक मानूँ ॥
सबको करूँ प्रनाम सप्रीती। गुरुपद इष्ट यही शुभ नीती ॥

दोहा राधास्वामी नाम लेकर, राधास्वामी ध्यान हो।
राधास्वामी धुन का अन्तर, ऊँचे घाट में गान हो ॥

राधास्वामी पंथ राधास्वामी पंथी। राधास्वामी ग्रन्थ राधास्वामी ग्रन्थी
राधास्वामी लोक वेद राधास्वामी। राधास्वामी मर्म भेद राधास्वामी
राधास्वामी नाम से नाता जोड़ा। जगत के मत से नाता जोड़ा ॥
राधास्वामी राधास्वामी राधास्वामी। राधास्वामी राधास्वामी राधास्वामी
उट्ठे बैठे खड़े उताने। राधास्वामी भजत रहूं मन माने ॥

दोहा सांस सांस में सुमिर गुरु को, गुरु के ध्यान में मगन हो।
लाग सच्ची मन से हो, इस रीति सच्ची लगन हो ॥

राधास्वामी जोति राधास्वामी झाईं। राधास्वामी दीप दीप परछाईं
राधस्वामी जाग्रत राधास्वामी सुपने। सुषुप्ति में राधास्वामी अपने
राधास्वामी तुरिया तुरियातीत। राधास्वामी पद दोनों से अतीत
राधास्वामी लोक लोक से न्यारे। राधास्वामी उदासीन सत प्यारे
जल थल पावक गगन समीरा। राधास्वामी के सब देह शरीरा

दोहा सब में व्यापक सबसे न्यारा, राधास्वामी का है रूप।
रूप रंग नहीं कोई अद्भुत, विचित्र अगम अनूप ॥

राधास्वामी सुन राधास्वामी गुन। राधास्वामी राग ताल सम धुन
सहसकमलदल राधास्वामी गाना। घंटा शंख के शब्द अनुमाना ॥

त्रिकुटी राधास्वामी ओम् अलाप। ज्यों मृदंग थप थापा थाप ॥
सुन्न में राधास्वामी ररंकार। भँवर बांसुरी सोहंकार ॥
सतपद बीन मधुर धुन गाजी। सत्त सत्त राग निज साजी ॥

दोहा ऐसा हो अभ्यास निस दिन, सुरत शब्द की रीति से।
राधास्वामी अलख अगम को, पाइये परतीत से ॥

(५३-४८३)

राधास्वामी अगम अनाम अनूपा। राधास्वामी अलख अपार अरूपा ॥
राधास्वामी दीनबन्धु जग दाता। राधास्वामी सबके पितु और माता ॥
राधास्वामी गुप्त प्रकट राधास्वामी। राधास्वामी अघट सुघट राधास्वामी
राधास्वामी यहां वहाँ राधास्वामी। राधास्वामी जहां तहां राधास्वामी ॥
पृथ्वी आकास गगन राधास्वामी। ऊसर परवत बन राधास्वामी ॥

दोहा दृश्य तेरा रात दिन, आंखों में अब आकर रहे।
शब्द तेरा कान में हो, नाम मुख रसना लहे ॥

राधास्वामी वार पार राधास्वामी। राधास्वामी तट मँझार राधास्वामी॥
राधास्वामी आदि अंत राधास्वामी। राधास्वामी साध संत राधास्वामी ॥
तीन चार और एक न मानूँ। सब में व्यापक राधास्वामी मानूँ ॥
राधास्वामी घट में किया निवासा। राधास्वामी चहुँदिस किया प्रकाशा ॥
राधास्वामी चरन कमल में बास। राधास्वामी रात दिवस मेरे पास ॥

दोहा ऐसा सुमिरन नाम का हो, टूटने पाये न तार।
राधास्वामी जीत राधा, स्वामी मन के मेरे हार ॥

राधास्वामी चन्द्र जोत राधस्वामी। राधास्वामी सिंध सोत राधास्वामी
राधास्वामी कला सूर राधास्वामी। राधास्वामी वृत्त मूल राधास्वामी ॥
राधास्वामी जान प्रान राधास्वामी। राधास्वामी ज्ञान मान राधास्वामी॥
सुमिरन भजन ध्यान राधास्वामी। राधास्वामी शब्द तान राधास्वामी॥
राधास्वामी राधास्वामी राधास्वामी। राधास्वामी राधास्वामीराधास्वामी

दोहा मुझको अपने पद का ऐसा, प्रेम गहरा दीजिये।
अपना जन मुझको बनाकर, तव शरन में लीजिये ॥

राधास्वामी आये जीव उबारन। राधास्वामी सहज बने जग तारन ॥
सन्त भेस धर यहाँ चल आये। राधास्वामी जीव को अंग लगाये ॥
राधास्वामी जीव जन्तु घट वासी। राधास्वामी अमल विमल सुखरासी
राधास्वामी निराधार आधारा। राधास्वामी वार पार से न्यारा ॥
राधास्वामी राधास्वामी बारम्बारा। कहत सुनत रहूं सहित विचारा ॥

दोहा दया कीजे महर कीजे, भक्ति दीजे दीन को।
सिंध की सद्‌गति में दीजे, वासा अपने मीन को ॥

राधास्वामी राधास्वामी राधास्वामी। राधास्वामी राधास्वामी राधास्वामी
राधास्वामी जान जान से प्यारे। राधास्वामी मेरे आंखों के तारे ॥
मेरे हृदय करें निवास। राधास्वामी मैं निज दास ॥
सांस साँस भजूँ राधास्वामी। आस भास सुमिरूँ राधास्वामी ॥
राधास्वामी मंगल मंगलकारी। राधास्वामी पाय न रहूं दुखारी ॥

दोहा तारिये और तार लीजे, नाम रतन का दान दे।
राधास्वामी अपना कीजे, चरन शरन की ओट दे।

(५४-४८४)

उत्तम वृत्ती सहज की, सहज भाव चित दे।
सहज सहज में सहज है, सहज मुक्ति फल ले ॥१॥
सहजा वृत्ती उत्तमा, मध्य धारना ध्यान।
अधम मूर्ति पूजा विषय, तीरथ नीचा जान ॥२॥
जाकी जैसी प्रकृति, तैसे तिस का काम।
छेड़ छाड़ नहीं कीजिये, लीजे गुरु का नाम ॥३॥
जो बन आवे सहज में, सोई सहज का रूप।
जिसमें खींचातान हो, जान भरम का कूप ॥४॥

सहज सहज जो सहज बिधि, सो फल मीठा होय।
और युक्ति से जो पके, सुन्दर मधुर न सोय ॥५॥
साधन सुमिरन सहज का, सहजहि सहज विधान।
सहज वृद्धि सहज आचरन, अन्त सहज निर्वान ॥६॥
निर्विकल्प सविकल्प नहीं, उत्तम सहज समाध।
सहज समाध सहजहि मिले, छूटे सहज उपाध ॥७॥
सहज में नहीं कठिनता, सीख सहज मत रीत।
साधन सहज की प्रबलता, उपजे प्रेम प्रतीत ॥८॥
प्रेम प्रतीत सहज बिधि, कठिन न प्रेम का पन्थ।
प्रेम बिना सब व्यर्थ है, भरम न छूटे ग्रन्थ ॥९॥
ग्रन्थ पढ़ा तो क्या भया, मिला न प्रेम का पन्थ।
प्रेम युक्ति सहजे खुले, जड़ चेतन की ग्रन्थ ॥१०॥
सुरत शब्द अभ्यास से, वृत्ति सहज हो प्राप्त।
निज अनुभव साक्षात्कार, सहज शब्द मत आप्त ॥११॥
सहज इन्द्री का ज्ञान है, सहज ज्ञान अनुमान।
सहज शब्द निज ज्ञान है, यही है मुख्य प्रमान ॥१२॥
तुझमें मान प्रमान है, तुझमें ज्ञान अनुमान।
तुझमें शब्द की खान है, आप्त वचन सुन कान ॥१३॥
कठिन ग्रन्थ की जेवरी, बंधि रहे चतुर सुजान।
निज अनुभव सूझा नहीं, पाया वाचक ज्ञान ॥१४॥
वाचक ज्ञान को त्याग दे, महा कठिन व्यवहार।
प्रेम प्रतीत प्रभाव से, पावे उत्तम सार ॥१५॥
सहज रीति सतसंग कर, सहज स्रवन और मनन।
सहज शब्द अभ्यास है, सुमिरन सहज भजन ॥१६॥
मिस्री जब जल से मिली, होगई जल का अंग।
वैसे ही गुरु के संग को, समझ सत्य का अंग ॥१७॥

नोन गला पानी भया, भरे कौन अब गोन ।
सतसंगत परताप से, मन बानी चित मौन ॥१८॥

(५५-४८५)

चित चरनों से जोड़िये, साक्षी भाव समान ।
तब सतगुरु का प्राप्त हो, सहज ध्यान अनुमान ॥१॥
सहज सहज में सहज हो, सहज सहज का काम ।
सहज भजन और ध्यान हो, सहजहि सुमिरन नाम ॥२॥
सहज भाव को समझ लो, कठिनाई को त्याग ।
कठिनाई में विकलता, सहज में प्रेम अनुराग ॥३॥
सहज सहज जो पग धरे, पहुँचे गुरु दरबार ।
कठिन भाव हृदय बसे, फिर नहीं बेड़ा पार ॥४॥
सहजे पके मिठास है, करो न खींचा तान ।
सहज वृत्ति है नम्रता, खींच तान अभिमान ॥५॥
सहज मौज की रीति है, सहज चले जो कोय ।
सहज भाव अन्तर बसे, घट में दर्शन होय ॥६॥
सुमिरन साधन सहज का, सतगुरु दिया बताय ।
सहज सहज सुमिरन करो, एक दिन गुरु मिल जाय ॥७॥
सहज समाना सहज में, सहजे चित्त में चेत ।
साधन सहज सुलभ सदा, सहजहि से हो हेत ॥८॥
राधास्वामी की दया, सहज योग चित लाय ।
भव तरने का सेत यह, और न कोई उपाय ॥९॥

[५६-४८६]

करनी से चित लाइये, तजिये बचन असार ।
कथनी है निश्फल सदा, अपने हृदय विचार ॥१॥
संशय भरम को त्याग कर, करनी को चित दे ।
करनी से रहनी मिले, गुरु भक्ति फल ले ॥२॥

रत्ती भक्ति नाम की, फल लावे तत्काल।
बात चीत में जो फँसा, ताहि सतावे काल ॥३॥
बातों में है क्या धरा, बात बात की बात।
बात से नहीं परदा खुले, लख केले का पात ॥४॥
सहज कमाई नाम की, नाम से लौ रहे लाग।
राधास्वामी की दया, पावे भाग सुभाग ॥५॥

[५७-४८७]

सबसे उत्तम शील धन, जाने कोई सुशील।
और सकल निरधन यहाँ, शील बिना सब भील ॥१॥
नम्र भाव चित में बसे, प्रेम हिये में व्याप।
नर सुशील के तन बदन, साहब बसता आप ॥२॥
साहब शील महान है, शीलवन्त है दास।
शील का धन जब मिलगया, दास न रहे उदास ॥३॥
बड़ा पदारथ शील है, शील क्षमा का रूप।
जिसमें शील क्षमा नहीं, बूड़े भव जल कूप ॥४॥
शील ज्ञान दोऊ एक है, मन में रहे विचार।
राधास्वामी की दया, भव से बेड़ा पार ॥५॥

(५८-४८८)

पर उपकारी आत्मा, सहे न कोई दुख।
यही तो परमानन्द है, यही सुक्ख है सुख ॥१॥
देह मिली तो देह कुछ, देह देह कुछ देह।
नहीं भरोसा देह का, देह होगई खेह ॥२॥
खाली आये जगत में, खाली हाथों जाय।
पर उपकारी आत्मा, दान का द्रव्य कमाय ॥३॥
लेना हो सत नाम ले, देना अन्न का दान।
राधास्वामी की दया, निश्चय हो कल्यान ॥४॥

(५९-४८९)

जाके मन विश्वास है, सदा रहे गुरु साथ ।
काल कर्म व्यापे नहीं, हाथ में गुरु का हाथ ॥१॥
सीस में गुरु मूरत बसे, धरे सीस पर हाथ ।
भय चिंता क्यों हो मुझे, सदा जो गुरु का साथ ॥२॥
घट अन्तर बैठक किया, रहना गुरु के संग ।
कैसे फिर संसार से, मेरा चित हो भंग ॥३॥
गगन गुरु घट शिष्य है, दो देही एक प्रान ।
सुरत शब्द मेला भया, समझे साधु सुजान ॥४॥
राधास्वामी की दया, मिला शब्द का भेद ।
चिंता दुविधा मिट गई, रहा न मन में भेद ॥५॥

[६०-४९०]

सेवक सेवा में रहे, सेवा में दे चित ।
जो सेवा में आलसी, क्या हो उसका हित ॥१॥
आज्ञाकारी सेवका, आज्ञा सीस धरे ।
अपना आपा मेटकर, गुरु की भक्ति करे ॥२॥
अपना तो कुछ भी नहीं, गुरु दाता का सब ।
ऐसी समझ जब मन बसे, सेवक कहिये तब ॥३॥
करता बन करनी करे, हठ को मन में ठान ।
ऐसे सेवक का कहो, केहि बिधि हो कल्यान ॥४॥
गुरु मस्तक व्यापे सदा, गुरु को सिर पर धार ।
ऐसा सेवक जगत में, सहे न दुख का भार ॥५॥
मनमत त्याग गुरुमत बने, गुरुमत है सिद्धान्त ।
राधास्वामी की दया, सेवक रहे निर्भ्रान्त ॥६॥

(६१-४६१)

दृष्टि सृष्टि का भेद है, और नहीं कुछ भेद।
दृष्टि सृष्टि का मर्म लख, मिटे जगत का खेद ॥१॥
दृष्टी में सृष्टी रहे, सृष्टि दृष्टि आधार।
मोर तोर जब दृष्टि में, तब दृष्टी संसार ॥२॥
ज्ञान दृष्टि लवलीन जब, ज्ञान सृष्टि तब होय।
जो अज्ञान है दृष्टि में, सृष्टि अज्ञान की सोय ॥३॥
दिल का परदा खोलकर, देख गुरु का रूप।
गुरु सृष्टि गुरु दृष्टि में, फिर नहीं भव का कूप ॥४॥
गुरुमत सृष्टी ज्ञान की, मनमत सृष्टि अज्ञान।
राधास्वामी की दया, अपना रूप पिछान ॥५॥

(६२-४६२)

सतसंग करना सुगम है, सतसंग किया न सोय।
पारस से परदा रहे, कंचन केहि विधि होय ॥१॥
नाम लिया तो क्या हुआ, बकबक में गये खोय।
रसना में रस नाम नहिं, सो सुमिरन नहीं होय ॥२॥
मनमत है गुरुमत नहीं, चंचल मन को कीन।
ध्यान ज्ञान बेकाम सब, चित नहीं गुरु में लीन ॥३॥
कथनी का सुमिरन किया, कथनी का किया ध्यान।
अनुभव जागे क्यों तेरा, कथनी का रहा ज्ञान ॥४॥
सुरत निरत थिर कीजिये, फिर लीजे गुरु नाम।
छिन पल के अभ्यास में, सब विधि पूरन काम ॥५॥
समझ समझ पग धारिये, पंथ है सुगम सुहेल।
पंथ में पंथाई चले, जो हो गुरु से मेल ॥६॥
गुरु अलग चेला अलग, अलग चाल चले मन।
मैं तोहि पूछूँ साधुवा, यह कैसा है जतन ॥७॥

राधास्वामी नाम भज, धुन आत्मक सो होय।
वर्णात्मक का काम नहीं, गये वर्ण सब खोय ॥८॥

[६३-४६३]

मनमत मन का दास है, गुरुमत गुरु का दास।
मनमत सदा उदास है, गुरुमत मन विश्वास ॥१॥
गुरुमत मौज अधीन नित, परखे मौज की बात।
मनमत मन के बन्ध बँधे, बिलपे दिन और रात ॥२॥
दुख सुख सिर ऊपर सहे, भजे गुरु का नाम।
गुरुमत आनन्द रूप है, दिन के आठों याम ॥३॥
गुरुमत शील क्षमा दया, धारे अपने मन।
मनमत को है दुख घना, चैन न पावे तन ॥४॥
गुरुमत पतिव्रत रूप है, हृदय पिया का ध्यान।
मनमत है व्यभिचारिणी, भोगे नरक निदान ॥५॥
पतिव्रता पति को भजे, एक पति की आस।
व्यभिचारिन को दुख महा, नहीं आस विश्वास ॥६॥
पिउ पिउ पिउ पिउ नित भजे,सदा सुशीला नार।
ताके शील चरित्र के, गुरु सदा रखवार ॥७॥
पतिव्रता मैली भली, भाव आस चित एक।
मन मैली व्यभिचारिनी, बँधी जो बन्ध अनेक ॥८॥
एक भरोसा एक बल, एक आस विश्वास।
ऐसी नारि सुन्दर महा, कबहुँ न होय उदास ॥६॥
मोती चमके कीट संग, गगन में चमके भान।
पतिव्रता पति संग में, झलके झलक महान ॥१०॥
पति पत्नी व्यवहार लख, मेरा चित आनन्द।
यही भोग और जोग है, क्या समझे मतिमन्द ॥११॥

ज्ञानी भूला ज्ञान में, जोगी भूला जोग।
पति पत्नी के मेल का, नहीं समझे संजोग ॥१२॥
भया सुशीला नारि का, ज्ञान के संग विवाह।
शील ज्ञान मिल एक हैं, गुरु के हाथ निबाह ॥१३॥
ज्ञान सुशीला संग नित, प्रेम प्रीति व्यवहार।
नर का जनम सुफल भया, कोई समझे वर नार ॥१४॥
राधास्वामी की दया, मिला भक्ति का दान।
भक्ति के अंग संग रहे, शील दया और ज्ञान ॥१५॥

(६४-४६४)

देह धरा तो देह तू, कर्म धर्म सत ज्ञान।
कर्म धर्म सत ज्ञान से, और का हो कल्यान ॥१॥
देह धरा तो देह तू, अन्न द्रव्य का दान।
अन्न द्रव्य के दान से, तेरा हो कल्यान ॥२॥
देह धरा तो देह तू, मुख से मीठे बैन।
मुख के मीठे बैन से, सबको हो सुख चैन ॥२॥
देह धरा तो देह तू, औरों का सन्मान।
औरन के सन्मान से, तुझे मिलेगा मान ॥४॥
देह धरा तो देह तू, सतगुरु का सत नाम।
सतगुरु के सत नाम से, पावेगा विश्राम ॥५॥
देह धरा तो देह तू, प्रेम प्रीत परतीत।
प्रेम प्रीत परतीत से, होगा तेरा हीत ॥६॥
देह धरा तो देह तू, विद्या बुद्धि विचार।
विद्या बुद्धि विचार से, हो तेरा उपकार ॥७॥
देह धरा तो सेव कर, सेवक का यह धर्म।
सेवा कर गुरु देव की, समझ भक्ति का मर्म ॥८॥

देह धरा अच्छा भया, देह देह अब देह।
धन दे मन दे देह दे, अशरन को दे गेह ॥९॥
देह धरा अच्छा भया, जी औरों के हेत।
औरों का उपकार है, भव तरने का सेत ॥१०॥
देह धरा तो देह अब, जब लग तेरी देह।
देह देह दे देह दे, देह गेह अरु नेह ॥११॥
देह धरा तो देह तू, तन मन निज मन देह।
देह खेह हो जायगी, फिर कौन कहेगा देह ॥१२॥
जीना मरना एक है, दोनों एक समान।
नर की देही जब मिली, कर सबका कल्यान ॥१३॥
नदी बहे नहीं आपको, फल नहीं खावे पेड़।
जो नर ऐसा नहीं है, उसे काल का एड़ ॥१४॥
सन्तन का मत है यही, देह देह कुछ देह।
जो नहीं देगा देह को, देह अन्त में खेह ॥१५॥
लेना हो सतनाम ले, देना हो अन्न दान।
लेने देने को समझ, यह सिद्धान्त महान ॥१६॥
जो देगा लेगा वही, समझ गुरु की बात।
जो देने वाला नहीं, सहेगा जम की घात ॥१७॥
अपने लिये न जी कभी, यह गुरु का उपदेश।
जी तू औरों के लिये, यह है सन्त सन्देश ॥१८॥
मरा जो औरों के लिये, वह जीवित है नर।
जिया जो अपने देह को, वह है कूकर खर ॥१९॥
सेवक सेवा करे नित, सेवा गुरु की रीत।
सेवा के परताप से, लेगा काल को जीत ॥२०॥
काल कर्म को जीतकर, चल सतगुरु के धाम।
धुरपद सतपद पहुँच कर, ले सच्चा विस्राम ॥२१॥

लेना हो सो जल्द ले, कही सुनी मत मान।
लेना दान का रूप है, गुरु बानी परमान ॥२२॥

(७५-४६५)

घट में नूर प्रकाशिया, बरस गया चहुँ ओर।
जगमग जगमग हो रहा, बढ़ा नूर का जोर ॥१॥
नूर नूर सब कोई कहे, नूर न जाने कोय।
गुरु गम परख का ज्ञान जो, नूर कहावे सोय ॥२॥
आदि अन्त यह नूर है, छाय रहा भरपूर।
जो न लखे इस नूर को, तिस आंखन में धूर ॥३॥
घट में प्रेम प्रगट भया, आंसू निकले नैन।
धोगये छिन में नैन दोउ, अब लख नूर का सैन ॥४॥
राधास्वामी रूप में, दरस नूर का पाय।
तिमिर मिटा अज्ञान का, सतगुरु भये सहाय ॥५॥

[६६-४६६]

दुख आया जब देह में, मीठा लागा नाम।
यह सुख गति अनमोल है, हिय पाया विश्राम ॥१॥
दुख साबुन है देह का, मल दे छांट बहाय।
मल तज निर्मलता मिले, जो गुरु होय सहाय ॥२॥
दुख आया और सुख गया, पाया दंड शरीर।
कर्जा मेटा काल का, चित से बना गंभीर ॥३॥
सुख से भूला नाम को, दुख ने दिलाई याद।
बुरा कहूं क्यों दुख को, दुख में सुख का स्वाद ॥४॥
राधास्वामी की दया, मेटो मन की पीर।
नाम जपूँ लवलीन हो, हिय रहे धीर गंभीर ॥५॥

चौपाई (६७-४६७)

रंग रंगी जब घट की चुनरिया। नाचे रंगीली सुरत बहुरिया ॥
गुरु ने रंग दिया गाढ़ा रंग। क्यों करे काल करम चित भंग ॥
नहीं हो सुरत कुरंगी मेरी। लाख हो माया की हेरा फेरी ॥
दुख न सतावे न चिंता व्यापे। अन्तर में रहूं आपहि आपे ॥
कोटि काल झकझोले माया। चित न भंग हो गुरु की दाया ॥
अंतमती सत गति मेरे भाई। राधास्वामी हुये हैं सहाई ॥
राधास्वामी राधास्वामी चित्त बसाय। सुरत बहुरिया गुरु गुन गाय ॥

(६८-४६८)

जाके मन विश्वास है, सो है मन का धीर।
शान्त चित्त निर्भ्रान्त भया, आनन्द हर्ष शरीर ॥१॥
अनहोनी होनी नहीं, होनी होय सो होय।
होनी अनहोनी दोउ, टार सके नहिं कोय ॥२॥
दाता मौज की परख नहीं, मौज अगाध की बात।
कै जाने सेवक कोई, कै जाने कोई साध ॥३॥
मौज भरोसे साध जन, मौज का धर विश्वास।
मौज अधीन बसे सदा, धार गुरु की आस ॥४॥
राधास्वामी मौज में, रहूं मगन मन माँह।
क्यों मन अब चंचल बने, गुरु ने पकड़ी बाँह ॥५॥

(६९-४६९)

एक भरोसा गुरु का, मन व्यापा दिन रात।
सोते फिरते जागते, गुरु का सिर पर हाथ ॥१॥
शब्द गुरु चेला सुरत, रूप अनूप महान।
एक घट में एक गगन में, सुरत शब्द पहिचान ॥२॥
शब्द सुरत मिल एक जब, गुरु चेला तब एक।
सुरत शब्द अभ्यास से, उपजे हिये विवेक ॥३॥

सुरत शब्द भंडार है, शब्द सुरत भंडार।
सुरत शब्द अभ्यास से, प्रगटा हिये विचार ॥४॥
बिना शब्द के सुरत नहीं, सुरत बिना नहीं शब्द।
गुरु मुख प्यारा कोई लखे, क्या है शब्द अशब्द ॥५॥

(७०-५००)

राधास्वामी सत्त है, और सकल सब झूँट।
जो सुमिरे इस नाम को, छुटे काल का खूँट ॥१॥
राधास्वामी नाम गह, मन मन्सा को त्याग।
यही मुख्य अनुराग है, यही मुख्य वैराग ॥२॥
राधास्वामी भजन है, राधाधास्वामी ध्यान।
सुमिरन राधास्वामी नाम है, राधास्वामी ज्ञान ॥३॥
राधास्वामी गुरु मिलें, राधास्वामी देव।
राधास्वामी चरन की, निसदिन कीजे सेव ॥४॥
राधास्वामी आदि जुगाद हैं, राधास्वानी धुरपद धाम।
राधास्वामी चरन सरोज में, कोट कोट परनाम ॥५॥

॥ चौपाई ॥

(७१-५०१)

नाम रूप दोउ अकथ कहानी। बरनत बने न जाय बखानी ॥
जो चाहे सत आनन्द ज्ञाना। गुरु समीप सो जाय सुजाना ॥
सतसंग करे बचन को सुने। सुन सुन बचन चित्त से गुने ॥
गुन कर बचन सो करे अहारा। परमारथ से बाढ़े प्यारा ॥
रुष्ट पुष्ट होय मन को सोधे। निर्मल मन निर्मलता बोधे ॥

दोहा मन की निर्मलता मिले, भागे मन से पाप।
गुरु का रूप लखे तब, गुरु फिर प्रगटें आप ॥

श्रद्धा बढ़े प्रीत हिय बाढ़े। चित की दुचिताई को काढ़े ॥
गुरु से नाम की विधि तब पूछे। करे कमाई तब कुछ सूझे ॥
प्रथम सहसदल करे निवासा। देखे घट में विमल विलासा ॥
जोति विराट का दर्शन पावे। जोति निरंजन लख हरखावे ॥
घंटा शंख सुने धुन दोई। चित से दुर्मति अवगुन खोई ॥

दोहा　नाम रूप जब लख परे, उपजे अति आनन्द।
　　हरख हरख आलस तजे, सुमति होय मति मन्द ॥

कुछ दिन सहसकमल में बासा। फिर आगे पग धरे हुलासा ॥
त्रिकुटी ओंकार की लीला। सुगम सुभाव सुकृत सुशीला ॥
लाली उषा लाली जोती। लाल रंग के पन्ना मोती ॥
श्रुति स्मृति का ज्ञान बिचारे। सुन सुन श्रुति अपना मन हारे ॥
ओम् मृदंग की धुन अति निर्मल। वेद मंत्र का धारे चित बल ॥

दोहा　यह गुरु का अस्थान है, यह रचना की खान।
　　ओम् मंत्र का बीज है, मूल तत्व का ज्ञान ॥

घट में गुरु घट ही में चेला। घट में खेले खेल सुहेला ॥
घट का सतसंग यहां तब पावे। गुरु मिले तब भेद बतावे ॥
गुप्त भेद यह मर्म कहानी। समझे कोई गुरु मुख गुरु ज्ञानी ॥
शब्द गुरु चेला सुरत होई। शब्द सुरत मिलि भव दुख खोई ॥
शब्द सुरत गुरु चेला जान। जो गुरु कहें सुरत सोई मान ॥

(७२-५०२)

जब लग कोई न समझे बात। सुने कहे बाढ़े उत्पात ॥
अन्ध बहर को क्यों समझावे। बिन विवेक कुछ हाथ न आवे ॥
गुरु पशु सार भेद नहीं पावे। विद्या पशु बातों अटकावे ॥
ज्ञान पशु समझे नहीं ज्ञान। मान पशु तप अटका अभिमान ॥
योग पशु सिद्धि में जकड़ा। तप पशु तप धूनी का लकड़ा ॥
भक्ति पशु सूझे न विवेक। वह नहीं लखे अनेक न एक ॥

सार भेद किसको समझाऊँ । झगड़ा मेट मौन बन जाऊँ ॥
राधास्वामी गुरु ने तत्व लखाया । उनकी दया हमहुँ कुछ पाया ॥

(७३-५०३)

नाम भेद है सबका सार । नाम दुख से दे छुटकार ॥
नाम बसे त्रिलोकी पार । तू ढूँढे जिभ्या रस द्वार ॥
नाम ओम् है नाम है सोहंग । नामहि सारंग नामहि ररंग ॥
नाम सत्त है सत्त की धुन । नाम की धुन ऊँचे चढ़ सुन ॥
पंच नाम का लेकर भेद । जप निज नाम मिटे जग खेद ॥
बिन गुरु नाम हाथ नहीं आवे । गुरु मिले तब नाम बतावे ॥
नाम श्रवन कर नाम मनन । नाम धार तब निध्यासन ॥
साक्षात जब नाम करेगा । तब नहिं जग के शोक मरेगा ॥
राधास्वामी सन्त स्वरूप । नाम दान मेटा भव कूप ॥

(७४-५०४)

अपने आपका धारो प्रेम । तब समझोगे प्रेम के नेम ॥
अपनी समझ आप जब आवे । तब परमारथ गुरु लखावे ॥
अपना भला आप तुम करो । औरन के पीछे न मरो ॥
अपनी आंख खुले जब भाई । तब ही गगन प्रकाश दिखाई ॥
अपनी मौत स्वर्ग का दर्शन । बाकी सब मिथ्या है भाषन ॥
आप जिये तब ही जग जिया । आप मरे पीछे क्या रहा ॥
आप आपको आप सँवारो । अपनी बिगड़ी आप सुधारो ॥
तब गुरु पूरे होंय सहाई । बनत बनत तेरी बन आई ॥
जो नहीं समझेगा यह बानी । सो तो मूढ़ गूढ़ अज्ञानी ॥
राधास्वामी दीन दयाल । सार सुझाकर किया निहाल ॥

दोहा　बिना ओम् बानी सुने, ज्ञान न पाओ मीत ।
　　ऋषि मुनि या को कहें, घट का निज उद्गीत ॥

ओम् पाय सुरत हरखाई। ब्रह्म रेन्द्र की चोटी धाई ॥
लखा अविद्या का तहां रूप। प्रगटा काल जगत का भूप ॥
गुरु के नाम तिमिर सब नासा। चन्द्र जोत का भया उजासा ॥
सुन्न महासुन्न लखा पसारा। मान सरोवर आसन मारा ॥
ज्ञान ध्यान असनान कराई। सुरत हंस गति पा हरखाई ॥

दोहा हंस ब्रह्म छबि अद्भुति, शोभा अमल अपार।
लख लख अलख महान गति, सूझा अमल अपार ॥

आपा बिसरा जगत भुलाना। मिटा काम मद भया अमाना ॥
यकटक रूप दृष्टि जब आया। तेज पुंज प्रकाश सुहाया ॥
बानी चार गुप्त धुन जागी। सुरत प्रेम भक्ति रस पागी ॥
सरंग सारंग सरंग सारंग। मंत्र एकाक्षर शिव मन धारंग ॥
सुनत सुनत मन भया बिस्माध। सुन्न महासुन्न लगी समाध ॥

दोहा देह गेह की सुध गई, हंस की आई चाल।
दशा सुहानी पाय कर, सूरत भई निहाल ॥

कुछ दिन सुन्न समाध रचानी। मिला ज्ञान तब हुई विज्ञानी ॥
आगे को फिर किया पयाना। भँवर गुफा की ओर ठिकाना ॥
छाया माया माया छाया। अपना निज आकार दिखाया ॥
झांईं में निरखी परछाईं। सोई परे का ब्रह्म गोसाईं ॥
परछाईं की जोति अनूपम। लख लख चन्द्र सूर से उत्तम ॥

दोहा मुरली बाजी गुफा में, सोहंग सोहंग धुन।
बिस्माधि बिसमत सुरत, अभय भई तेहि संग ॥

खिड़की निरख चली आगे को। पांव न धरे भूल पाछे को ॥
प्रगटा तब सत का मैदाना। बीन मधुर धुन आई काना ॥
सत्त पुरुष का दर्शन पाया। कोटिन सूरज चन्द्र लजाया ॥
जगमग जगमग जगमग होई। दरस परस पावे नर कोई ॥
बड़भागी जो यह पद भाये। आवागमन सकल विधि नाये ॥

दोहा　सतपद निरख परख कर, गई अलख के द्वार।
अगम अनाम के पार चढ़, राधास्वामी दरबार॥

(७५-५०५)

रूप अरूप सरूप नहीं तू। नहीं परजा और भूप नहीं तू॥
ब्रह्म न माया ब्रह्म पसारा। त्रिलोकी की हद से पारा॥
परब्रह्म पद से भी परे। सत्त असत्त दोनों के वरे॥
नूर कलाम न धूप न छाईं। कैसे तुझको लखूँ गोसाईं॥

॥ रमेनी ॥

(७६-५०६)

बन्धन देह गेह भी बन्धन। बन्धन द्वेष नेह भी बन्धन॥
सुयश कर्म बन्धन ही बन्धन। कुजश मर्म बन्धन ही बन्धन॥
सुत पितु मात त्रिया सम्बन्धी। समझो इन सबको बन्धन भी॥
काम बन्ध बन्धन है धर्म। अर्थ बन्ध बन्धन है मर्म॥
विद्या ज्ञान दान सब बन्धन। जान पिछान मान सब बन्धन॥
बन्धन दुख क्लेश की खानी। बन्धन तोड़े कोई कोई प्रानी॥
बन्ध न कटे मुक्ति क्यों पावे। बिन मुक्ति सुख चैन न आवे॥

(साखी)

(७७-५०७)

साध मिले जग के टले, आपत बिपत क्लेस।
धन साधु का भाव है, धन साधु का भेस॥१॥
दुख तो अपने सिर सहें, सेवक को सुख दें।
ऐसी दया के बदल में, साधु कुछ नहीं लें॥२॥
धन साधु का रूप है, धन साधु का ढंग।
साईं हमको दे सदा, साधु जन का संग॥३॥

साध कपास समान हैं, सहें कोटि तन पीर ।
औरन के अवगुन ढकें, ऐसे धीर गम्भीर ॥४॥
आप जलें दुख अग्नि में, जलते को दें नीर ।
साधु की महिमा बड़ी, साधु सम नहीं बीर ॥५॥
पर स्वारथ के काम में, साधु करें न देर ।
साध को अपने द्वार से, खाली हाथ न फेर ॥६॥
ब्रह्मा विष्णु महेश सुर, सारद शेष गनेश ।
महिमा जानें साध की, बरनत बने न लेस ॥७॥
साधु का दर्शन किया, अन्तर व्यापे राम ।
नन्द साधु पांव की, जूती मेरा चाम ॥८॥
साधू का दर्शन लहूं, साध का निसदिन संग ।
आँसू प्रेम के नीर से, चरन पखारूँ अंग ॥९॥
साध बड़े परमारथी, तर वर सरवर रूप ।
दया मेहर उपकार धन, महिमा अगम अनूप ॥१०॥
ऋद्धि सिद्धि दे नहीं, दर्शन साध का दे ।
साध दरस की लालसा, और सकल ले ले ॥११॥
निर बन्धन होय बन्ध रहे, दुखी जीव के काज ।
साधु महिमा गावते, नन्द आवे लाज ॥१२॥
क्या मुख ले अस्तुति करूँ, साधु अगम अपार ।
नन्द साधु दरसते, जा भव सागर पार ॥१३॥
नहीं सीतल है चन्द्रमा, नहीं रवि में प्रकाश ।
नन्द साध स्वरूप का, सीतल महा उजास ॥१४॥
नन्द सेवक साध का, स्वामी मेरे साध ।
सेवक स्वामी संग मिला, कटा कोटि अपराध ॥१५॥
साध गुरु के रूप हैं, सत स्वरूप सत धाम ।
नन्द साध के दरस से, मुख आवे सतनाम ॥१६॥

साहेब साहेब क्या करूँ, साहेब मेरे साध ।
साहेब को ढूँ ढूँ कहां, साध से मिटे उपाध ॥१७॥
अलख पुरुष की आरसी, साधु जिनका रूप ।
नन्दू लख ले अलख को, अलख में साध अनूप ॥१८॥

रमेनी

[७८-५०८]

नहीं ब्रह्मा नहीं विष्णु महेश । नहीं नारद सारद नहीं शेष ॥
नहीं गोलोक नहीं साकेत । नहीं किसी से राग न हेत ॥
तीरथ बरत कर्म नहीं धर्म । संजय नेम न यम नहीं मर्म ॥
कुशल चेम ऐको कछु नाहीं । यह सब काल बली की छाईं ॥
माया कर्म काल नहीं सोई । बिरला यह गति जाने कोई ॥

साखी राधास्वामी ने कही, खोल मर्म विस्तार ।
कोई सतसंगी सुने, सार का करे विचार ॥

(७९-५०९)

राधास्वामी अगुन सगुन राधास्वामी ।
राधास्वामी शब्द है धुन राधास्वामी ॥
राधास्वामी आदि अन्त राधास्वामी ।
राधास्वामी साध सन्त राधास्वामी ॥
साध आदि के सहित रहाया ।
सन्त अन्त के मध्य समाया ॥
राधास्वामी किरन सूर राधास्वामी ।
राधास्वामी निकट दूर राधास्वामी ॥
राधास्वामी सब हैं सब राधास्वामी ।
राधास्वामी अब हैं तब राधास्वामी ॥

साखी—राधास्वामी की दया, पाया भेद अभेद ।
राधास्वामी गुरु मिले, मिटा भर्म भव खेद ॥

(८०-५१०)

जब नहीं नाम अनाम सनामी । तब मे सत्तपुरुष राधास्वामी ॥
वेद न ब्रह्मा काल न माया । शब्द न सुरत न धूप न छाया ॥
रूप रंग रेखा नहीं होई । राधास्वामी नाम न कोई ॥
आप आप में आप बिराजा । सृष्टि प्रलय का दल नहीं साजा ॥
पुहुप मध्य ज्यों बास सुवासा । उनमनि रूप अगोचर भासा ॥
मौज हुई धारा बह निकली । अगम अलख सतपद आ ठहरी ॥
प्रगटा काल कला बन आई । भँवर गुफा माया रही छाई ॥
माया बंसी तपा पुनि काल । तप कर सोहंग सोहंग चाल ॥
बंसी बजी फूँक ज्यों बानी । पवन धूम अग्नि खम पानी ॥
नहीं तत्व पर तत्व का बीजा । भाप रूप ज्यों रहे पसीजा ॥
धार फुटी नीचे चल आई । जड़ अचेत की भांति रहाई ॥
सोई सुन्न महासुन्न कहावे । रारंग सारंग बानी गावे ॥
धारा फुटी त्रिकुटी में आई । सूक्ष्म तत्व गुन तीन रचाई ॥
संपुट मार आप में आपा । अ उ म त्रिलोकी नापा ॥
सो पुन दशा ब्रह्मांडी मन । ओंकार का प्रगटा तन ॥
फिर सोई सहसकँवलदल उतरा । काली कला जोत छबि सुथरा ॥

साखी यह विराट का देह है, महानन शत सीस-।
प्रगटे पाँचों तत्व यहाँ, और प्रगटी पचीस ॥

(८१-५११)

कंठ करे आकास निवास । हृदय पवन धारे निज भास ॥
नाभी अग्नि इन्द्री जल ठहरा । गुदा पृथ्वी का मंडल पहरा ॥
दुरगा कंठ हृदय शिव धामा । नाभी विष्णु पाया बिस्रामा ॥
इन्द्री ब्रह्मा रचे शरीरा । गुदा गनेश बसे मति धीरा ॥
पंच देव सो विराट रहावें । पंच तत्व तन माँह समावे ॥
यह रचना का भेद सुनाया । जैसा ब्रह्म जीव तस गाया ॥

ब्रह्म तीन गुन तीन ही नाम । जीवहु करे ब्रह्म के काम ॥
वह विराट अव्याकृत भाई । वही हिरण्यगर्भ कहलाई ॥
जाग्रत धरे विराट को भेस । स्वप्न में अव्याकृत का देस ॥
सुखपति हिरण्यगर्भ सोई भया । नहीं तामे कछु मोह और मया ॥
जीव के तीन नाम अब जानो । ब्रह्म जीव का भेद पिछानो ॥
जाग्रत विश्व स्वप्न में तेजस । सुख पति सोई प्राग्य नाम तस ॥
जीव ब्रह्म दोउ एक समान । यह वेदान्त का निश्चय ज्ञान ॥
यहां लग गम वेदान्त की भाई । आगे की कुछ खबर न पाई ॥
शौच लछना भाग और त्याग । वह नित गावे ज्ञान का राग ॥

दोहा नेति नेति पुन कह सदा, चेतन रहा समाय ।
जीव ब्रह्म का भेद तज, चेतन भाग बताय ॥

(८२-५१२)

राधास्वामी भेद बताया । बिरला जीव की समझ में आया ॥
पढ़ पढ़ ग्रन्थ ग्रन्थि भई गाढ़ी । मति दुर्मति सुमति अति बाढ़ी ॥
अहं ब्रह्म तत्वमसि भाखा । अहं प्रज्ञानं धर साखा ॥
अयं आतमा ब्रह्म कहाना । चार वाक महावाक्य प्रमाना ॥
संतन की बातें नहीं जानी । बिन जाने सब भये अभिमानी ॥
जड़ चेतन में गये भुलाई । वह उपेक्षा बानी भाई ॥
नहीं वह जड़ नहीं चेतन नामा । जड़ चेतन है द्वैत सकामा ॥
नहीं यह पद अद्वैत द्वैत यह । द्वैत भाव ले दुख सुख को सह ॥
कोई ब्रह्म जाय करे निवास । कोई सुमेर गिरवर कैलास ॥
कोई समाने तत्व मंझार । कोई तत्व का लखा न सार ॥
नन्द करो सन्त का संग । तब कुछ लखो सार का ढंग ॥
बिन सतसंग विवेक न जागे । बिन विवेक अनुभव नहीं पागे ॥
बिन अनुभव पद की गम नाहीं । यह सब भरम जोनि भरमाहीं ॥
शालिगराम ने अनुभव भाखा । अनुभव गति सर्वोपरि राखा ॥

दया दृष्टि से मोहि बताई। सो सब आज तोहि समझाई ॥
मुक्ति पदारथ सतसंग है। संगत करे सो तिसको है ॥

दोहा आदि अन्त उत्पति कथा, आज सुनाया तोहि।
जो सुनकर चिन्तन करे, मिटे भरम और मोह ॥

(८३-५१३)

पृथ्वी मंडल सुरत से त्यागो। मन को उलट गगन को भागो ॥
बाहर के पट बंद कराओ। अन्तर से तिलपट खुलवाओ ॥
सहसकमलदल देखो जोत। घंटा शंख सुनो धुन सोत ॥
अनहद बानी सुन सुन रीझो। अमी धार के रस में भीजो ॥
चित को साधो ध्यान जमाओ। सुमिरन भजन साथ लौ लाओ ॥

दोहा तीन बन्द लगाय कर, आंख कान मुख मूँद।
शब्दके सिंध नहाय सुरत, सुरत शब्द की बूँद ॥

(८४-५१४)

फिर त्रिकुटी में गुरु का दरस। चरन कमल मानसिक हो परस ॥
ओंकार मृदंग का साज। धुन जहां ओम् शब्द रही गाज ॥
वेद ज्ञान का यह अस्थान। बीज मंत्र का मिले निशान ॥
पाय निशान सुरत मन जागे। भक्ति प्रेम के रस में पागे ॥
स्वामी सेवक यक मत होय। मनकी दुबधा जावे खोय ॥

दोहा तीन बंद मध्य में लगे, प्रगटा गुरु का नाम।
शब्द अनुमान प्रमान को, अन्तर देखा आन ॥

[८५-५१५]

चित चकोर की दशा बताई। सुन्न महासुन्न तारी लाई ॥
हंस हंस की गति लख पाई। तिमिर त्याग प्रकाश को धाई ॥
उज्जल चन्द्र प्रकासा अन्तर। देह गेह सुध भूली दुस्तर ॥
सुन्न समाध की अकथ कहानी। समझत बने न जावे बखानी ॥
रारंग सारंग शब्द सुहाना। गढ़ सुमेर में गाड़ा थाना ॥

दोहा तीन बंद प्रताप से, बन्धन गया हराय।
चिंता दुबिधा मिट गई, मुक्ति पदारथ पाय॥

(८६-५१६)

सुन्न समाध का भया उथान। चली सुरत सोहंग अस्थान॥
बन्सी सोहंग भँवर में बाजी। सूर प्रकाश देख भई राजी॥
यहां से सहज समाध की बारी। जीवन मुक्त की दशा सँवारी॥
हँस चुने मोती मुक्ता मन। अपना भाग सराहे धन धन॥
मस्ती छाई उमगा प्रेम। जग व्यवहार का तोड़ा नेम॥
दोहा तीन बन्द के तीन गुन, सुमिरन ध्यान भजन।
भँवर गुफा प्रगटे सभी, हरख उठा तन मन॥

(८७-५१७)

फिर आगे की करी तैयारी। चली झूम सुरत मतवारी॥
सत्त लोक का पाया नाका। कोटिन चन्द्र सूर छबि ताका॥
सत्त सत्त बीना धुन सुनी। सुन सुन धुन अन्तर में गुनी॥
पांच नाम के पांच अस्थान। पाचों लख लख लख हरखान॥
जीवन मुक्ति दशा भई गाढ़ी। मुक्ति अवस्था की गति बाढ़ी॥
दोहा तीन बन्द लगाय कर, आगे को पद दीन।
अलख अगम के पार चल, राधास्वामी पद लौ लीन॥

(८८-५१८)

यहां न बन्धन का भय कोई। मुक्ति आस लय चिंतन होई॥
नहीं यहां काम न धर्म कहानी। नहीं यहाँ अर्थ न मुक्ति निशानी॥
यह निज धाम सन्त का ऊँचा। बिरला सन्त यहां कोई पहुँचा॥
रूप रंग रेखा से न्यारा। त्रिलोकी के रहे सो पारा॥
सोई अपना रूप कहावे। अधिकारी लख ताहिं सुनावे॥
दोहा तीन बंद सब छुट गये, पाया पद निर्बान।
राधास्वामी की दया, मिल गया ठौर ठिकान॥

(८९-५१९)

दोहा जो कोई चाहे नित्य सुख, करे गुरु का संग।
गुरु संगत से पाइये, गुरु विवेक गुरु रंग॥
गुरु बिन भक्ति न ज्ञान कुछ, गुरु कीजे कोई सन्त।
परमारथ की आवे समझ, जब गुरु निकट बसन्त॥

॥ चौपाई ॥

परमारथ का उभरे रंग। कर गुरु पूरे का सतसंग॥
गुरु को खोज संग चित लाय। सो परमारथ युक्ति कमाय॥
बिन गुरु भक्ति न ज्ञान न कर्म। बिन गुरु मिले न तत्व का मर्म॥
गुरु मत हो मन मता को त्यागे। ममता अहंकार सों भागे॥
गुरु संगत पावे सत ज्ञान। काठ की नौका तिरे पखान॥
दोहा गुरु की श्रद्धा मन बसी, उपजा दृढ़ अनुराग।
यही राग का त्याग है, यही विवेक विराग॥

[९०-५२०]

जो नहीं गुरु चरन से प्यार। मिथ्या है सब सोच विचार॥
प्रेम प्रीत उपजे दृढ़घट में। सो सिष पड़े न जग खट पट में॥
वृत्ती यकटक लगे अखंड। सूझे अंड पिंड ब्रह्मंड॥
दरस परस सेवा सत्कार। करे सदा निज मति अनुसार॥
भाव सुभाव प्रभाव भलाई। उमड़े प्रेम चित्त रहे छाई॥
दोहा जब घट आवे यह दशा, जाग उठे अधिकार।
बचन सुने सतसंग में, सेवक सहित विचार॥

(९१-५२१)

सोचे समझे अपने मन। छांट धरे हिये गुरु बचन॥
शब्द का करे सदा अहार। त्यागे मिथ्या भर्म विकार॥
जो नहीं बात समझ में आवे। प्रश्न करे दुर्मति नसावे॥

दुविधा भ्रान्ति मिटे जब सारी । शब्द योग साधे अधिकारी ॥
सीखे रीत करे फिर जतन । उलटे तिल लौटावे मन ।
दोहा सुमिरन ध्यान भजन विधि, जान मान सुविवेक ।
आसन मार एकान्त में, धारे गुरु की टेक ॥

(९२-५२२)

तीसरा तिल चित वृत्ती निरोध । इसी योग से हो प्रबोध ॥
जब यह दशा लखे शिष अंतर । सहसकमलदल साधे मंतर ॥
यह कसरत विराट का थाना । नाका ब्रह्म अंड का जाना ॥
श्याम कंज में सूरत धरे । जोत लखे धुन श्रवन करे ॥
घंटा शंख मधुर धुन बानी । प्रगटे जोत प्रकाश निशानी ॥
दोहा सुन अनहद और जोति लख, सुरत निरत हरषाय ।
बाढ़े प्रेम मगन मन, हिया जिया अति उमगाय ॥

(९३-५२३)

कुछ दिन सहसकमलदल बासा । फिर दूजी मंजिल की आसा ॥
बंकनाल चढ़ त्रिकुटी धावे । ओंकार का दर्शन पावे ॥
ओंकार सतगुरु प्रसाद । धारे चित विरती को साध ॥
यह गुरु का अस्थान सुहेला । अन्तर सतसंग वचन का मेला ॥
सूरज लाल लाल रंग बाना । ओम् मृदंग धुन आवे काना ॥
दोहा एकटक नैन जमावई, एकचित सुन धुन बैन ।
देह दशा स्थिर करे, तब आगे की सैन ॥

(९४-५२४)

त्रिकुटी साधन साध कमावे । साधु सोई जो यह पद पावे ॥
यह उपासना अन्तर भाई । यहां से गुरुमति चाल चलाई ॥
सुन्न मंडल की ओर सिधाये । द्वैत सहज आसन मन भाये ॥
शीतल चन्द्र अमीरस पागा । जो लख पावे परम सुभागा ॥
किंगरी सारंगी धुन की धूम । सुन सूरत रही भीतर झूम ॥

दोहा सुरत निरत का रूप धर, नाच रहे सुन्न धाम ।
निरख परख अपनी दशा, पावे स्थिर विश्राम ॥

(९५-५२५)

अंधकार जहां घोर व्यापा । सुरत निरत नहीं चीन्हे आपा ॥
सुन्न समाध की लाई तारी । महासुन्न सोई अकथ अपारी ॥
ब्रह्मरेन्द्र का सिखर सुहाना । नाम प्रताप सुरत लख जाना ॥
जगमग सूर्य स्वेत रंग चमका । प्रगटी सारंगी धुन हरखा ॥
मानसरोवर कर अस्नान । हंस सुगति मति सुबुधि सुजान ॥

दोहा कलिमल अवगुन धोयकर, निर्मल विमल अनूप ॥
छीर नीर को छानकर, धरा हंसन का रूप ॥

(९६-५२६)

कुछ दिन सुन्न समाध रचाई । पद अद्वैत पाय हरषाई ॥
देह गेह की सुधि बिसरानी । कहत लजाय सुसमझ सुवानी ॥
नहीं वहां सांझ न भोर प्रभाव । नहीं वहां दाव कुदाव सुदाव ॥
नहीं वहां निरख न परख विवेक । व्यापा एक एक ही एक ॥
मस्ती आय जमाई रंग । झूम रही अब सुरत अभंग ॥

दोहा सुन्न महासुन्न आनंद लहा, कुछ दिन कर अभ्यास ।
जीत लिया पद सुन्न जब, प्रगटा बिमल बिलास ॥

(९७-५२७)

दृढ़ता आई उमगा मन । चौथी मंजिल किया जतन ॥
भँवरगुफा का नाका तोड़ा । सोहंग पद से नाता जोड़ा ॥
बंसी बजी मधुर मृदु बानी । सुन सुन सुरत निरत मुसकानी ॥
सोहंग सोहंग धुन सुन पाई । स्वेत सूर सोहंग चित लाई ॥
जगमग जोत न जाय बखानी । लख लख सूर रोम एक जानी ॥

दोहा महाकाल का धाम यह, ऊँच सिखर ब्रह्मन्ड ।
खिड़की लखे जो गुफा की, पावे हर्ष अखंड ॥

(६८-५२८)

आगे चली सुरत मतवारी । सत्त धाम की ओर सिधारी ॥
पद अनूप अव्यक्त अपारा । अवगति गति को वरने पारा ॥
हंस बंस और अंस सुहाने । देखे सुरत स्वरूप सुवाने ॥
अधिष्ठान आधार महाना । पुहुप बास सम ताहि पिछाना ॥
पुहुप आधार बास ठहरानी । माया आदि जान तेहि ज्ञानी ॥

दोहा सत्त धाम कूटस्थ धुर, रचना का आधार ।
यही सार का सार है, द्वैत अद्वैत के पार ॥

॥ साखी ॥

[६अ-५२६]

मैं मैं करते दिन गया, मैं से लगी लगन ।
मैं तजने का नंदुवा, कर कुछ जोग जतन ॥१॥
अकड़ा अकड़ा क्या फिरे, अकड़ को देदे आग ।
मैं छूटे तेरी अभी, गुरु चरनन से लाग ॥२॥
द्वेष ईर्षा डाह की, मन में भड़की आग ।
नर जीवन पाये अभी, पीठ फेर कर भाग ॥३॥
पढ़ा लिखा सोचा बहुत, पाया नहीं गुरु ज्ञान ।
औरन के समझावते, खोया आप निदान ॥४॥
गुरु परिचय ले नन्दुवा, बिन परिचय क्यों बात ।
परिचय से अनुभव मिले, अनुभव आतम जात ॥५॥
कर्म करे कर्ता नहीं, सोई दास सुजान ।
कर्ता बनकर कर्म विधि, नन्दू कर्म न जान ॥६॥
करता हूं कर्ता नहीं, कर्म करूँ दिन रात ।
कैसे बने उपाध फिर, इस जग की उत्पात ॥७॥

नन्द सुख गुरु चरन में, सुख सतगुरु के ध्यान।
सुख है सुमिरन भजन में, कोई कोई बिरला जान॥८॥
जग के दुख से भागकर, आया गुरु दरबार।
अब दुख का मेरे यहाँ, नहीं कार व्यौहार॥८॥
नन्द करनी सबल है, निरबल वाचक ज्ञान।
कथनी तज करनी करो, अनुभव गति परमान॥१०
नन्द कथनी हम तजी, करनी से लव लाय।
गुरु की दया अपार से, अनुभव गम गति पाय॥११॥
पोथी अटके पाठी समझो, ग्रन्थ में अटका ग्रन्थी।
तुस्तक वाला पुस्तक झाड़े, बिरथा नीर मथन्ती॥१२॥
कोटिन ग्रन्थन बांच के, खुले न हिय के नैन।
नन्द करनी मन लगा, सुन गुरु का एक बैन॥१३॥
सौ बातों की एक बात, नन्द सोच विचार।
सतगुरु सत्तनाम सत, करनी सतसंग में सार॥१४॥
अच्छे अपनी जगह पर, मन बुधि चित अहंकार।
नन्द यह नहीं रूप हैं, करनी सहित विचार॥१५॥
आप आप को जान ले, आप आप को मान।
आप आप पहिचान ले, करनी संग जो ज्ञान॥१६॥
अपना बैरी आप तू, जो कथनी का भर्म।
अपना मीत है आप तू, लख करनी का मर्म॥१७॥
जो करनी गुरु प्रेम दे, सो करनी है मुख्य।
ऐसी करनी जो करे, लोक परलोक में सुख॥१८॥
नन्द गुरु प्रताप से, समझ में आई बात।
जब करनी में चित लगा, छूट गया उत्पात॥१८॥
सत करनी चित ज्ञान है, उप आसन आनन्द।
मन देहि सुरत माँज ले, कटे मोह का फन्द॥२०॥

पहिले करनी करम गति, पीछे अनुभव ज्ञान।
ता पाछे आनन्द है, नन्दू सुन धर ध्यान ॥२१॥
बिना कर्म नहीं ज्ञान कुछ, बिना ज्ञान नहीं सुख।
नन्दू सांची बात यह, समझे कोई गुरुमुख ॥२२॥

(१००-५३०)

नर शरीर को पायकर, कर नर का व्यवहार।
समता चित में धार ले, सत पथ में पग धार ॥१॥
जो तू फूल गुलाब का, हँसमुखता धर चित।
रंग बास दे जगत को, पर उपकार के हित ॥२॥
जो तू वृक्ष समान है, सहकर धूप और मेह।
पंछी को छाया सघन, फूल पात फल देह ॥३॥
जो तू गंग तरंग है, धो औरों का मैल।
शीतलता का दान दे, चलें जो तेरी गैल ॥४॥
जो तू हंस स्वरूप है, क्षीर नीर बिलगाय।
त्याग नीर गह क्षीर को, हंस का यही स्वभाय ॥५॥
जो तू कमल का फूल है, रह जल जल उतराय।
धन सम्पत कुल पायकर, मत मन में इतराय ॥६॥
जो तू गुरु का भक्त है, भक्ति में चित राख।
ध्यान और का त्यागकर, गह गुरुभक्ति की साख ॥७॥
सन्त पन्थ में आयकर, पाल प्रेम की रीत।
नदी नाव संजोग लख, सबके संग कर प्रीत ॥८॥
जो तू सीप तो स्वांति का, ज्ञान बून्द गह ले।
मोती झलके हृदय में, शोभा सागर दे ॥९॥
मलियागिरि चंदन बना, बास बास से बास।
काटे आय कुल्हाड़ जो, मुख कर बास सुबास ॥१०॥

राधास्वामी आदि गुरु, आय चिताया तोह।
उनकी समझ चेतावनी, त्याग मान मद मोह ॥११॥

(१०१-५३१)

गुरु सम दाता कोई नहीं, देखा जगत मँझार।
दीन हीन आधीन के, गुरु सच्चे रखवार ॥१॥
गुरु मिले सब मिट गये, मोह भरम जंजाल।
अब चिंता भय कुछ नहीं, जब गुरु हुये दयाल ॥२॥
भक्ति दान गुरु ने दिया, भक्तिदान धन खान।
भक्ति से सब कुछ मिला, सत चित आनंद मान ॥३॥
दुर्लभ भक्ति का रतन है, गुरु बिन प्राप्त न होय।
बिन गुरु ध्यान न ज्ञान कुछ, बिन गुरु मुक्ति न होय ॥४॥
मनमत से ममता बढ़े, घट आवे हंकार।
गुरुमत से ममता घटे, नासे मूल विकार ॥५॥
गुरु मिले शीतल भया, शान्ती आई धाय।
भ्रान्ती दुविधा मिट गई, जब गुरु हुये सहाय ॥६॥
राधास्वामी गुरु मिले, सतसंग बचन सुनाय।
अब कोई चिंता नहीं, मुक्ति का मिले उपाय ॥७॥
आस करो गुरु देव की, ले गुरु देव का नाम।
गुरु आसा पूरन करें, चित को दें विश्राम ॥८॥
चलो पंथ में रात दिन, गुरु आज्ञा सिर धार।
गुरु समरथ की कृपा से, एक दिन बेड़ा पार ॥९॥
मांगो तुमको मिलेगा, पूछ के उत्तर लो।
ठोको और पट खुलेगा, राधा स्वामी भजो ॥१०॥

(१०२-५३२)

मैं साधु के संग हूं, साधु मेरे हैं रूप।
मुझमें साधु में भेद नहीं, कोई न प्रजा भूप ॥१॥

साधहि मेरे रूप है, मैं साधु का दास।
साध सेव की लालसा, मेरे मन की आस ॥२॥
जो कोई सेवे साध को, मेरा सेवक सोय।
साध सेव जो ना बने, सोहि आवत है रोय ॥३॥
साधु मेरे आत्मा, मैं साधु के साथ।
तन मन धन से सेव करूँ, चरन लगाकर माथ ॥४॥
साधु रूप भगवंत का, दर्शन आवे ध्यान।
भगवत की प्रसन्नता, साधु का सन्मान ॥५॥
मैं नहीं भूखा द्रव्य का, नाम रतन धन पाय।
जो कोई अरपे कुछ मुझे, साधु के हेत चढ़ाय ॥६॥
राधास्वामी की दया, मन में भया विवेक।
मनसा वाचा कर्मणा, साधु साहिब एक ॥७॥

[१०३-५३३]

चित चकोर चन्दा लखे, मैं लखूँ सतगुरु देव।
प्रेम प्रीत परतीत से, करूँ चरन की सेव ॥१॥
मैं न बिसारूँ नाम को, नाम न भूले मोह।
नाम बसा जब हिये में, भूला काम और कोह ॥२॥
सुमिरन भजन और ध्यान में, चित को राखो साध।
गुरु कृपा से सहज में, मन के मिटें उपाध ॥३॥
आंख कान मुख मूँदकर, करो शब्द अभ्यास।
राधास्वामी की दया, चित्त न होय उदास ॥४॥
प्रीत प्रतीत की चाल चल, राखो गुरु का ध्यान।
राधास्वामी की दया, सब प्रकार कल्यान ॥५॥
हाथ लगा रहे काम में, मन में गुरु का ध्यान।
इस विधि जग में जतन कर, त्याग मोह मद मान ॥६॥

सुमिरन भजन और ध्यान में, चित को लो ठहराय।
राधास्वामी की दया, भव का दुख मिट जाय ॥७॥
सांसों सांसों जात है, समय तुम्हारा खोय।
सांस सांस गुरु नाम लो, जन्म सुफल सब होय ॥८॥
भजन करो आलस तजो, चित में रहे गुरु नाम।
एक दिन गुरु की दया से, पूरन जग का काम ॥९॥
नाम भजो सुमिरन करो, गुरु पद का चित ध्यान।
शब्द योग साधन किये, काल करे नहीं हान ॥१०॥

॥ चौपाई ॥

(१०४-५३४)

पहिले भू लोक चित लाओ। भूः लोक में फिर चढ़ आओ ॥
देखो अचरज विमल तमासा। जड़ चेतन का ज्ञान प्रकासा ॥
धरे प्रकृती अचरज रूप। कोई भिकारी रंक कोई भूप ॥
चेतन अंश ने खेल खिलाया। जड़ को जैसा चाहा बनाया ॥
भुः लोक है मानुष पिंडा। प्रकृती का खेल अखंडा ॥
देह तजो देखो चित रूप। रूप देख तुम हो जाओ भूप ॥
भुवः लोक है चेतन धाम। ज्येष्टि चित रखा उसका नाम ॥

(१०५-५३५)

फिर चलने की करो तैयारी। देखो ईश्वर आनंदकारी ॥
चढ़ चढ़ आओ स्वः लोक तुम। ओम् जपो तजो मोह शोक तुम ॥
पुरुष प्रकृति विराट स्वरूपम्। अद्‌भुत लीला अमित अनूपम ॥
आनंद मिल आनंद हो जाओ। छिन छिन ईश्वर के गुन गाओ ॥
लाख हाथ और लाखों कान। कैसे कोई करे बखान ॥
वह सत है वह चित आनन्द। उसी की कृपा से छूटे द्वन्द ॥
पुरुष प्रकृती की वह जान। इस पद में लखो उसका ज्ञान ॥

जोति निरंजन सन्त बताया। ईश्वर का यह रूप लखाया॥
तुम चेतन व्येष्टि रूप। चेतन ईश समष्टि स्वरूप॥
जड़ चेतन मिल बना है जीव। माया चेतन ईश्वर पीव॥
जीव ईश का भेद बताया। गुप्त न राखा खुलकर गाया॥

[१०६-५३६]

सुरत चढ़ी ब्रह्मांड मंझार। महत तत्व का खोला द्वार॥
अंडा रूप ताहि मन माना। हिरण्यगर्भ का रूप पिछाना॥
यह ब्रह्मांड महत की छाया। ओम् महः ताहि वेद बताया॥
सुन्दर रूप बरनि नहीं जाई। महा ऋषि मुनि सुर नर गाई॥
चित एकाग्र से उसको देखा। तब साधु किया हमने लेखा॥

(१०७-५३७)

पंचम दर पंचम अस्थाना। ओम् जनः जन लोक ठिकाना॥
अव्याकृत नाम सुन लीजे। तब उसके गुन को चित दीजे॥
सुरत चली जन लोक में आई। बड़ी बनी जन पदवी पाई॥
जो कोई इस मंडल तक आवे। श्रेष्ठ बने जन जनक कहावे॥
सब में उत्तम सब में ऊँचा। धन्य भाग जो यहां तक पहुँचा॥
उत्तम मिल उत्तम पद पाया। उत्तम मिल उत्तम बन आया॥
यहां तक रूप रंग अरु रेखा। अब आगे का करो परेखा॥

[१०८-५३८]

छटवां तपः लोक है भाई। तप बल की जहां प्रभुताई॥
ओम् तपः धरा उसका नाम। हंस गति का वह निज ठाम॥
हंस बने तब किया निबेड़ा। नीर क्षीर का मिटा बखेड़ा॥
छोड़ा नीर क्षीर लिया मन में। हर्ष शोक नहीं व्यापे सुपने॥
तप करतब बल अधिक बढ़ाया। संस्कार सब तप से मिटाया॥
भस्म किया शुभ अशुभ कर्म सब। मिटे यहां अज्ञान भर्म सब॥
परमहंस हुई सुरत प्यारी। सत्त धाम की भई अधिकारी॥

(१०६-५३६)

चल सजनी अब सतगुरु धाम । सन्त कहें जाहि सतपद ठाम ॥
सत्त लोक की खाड़ी आई । सतपद में जाय सुरत समाई ॥
रूप रंग रेखा तज डार । भवसागर के हो जा पार ॥
जो कोई सतपद आय समाये । रूप रंग रेखा मिट जाये ॥
सन्तन का यह सतपद धाम । सत्त कबीर कहें सतनाम ॥
नानक पीर ने यह समझाया । तुलसी साहेब निजकर गाया ॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी । विद्या गुप्त बताई सारी ॥
राधास्वामी राधास्वामी छिन छिन गाऊँ ।
राधास्वामी पर मैं बल बल जाऊँ ॥
राधास्वामी चरन शरन अब पाई ।
राधास्वामी गूढ़ तत्व समझाई ॥
राधास्वामी दृष्टि खोल जब दीन्हा ।
तब ही गूढ़ तत्व हम चीन्हा ॥
राधास्वामी राधास्वामी राधास्वामी ।
राधास्वामी राधास्वामी राधास्वामी ॥
राधास्वामी दीन बन्धु सुख दाता ।
राधास्वामी गुरु समरथ पितु माता ॥

॥ सोरठा ॥

[११०-५४०]

सत चित आनन्द रूप, बुद्धि से जानिये ।
तीनों का ले भेद, परम सुख मानिये ॥१॥
बुद्धि ज्ञान प्रकासिया, तब जन होय जाई ।
लहे बुद्धि निधि ज्ञान, मिले तब मान बड़ाई ॥२॥
कल्पित मान बड़ाई सब, मिथ्या तज डारो ।
तप से ताहि जराय, सत का लियो सहारो ॥३॥

सतपद ठौर ठिकान, वही सतधाम है ।
सन्तन किया बखान, सत्त सतनाम है ॥४॥
सुरत शब्द के जोग में, मन चित ठहराना ।
इंगला पिंडला छोड़ कर, सुखमन घर आना ॥५॥
सुखमन के घर राग, राग में अनहद बानी ।
अनहद बानी सुहावनी, सुरत शब्द निशानी ॥६॥
सुरत निरत यक अंग कर, मन ले ठहराई ।
मन ही सोध ले साधुवा, तब सतपद जाई ॥७॥

दोहा शब्द भेद गुरु से मिले, बिन गुरु काज न होय ।
गुरु बिन ज्ञान मिले नहीं, यह भाखे सब कोय ॥
राधास्वामी दया करी, दीन्हा भेद बताय ।
मूरख जन चेते नहीं, कौन कहे समझाय ॥

(१११-५४१)

दोहा राधास्वामी सतगुरु, दिया शब्द का भेद ।
जो मानें इस शब्द को, मिटे भरम का खेद ॥

॥ चौपाई ॥

दया मेहर गुरु उमड़त आई । परमारथ का पन्थ दिखाई ॥
पन्थ डगर घट भीतर दरसा । हुए प्रसन्न गुरु पद को परसा ॥
गुरु है समरथ अन्तरयामी । गुरु के चरन सरोज नमामी ॥
गुरु है परम पुरुष घट बासी । अमल बिमल निर्मल सुखरासी ॥
गुरु मूरत निज हृदय धरना । गुरु का ध्यान निरंतर करना ॥
गुरु सुमिरन गुरु ही हैं ध्याना । गुरु है अगम सुगम गम ज्ञाना ॥
गुरु की खोज करो तुम भाई । गुरु की दया जाय कठिनाई ॥
गुरु का भजन गुरु की सेवा । गुरु समान कोई और न देवा ॥

दोहा गुरु की अस्तुति बंदना, गुरु का सुमिरन ध्यान ।
गुरु के भजन से साधुवा, उपजे निर्मल ज्ञान ॥

(११२-५४२)

शब्द जोग की करो कमाई। चित से मेटो सब दुचिताई ॥
शब्द से भई जगत की सृष्टि। शब्द समष्टि शब्द है व्यष्टि ॥
शब्द जीव है शब्द है ब्रह्म। शब्द से जावे भवका भर्म ॥
शब्द आकाश का है भंडार। शब्द की महिमा का नहीं पार ॥
शब्द अनीह अनाहत शब्द। शब्द जिज्ञासा आरत शब्द ॥
शब्द ज्ञान की सूझ सुझावे। शब्द अर्थ और जतन बतावे ॥
शब्द शब्द का द्वार दिखावे। शब्द शब्द का भरम हटावे ॥
शब्दहि बानी शब्दहि सार। सार शब्द से हुये निस्तार ॥

दोहा शब्द शब्द में अंतरा, शब्द शब्द में भेद।
सार शब्द लौ लाइये, जामे दुख न खेद ॥

(११३-५४३)

शब्द अनाम नाम है शब्द। शब्द अकाम काम है शब्द ॥
शब्द अर्थ है शब्द अनर्थ। शब्द समर्थ शब्द असमर्थ ॥
शब्द गुरु और शब्दहि चेला। शब्द अनेक और शब्द अकेला ॥
साधन शब्द शब्द सिद्धान्त। शब्द भ्रान्त शब्द निरभ्रान्त ॥
शब्द कटावे जम की फाँसी। शब्द विनोद शब्द है हांसी ॥
शब्द कमावे सोई सियाना। शब्द न बूझे सो अज्ञाना ॥
जग का शब्द जोनि ले आवे। गुरु के शब्द परम पद पावे ॥
शब्द का भेद गुरु से पाओ। बिन गुरु शब्द न कभी कमाओ ॥

शब्द जोग अति सुगम है, निगम अगम गम सार।
साधन शब्द का जो करे, देखे बिमल बहार ॥

(११४-५४४)

राधास्वामी दया मिला मोहि ज्ञाना। जो कोई माँगे दूँ मैं दाना ॥
गुरु ने बख्शा माल खजाना। ले अधिकारी चतुर सुजाना ॥
कुछ दिन आये करे सतसंगा। मन का मोह भरम होय भंगा ॥

आरत जिज्ञासु नर ज्ञानी। अरथार्थि वा अज्ञानी ॥
चंचल मूढ़ के क्रोधी कामी। मानी छली निपट अभिमानी ॥
पापी पाप ग्रस्त वा रोगी। भोगी सोगी अथवा ज़ोगी ॥
जाको मैं अधिकारी पाऊँ। गुरु का भेद प्रगट कह गाऊँ ॥
गूढ़ तत्व सब ताहि सुनाऊँ। भेद न राखूँ प्रेम जताऊँ ॥

दोहा ईश वाद का कथन नहीं, नहीं निरीश्वर वाद ।
दोऊ में मम परम प्रिय, करें न वाद विवाद ॥

(११५-५४५)

शब्द बताऊँ सहसकमल का। नाद सुनाऊँ त्रिकुटि मंडल का ॥
सुन्न महासुन्न बानी चारी। भँवर गुफा मुरली झनकार ॥
सतपद बीन की धुनी लखाऊँ। अलख अगम के पार पहुंचाऊँ ॥
धाम अनामी राधास्वामी। धुरपद पद सरोज निज़ धामी ॥
इतने पद सन्तों ने कहे। बिन गुरु मरम न कोई लहे ॥
पहिले तजो धाम नासूत। फिर आओ चढ़कर मलकूत ॥
ताके पार रहे जबरूत। इसके परे धाम लाहूत ॥
हूत पार है हूतुलहूत। समझे कोई ज्ञानी अवधूत ॥

दोहा यह साधन योग का, नहीं विचार का काम ।
तज विचार करनी करे, तब प्रगटे सतनाम ॥

(११६-५४६)

राधास्वामी राधास्वामी नित गुन गाऊँ ।
राधास्वामी धुन सुन सुन हरषाऊँ ॥
राधास्वामी सम कोई और न दूजा ।
राधास्वामी धारूँ चित में पूजा ॥
राधास्वामी मेरे गुरु दातार ।
राधास्वामी संग में जाऊँ पार ॥

राधास्वामी परम पुरुष निरवान।
राधास्वामी पर तन मन कुरबान॥
राधास्वामी प्रीत प्रेम उरझाया।
राधास्वामी भक्ति में मन ठहराया॥
राधास्वामी नाम अमी रस पीना।
राधास्वामी सत संगत चित दीना॥
राधास्वामी की गति क्या कोई जाने।
राधास्वामी पद बिरला पहचाने॥
राधास्वामी नाम अनाम अमाया।
राधास्वामी अमर अजर दिखलाया॥
दोहा रात दिवस बिसरूँ नहीं, व्यापा राधास्वामी नाम।
राधास्वामी चरन में, कोटि कोटि परनाम॥

(११७-५४७)

गुरु गुरु मैं निस दिन गाता। गुरु के चरन रहे मन राता॥
गुरु मेरे समरथ दीन दयाला। गुरु परहित गुरु हैं प्रति पाला॥
गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णु महेशा। गुरु नारद सारद गुरु शेषा॥
गुरु अनाम गुरु नाम अधारा। गुरु वार गुरु भव के पारा॥
गुरु समदर्शी गुरु सुखरासी। गुरु व्यापक गुरु घट घट बासी॥
गुरु सतचित आनन्द की खानी। गुरु हैं दाता गुरु हैं दानी॥
गुरु प्रकाश गुरु भानु अपारा। गुरु समुद्र गुरु बुन्द समाना॥
दोहा गुरु महिमा अति अगम है, गुरु का वार न पार।
जिन देखूँ गुरु दृष्टि में, गुरु हैं सबके सार॥

(११८-५४८)

गुरु खालिक मखलूक गुरु हैं। गुरु आशक माशूक गुरु है॥
गुरु में प्रेम गुरु में भक्ति। गुरु समान कोई और न शक्ति॥
गुरु धुरपद गुरु हैं निरवाना। गुरु समान कोई और न जाना॥

गुरु की शरनागत जब आया । भव का सकल विकार न साया ॥
गुरु की बानी अगम ठिकानी । गुरु प्रताप कोई विरला जानी ॥
गुरु के शरन आये जब प्रानी । गुरु की महिमा तब कुछ जानी ॥
मैं भँवरा गुरु कमल प्रकाशी । गुरु नित गुरु मूरत अविनासी ॥
गुरु जान गुरु हैं मेरे प्रान । गुरु सांस गुरु शब्द की खान ॥

दोहा एक गुरु की आस कर, त्याग जगत की आस ।
राधास्वामी चरन में, धार सदा विश्वास ॥

(साखी)

[११६-५४६]

पढ़ा लिखा कुछ गुना नहीं, तोते जैसी रट ।
पेट की खटपट में रहे, यह विद्या सट पट ॥१॥
परमारथ करने चले, तिरिया पकड़े कान ।
पहिले घर को देख ले, पाछे कर तू ध्यान ॥२॥
भेस बनाये क्या भया, घर घर मांगी भीख ।
धिक इस जीवन पर सदा, समझ न भाई सीख ॥३॥
चित नहीं ठहरे ध्यान में, भटक भटक भटकाय ।
खाली पेट बैरी कठिन, खुशी न हाय सुहाय ॥४॥
गले में कफनी डाल ली, बन स्वांगी दरवेश ।
लानत ऐसी जिन्दगी, लानत ऐसे भेस ॥५॥
ज्ञानी ध्यानी संजमी, रोटी के आधीन ।
मुक्ति न पावें सौ जनम, समझबूझ के हीन ॥६॥
पहिले लोक सुधार ले, तब पाछे परलोक ।
जो नहीं ऐसा करेगा, बहुत सहेगा शोक ॥७॥
कहता हूं कह जात हूं, कहता हूं सौ बार ।
खाली पेट न हर भजे, मिथ्या ज्ञान विचार ॥८॥

(१२०-५५०)

दोहा घट में काशी द्वारका, घट में गिर कैलास ।
घट में ब्रह्मा विष्णु हैं, घट है शिव का बास ॥१॥

घट में सहसकमल दल जोती । घट में त्रिकुटी सिंध गति मोती ॥
घट में ओंकार बिस्तारा । घट में निरखो ब्रह्म पसारा ॥
घट में सुन्न समाध रचाओ । घट में उनमुनी दशा समाओ ॥
घट में सोहंग घट में सत । घट में सूझे सन्त का मत ॥
अलख अगम घट की ठकुराई । राधास्वामी भेद बताई ॥

दोहा जो घट की लीला लखे, सूझे अगम अपार ।
बिन घट खोज न पाइये, सतगुरु का दीदार ॥

(१२१-५५१)

दुखी जीव सुख के सहकारी । बद्ध मुक्ति के हैं अधिकारी ॥
बिन दुख सुख की चाह न आवे । बिना बन्ध मुक्ति नहीं पावे ॥
एक की टेक से छुटे अनेक । भक्ति भाव से बढ़े विवेक ॥
भक्ति ज्ञान और शुद्ध विचार । साधन से पावे उदगार ॥
सुमिरन भजन ध्यान चित लाओ । तब अधिकार ज्ञान का पाओ ।
शब्द योग बिन मन नहीं निश्चल । बिन मन निश्चल ज्ञान न निर्मल
ज्ञान बिमल जब घट नहीं आवे । यह मन शांती कदापि न पावे ॥
ज्ञान रूप गुरु राधास्वामी । अस आदर्श के चरन नमामी ॥
गुरु ही इष्ट आदर्श परमपद । गुरु की मेहर से छूटे आपद ॥
तीन ताप भव दुख सब कटें । मन बुद्धि चित गुरु में बसें ॥
आनन्द पाय जो चित ठहराय । सहस ही सहस समाध जगाय ॥
सहज समाध परम पद जानो । सन्त मते का सार पिछानो ॥
बाद विवाद काम नहीं आये । साध वही जो भक्ति कमावे ॥
राधास्वामी दया काम बन जावे । सेवक फिर भव फन्द न आवे ॥

॥ साखी ॥

[१२२-५५२]

राधास्वामी सत्त है, और सकल सब झूठ ।
जो सुमिरे इस नाम को, छुटे काल का खूँट ॥१॥
राधास्वामी नाम कह, मन मनसा को त्याग ।
यही मुख्य अनुराग है, यही मुख्य वैराग ॥२॥
राधास्वामी भजन है, राधास्वामी ध्यान ।
राधास्वामी नाम है, राधास्वामी ज्ञान ॥३॥
राधास्वामी गुरु मिलें, राधास्वामी देव ।
राधास्वामी चरन की, निसदिन कीजे सेव ॥४॥
राधास्वामी आदि जुगाद है, राधास्वामी धुरपद धाम ।
राधास्वामी चरन सरोज में, कोटि कोटि परनाम ॥५॥

॥ चौपाई ॥

(१२३-५५३)

मन पर निसदिन हो असवार । यह मन डाकू यह बटमार ॥
युक्ति शक्ति से जीतो वाको । सोच समझ बस लाओ ताको ॥
मन के मते कभी नहीं चलना । नहीं तो अंत हाथ का मलना ॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी । मन के घाट से होगये पारी ॥

(१२४-५५४)

कुछ दिन सतसंग की आस । कुछ दिन ध्यान भजन अभ्यास ॥
भजन ध्यान सुमिरन लीलीन । कुछ दिन गुरु चरनन में दीन ॥
गुरु चरन में आपा मेटो । तब इस भव का टाट समेटो ॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी । गुरु ने बताई युक्ति नियारी ॥

[१२५-५५५]

पहिले करम करो विधि नाना। मूढ़ अवस्था मिटे सुजाना ॥
तब उपासना से रज जीत। चंचल वृत्ति न आवे चीत ॥
सत अज्ञान का भरम मिटाओ। तब कहीं ज्ञान की सम्पत पाओ ॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी। चौथे पद की करी तय्यारी ॥

[१२६-५५६]

मोर तोर की रसरी भारी। तासे बन्धे जीव संसारी ॥
बकरा 'मैं' कह गला कटावे। मैंना 'मैं ना' कह सुख पावे ॥
मैं मैं बुरी आग है भाई। 'मैं' से जगत भया दुखदाई ॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी। 'मैं' तज सेवक बना सुखारी ॥

(१२७-५५७)

धन दे धन का पावे दान। विद्या दे हो विद्यावन ॥
ज्ञान रतन जो कोई दे। जग में यश और कीर्ती ले ॥
भक्ति देकर भक्त कहावे। तारे सबहि आप तर जावे ॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी। दान की परखी महिमा भारी ॥

[१२८-५५८]

ऊँचे पानी कभी न टिके। नीचा होय सो भर भर पीये ॥
सिर पर चढ़े सो गिर गिर जाय। पांव पड़े भक्ति फल पाय ॥
दीन दयाल नाम सतगुरु का। दीन दुखी हो दास चरनन का ॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी। दीन भक्त की महिमा भारी ॥

[१२९-५५९]

प्रेम प्रीति की प्रीति अनूप। प्रेम से रंक दुखी होय भूप ॥
मरे जीव को प्रेम जिलावे। प्रेम अलौकिक वस्तु कहावे ॥
वामन प्रेम फन्द से बन्धे। नित बलि द्वारे निस दिन खड़े ॥
दुर्योधन का तज पकवान। खाया साग विदुर घर आन ॥

शबरी के बेर स्वाद रस खाये। राम कृष्ण दोनों हर्षाये॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी। महिमा प्रेम की अकथ अपारी॥

[१३०-५६०]

उलट सुरत को तिल में लाओ। रुद्र नेत्र में ताहि जमाओ॥
मन को रोको मन परबोधो। मनहि सुधारो मन को सोधो॥
वाह्य जगत की आस भुलाओ। आसा गुरु चरनन में लाओ॥
आसा मनसा दोनों मोड़ी। चरन कमल गुरु में चित जोड़ी॥
राधास्वामी नाम जीव निज घट में। आसन धारो तिल के पट में॥
देखो घट में विमल तमासा। सहसकमल का जहां उजासा॥
सूरज चांद की जगमग जोती। झलके तारे पन्ने मोती॥
पांच रंग फुलवारी परखो। श्याम कंज तज जोत को निरखो॥
जगमग दीप जरे जहां भारी। जोत निरंजन शोभा धारी॥
सुनो गगन का पहिला बाजा। अनहद शब्द तूर जहां बाजा॥
भेद युक्ति का गुरु से लेना। बिन गुरु पग नहीं पंथ में देना॥
कुछ दिन सहसकमल प्रकासा। फिर त्रिकुटी में करो निवासा॥
ओंकार से लगन लगाओ। धुन मृदंग की गूँजत पाओ॥
यह श्रुति का मूल मुकाम। यहाँ से उपजे नूर कलाम॥
गुरुपद का यह पहिला स्थान। गुरु बिन मिले न वेद का ज्ञान॥
ओंकार गुरु का है रूप। त्रिलोकी का अद्‌भुत भूप॥
लाल भान का भया उजाला। अन्तर जागा शब्द रसाला॥
जब गुरु मिलें तो भेद बतावें। निज स्वरूप ओंकार दिखावें॥
गुरु पद पाय सुन्न को धाओ। महासुन चढ़ चढ़ ध्यान लगाओ॥
परमहंस की गति है सोई। गंग जमन बिच सरस्वति होई॥
मानसरोवर कर अस्नान। हंस गति का पाओ ज्ञान॥
छीर नीर का करो निबेरा। गढ़ सुमेर में लागे डेरा॥
दसवें द्वार का नाका देखो। कर प्रवेश फिर ताहि परेखो॥

गुप्त चार बानी जहां रहती । बिन बानी सुरत दुख सुख सहती ॥
प्रथम घोर अंधियारी छाई। गुरु दया से ताहि नसाई ॥
चमका चन्द्र प्रकाश प्रकाशा । सुरत ने पाया विमल विलासा ॥
शिव शक्ति मिल एक समान। पुरुष प्रकृति न अंतर जान ॥
देख देख लीला अलबेली । आगे बढ़ी सुरत हरखेली ॥
भँवरगुफा की पांजी आई। माया काल रहे मुरझाई ॥
सोहंग सोहंग बन्सी बाजी। धुन बांसुरी अनूपम बाजी ॥
जब कपाट घट का खुल जाय । तबही भँवरगुफा सुरत आय ॥
जब सब मेटो मन की आसा । तब सतपद में पाओ बासा ॥
मन बानी के पार है सत। सतपद सन्तों का है तत ॥
सत सत बीन की धुन सुन पाई। अलख अगम के पार सिधाई ॥
तिसके आगे धाम अनामी । सत्तपुरुष सतगुरु राधास्वामी ॥
रूप रंग रेखा से पारा । नाम अनाम दोनों से न्यारा ॥

(१३१-५६१)

सुरत चली पहिले अस्थाना । सहसकमलदल ठौर ठिकाना ॥
जोत जोत में जोत अनूपा। रूप रूप में रूप स्वरूपा ॥
घंटा शंख की धुन सुन पाई । सुन सुन सुन सुरत मुसकाई ॥
कँवल खिले सूरज प्रकास। प्रेम भरे दिन रात बिलास ॥
सुख पाया जाका वार न पार । सारद शेष न बरनन हार ॥
दोहा जोत निरंजन का दरस, सो पहिला अस्थान ।
शब्द जोत की गम लखी, सूझा अधिक महान ॥

[१३२-५६२]

सुरत चली अब दूजा धामा । ऋषि मुनि सुर जन का निज ठामा ॥
रूपा लाल लाल रंग देखा । देख देख अति किया परेखा ॥
लाल सूर चमका तहां भारी । खुली आँख से ताहि निहारी ॥
बानी वेद चार सुन पाई । ब्रह्मा निर्मल कथा सुनाई ॥

आई ओम ओम झनकारा। ओंकार पद दरसा सारा॥
धुन मृदंग जहां निसदिन बाजी। मेघ नाद लंका गढ़ साजी॥
सुवरन कली अनूपम लंका। मन से भागे सब ही शंका॥
सीता राम की भई चढ़ाई। रावण रज का राज नसाई॥
ज्ञान विवेक हृदय जब आया। गुरु प्रसन्न चित भेद बताया॥
नूर कलाम त्रिलोकी सार। त्रिलोकी का मूल ओंकार॥
दोहा जो कोई अन्तर में चढ़, देखे विमल बहार।
जनम मरन के फांस से, मिले सहज छुटकार॥

[१३३-५६३]

चौथा सुन्न महासुन्न ध्यान। मानसरोवर किया असनान॥
कर असनान ध्यान गुरु जागा। सहजहि मन बिसमाधी लागा॥
ब्रह्मरेन्द्र का सिखर निहारा। चढ़ चढ़ भई त्रिलोकी पारा॥
चौथे भँवरगुफा की खिड़की। बंसी मधुर मनोहर कड़की॥
हंस चुनें गज मुक्ता नित। क्षमा दया करुना रहे चित॥
दोहा मन की दुचिताई गई, पाया पद अद्वैत।
सुन्न पार जब चढ़ गये, रहा न भय भव द्वैत॥

[१३४-५६४]

अब पंचम की किया तयारी। भँवर पार सत पद गति धारी॥
सत्यम सत्यम बाना निर्मल। सुरत निरत हुये सुन सुन निश्चल॥
सत में सत का सत्त प्रकाश। अद्भुत लीला अजब विलास॥
बीन सुनी जहाँ मधुर सुहावन। मन ललचावन प्रेम बढ़ावन॥
अलख अगम चढ़ आगे बढ़ी। फिर राधास्वामी चरन पड़ी॥
गुरु बल पाय किया भव पार। अब नहीं व्यापे भव संसार॥
धन्य धन्य गुरु राधास्वामी। धन्य धन्य तुम चरन नमामी॥
दोहा कोटि जनम का पंथ था, भटका बारम्बार।
राधास्वामी की दया, अब हुये भवजल पार॥

॥ दोहे ॥

(१३५-५६५)

कथनी छोड़ करनी करो, करनी से रहो लाग।
कथनी मिलावे छार में, करनी बढ़ावे भाग ॥१॥
अहं ब्रह्म न उचारिये, निस दिन कीजे कर्म।
कथनी से हो भ्रान्ती, करनी मेटे भर्म ॥२॥
अहं ब्रह्म कहकर मुये, समझे नाहिं गँवार।
करम से निध्यासन बने, बोले बढ़े विकार ॥३॥
श्रवन मनन कर लीजिये, तब निध्यासन होय।
बिना कर्म क्या फल मिले, ज्ञानी बने न कोय ॥४॥
पोथी पत्रा में नहीं, ब्रह्म ब्रह्म का सार।
पोथी पत्रा जो फँसे, व्याप रहा संसार ॥५॥
पोथी पत्रा ग्रन्थ में, माया लपटी देख।
बिन सतसंग न ऊपजे, हृदय ज्ञान विवेक ॥६॥
मूल गँवाया आपना, पढ़ पुस्तक की सीख।
भूल भरम में फँस रहे, मांगे घर घर भीख ॥७॥
पहिले कर्म उपासना, पीछे सतगुरु ध्यान।
ता पीछे सुन बन्धु जन, पावे सतपद ज्ञान ॥८॥
सुरत शब्द अभ्यास कर, छोड़ ग्रन्थ की आस।
ग्रन्थ से ग्रन्थि पड़त है, ग्रन्थी भये निरास ॥९॥
कोटि ग्रन्थ पढ़ क्यों मरे, तत्व न आवे हाथ।
तत्व भेद तब पाइये, जब लीजे सतगुरु साथ ॥१०
पहिले गुरु भक्ति करो, पीछे दूजा काम।
ताके पीछे पाइये, सत्त नाम सत धाम ॥११॥
चौसाधन पहिले करो, पीछे गुरुमुख नाम।
महावाक्य का फल लहो, मन पावे विस्राम ॥१२॥

बिन गुरु पढो न ग्रन्थ को, बिन गुरु लो नहीं नाम।
बिन गुरु ज्ञान की गम नहीं, बिन गुरु बने न काम ॥१३॥
जब लग मन की गढ़त नहीं, तब लग सब बेकाम।
"दुविधा में दोनों गये, माया मिली न राम ॥"१४॥
गुरु सतसंग में आयकर, साजा भक्ति साज।
"गोरस बेचत हरि मिले, एक पन्थ दो काज" ॥१५॥
अहं ब्रह्म उचारते, खाया मूल को सोय।
"ज्यों ज्यों भीजे कामरी, त्यों त्यों भारी होय" ॥१६॥
ग्रन्थ की ग्रन्थी पड़गई, सूझा वाद विवाद।
अहं ब्रह्म के वाक्य से, मिला न ब्रह्म का स्वाद ॥१७॥
अहं ब्रह्म दिन रात कह, चिंता बाढ़ी मन।
घर में अनबन जब मची, भाग गये तब मन ॥१८॥
घर बन एक समान कर, साज प्रेम का साज।
भक्ति पदारथ पायकर, मिला ज्ञान का राज ॥१९॥

(१३६-५६६)

भजन बिना कहो कौन संदेसा। भजन बिना नहीं मिटे कलेसा ॥
भजन प्रभाव जान सब कोई। बिन गुरु भजन ज्ञान नहिं होई ॥
गुरु भज भव से छूटे प्रानी। गुरु भज मिटे मोह मद मानी ॥
घट में भज गुरु नाम निरंतर। भजन विहीन जान पशु सम नर ॥
नहीं विद्या नहीं बुद्धि विचारा। भजन से होय सकल निस्तारा ॥
दोहा लौ लागी तब जानिये, नाम बिसर मत जाय।
जीवत सुख आनन्द ले, अन्य परम पद पाय ॥

(१३७-५६७)

लौ लागी रहे आठों याम। मन निज मन में व्यापे काम ॥
नाम जपत भव सिंधु सुखाई। नाम जपत माया टर जाई ॥
नाम से क्रोध मोह मद भागे। नाम से प्रीत रीत में पागे ॥

नाम निशान अस्थान बतावे। नाम परम पद ले पहुंचावे॥
सहज सहज ले नाम रसायन। घट से भागे शंका डायन॥

दोहा नाम जपो घट अन्तरे, अन्तर नाम निशान।
सुरत शब्द के योग से, पाया नाम ठिकान॥

[१३८-५६८]

घट में शब्द सुनो घट आओ। बाहर के पट सकल गिराओ॥
खोलो घट का पट दिन राती। चमके जोत दिया बिन बाती॥
बरसे जोत अखंडित धारा। अन्तर चमके सूर सितारा॥
सुरत शब्द धुन सुरत शब्द धुन। सुनत सुनत भई सूरत उनमन॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी। भजन प्रभाव जीव बहु तारी॥

सोरठा राधास्वामी नाम, नित हित चित से गाय।
भव दुख आपति नास, सहज परम पद पाय॥

दोहा राधास्वामी दया करी, शब्द जहाज चढ़ाय।
भवसागर के भँवर से, दीना पार लगाय॥

(१३९-५६९)

सूरज लाल लाल अस्थाना। गुरु ने बताया गुरु का ठिकाना॥
ठुमक चली सूरत मतवारी। देखे अचरज बाग कियारी॥
फूल खिले भँवरे मँडलाये। शोभा अद्भुत बरनि न जाये॥
ओंकार का पाया धाम। ओम् धुनी जहां आठों याम॥
बाजत मृदंग शब्द सुहाई। बिजली चमके आभा छाई॥
मेघ नाद सुन अचरज लीला। सुन सुन सूरत भई सुशीला॥
त्रिलोकी का नाका पाया। देख देख मन अति हरखाया॥
नाद शब्द और मूल कलाम। वेद ज्ञान का त्रिकुटी धाम॥

[१४०-५७०]

शब्दहि सारा शब्द निज सारा। शब्दहि माया ब्रह्म विचारा॥
शब्द सांख्य और शब्द वेदान्त। शब्द न्याय और शब्द सिद्धांत॥

जो कोई करे शब्द अभ्यासा । छूटे जग की आसा त्रासा ॥
शब्द भेद सतगुरु से लीना । सुन सुन शब्द शब्द चित दीना ॥
शब्द की महिमा वेद बखाने । शब्दी होय शब्द सोई जाने ॥
शब्द मंडल में रचा विलासा । शब्द सुने कोई गुरु का दासा ॥
सुन सुन अंतर शब्द सुहेला । सुरत शब्द का होगया मेला ॥
मेला भया सुरत मगनानी । गई परम पद चित हरखानी ॥
जहां न रंग रूप नहीं रेखा । जहां विचार न गिनती लेखा ॥
धुरपद पहुँच सार निज पाया । राधास्वामी चरन जाय लिपटाया॥

दोहा गुरु चरनन बल जाइये, दीना शब्द बताय ।
बन्ध काट निज दास के, लीना अंग लगाय ॥

(१४१-५७१)

उलटो तिल देखो असमाना । सुरत निरत का ठौर ठिकाना ॥
फर्श को छोड़ अर्श पर आओ । गगन मंडल पर कुर्सी बिछाओ ॥
कुर्सी बैठ करो तुम राज । सुरत निरत का साजो साज ॥
तिल को फेर फेरदो तिल को । उलट पलट ठहराओ दिल को ॥
बंक नाल का नाका देखो । सहसकँवलदल जाय परेखो ॥
घंटा शंख सुनो धुन दोई । तिल की जोत जोत लखो सोई ॥

(१४२-५७२)

फिर त्रिकुटी चढ़ आसन मार । देखो बिमल रूप ओंकार ॥
झांझ मृदंग सुनो झनकार । मेघनाद ओम दरबार ॥
बन परबत बाटिका सुहाई । महल अनूप भूप छबि जाई ॥
गंग जमन बिच सरस्वती धारा । न्हाये धोये सुरत करे सिंगारा ॥
वेद मंत्र का निज अस्थान । ब्रह्मा कथे ज्ञान और ध्यान ॥
देखा नूर और सुने कलाम । मूल कलाम का यह निज धाम ॥
तीन रूप लीला बिस्तारी । तीनों की गति लगी अति प्यारी ॥

हिरण्यगर्भ विराट पसारा । अव्याकृत लखि त्रिकुटी द्वारा ॥
वेद तत्व को लीना चीन्ह । फिर आगे चित सूरत दीन ॥

(१३४-५७३)

आया नजर सुन्न मैदान । लामकान लाहूत स्थान ॥
मेरु सुमेरु गिर कैलास । शिव सकनकादिक करे बिलास ॥
मान सरोवर हंस निवास । अमी रहा जुल्मात के पास ॥
आब हयात अमी की धारा । अजरज अद्भुत खेल नियारा ॥
अन्धकार की घाटी दरसी । भेद खुला जब गुरुपद परसी ॥
महासुन्न तिस ऊपर रहे । परब्रह्म पद सब कोई कहे ॥
किंगरी सारंगी धुन नाद । छाई मस्ती लगी समाध ॥
भँवरगुफा की खिड़की खोली । सुनी सुरत मैं सोहंगम बोली ॥
मुरली बजी मचाई धूम । ऊँची चढ़ गई सूरत भूम ॥
महाकाल का गढ़ अब टूटा । माया मोह साथ जब छूटा ॥

(१४४-५७४)

सत्त लोक चढ़ सूरत आई । सतपद लखा सत्त ठहराई ॥
सत्त सत का सत आनन्द । यहां न माया काल का द्वन्द ॥
हुई सुरत अब सब से न्यारी । भरम अविद्या छूटी सारी ॥
मिला ज्ञान मेटा अज्ञान । निज स्वरूप का हो गया भान ॥
अगम अलख और लखा अनामी । परे ताहि पद राधास्वामी ॥
गुरु ने पूरा भेद बताया । उलट फेर तिल सबही दिखाया ॥
फेरे तिल और ऊपर चढ़े । रेखा रूप रंग से टरे ॥
क्या कोई उसका करे बखान । गुरु ने बख्शा पद निरवान ॥

(१४५-५७५)

घंटा शंख सुनो धर कान । सहसकँवल चढ़ लाओ ध्यान ॥
त्रिकुटी चढ़ मृदंग बजाओ । ओम् शब्द में चित को लाओ ॥
सुनो गगन में अद्भुत बाजा । अनहद राग जहां नित गाजा ॥

सुन्न सरोवर मैल छुड़ाओ। त्रिवेनी में जाय नहाओ ॥
किंगरी सारंगी वहां सुनो। सुन सुनकर मन अपने गुनो ॥
महासुन्न का नाका तोड़ो। भान रूप में चित को जोड़ो ॥
भँवरगुफा की खिड़की खोलो। मुरली बंसी की धुन बोलो ॥
सत्तलोक में बीन बजाओ। सत सत हक हक धूम मचाओ ॥
आगे अलख अगम अनामी। ताके आगे पद राधास्वामी ॥
चरनकँवल गुरु सीस झुकाओ। सुरत शब्द के मारग आओ ॥
देखो घट में बिमल बिलासा। अचरज अद्भुत अजब तमाशा ॥

[१४६-५७६]

सबसे ऊँचा सत्याकार। सुरत शब्द का जो भंडार ॥
इससे नीचे सोहंकार। माया काल का जो दरबार ॥
उससे उतर कर शून्याकार। जिससे प्रगटा यह संसार ॥
शून्याकार से रारंकार। सहज समाध का जहाँ विचार ॥
चौथा तुम जानो ओंकार। अ उ म त्रिलोकी सार ॥
सत रज तम की त्रिपुटी भाई। साधु साध साधन गति पाई ॥
पचवां कहो सहस्राकार। योग युक्ति का पहिला द्वार ॥
कमलसहसदल और सहस्रार। सतसंगी कोई समझे सार ॥
एक ओंकार सतगुरु प्रसाद। सहसकमल चढ़ कीजे याद ॥
राधास्वामी भेद बतावें। अपने हंस को आय चितावें ॥

रमेनी (१४७-५७७)

जब जागे तब जग व्यौहार। इन्द्री ज्ञान का सकल पसार ॥
जब सोये अन्तर में आये। सूक्ष्म जगत को लख हरषाये ॥
गहरी नींद में सुख का भान। परख के समझो पाओ ज्ञान ॥
शब्द सुना और शब्द को देखा। किया शब्द का बहु विधि लेखा ॥
शब्द भेद है शब्द का ज्ञान। शब्द प्रमान शब्द अनुमान ॥
शब्द शब्द का किया बखान। समझे बिरला साध सुजान ॥

दोहा राधास्वामी ने कहा, आपको आप पिछान।
अपने आप में आप लख, और का कहा न मान ॥

रमेनी (१४८-५७८)

शब्द योग सबका है टीका। सहज सुगम सीधा और सच्चा ॥
घर में रहकर साधन कीजे। साधन से सुख आनन्द लीजे ॥
शब्द योग से दुख नहीं कोय। सहजे पके सो मीठा होय ॥
शब्द योग दुख दूर करावे। शब्द योग सुख चित उपजावे ॥
शब्द योग की महिमा भारी। उसका सब कोई है अधिकारी ॥

साखी सुख तो है कहीं और ही, तू ढूँढे कहीं और।
भूल भरम में पड़ गया, नहीं ठिकाना ठौर ॥

॥ साखी ॥

(१४६-५७६)

पात पात को सींचते, वृत्त को दिया सुखाय।
पात फूल फल ना मिला, अन्त रहे पछताय ॥१॥
ना सुख देह में प्रान में, ना सुख मन में होय।
ना सुख ज्ञान विलास में, बिरला जाने कोय ॥२॥
सुख तो है आनन्द में, आनन्द के अस्थान।
ऋषि मुनि भूले देवता, ज्ञान का कर अभिमान ॥३॥
आनन्द आनन्द में लखो, आनन्द अपना रूप।
साधन आनन्द का करो, छोड़ भरम का कूप ॥४॥
जो है जहाँ ढूँढों वहां, ढूँढ के पाओ सार।
राधास्वामी ने कहा, और सकल जंजार ॥५॥

(१५०-५८०)

शब्द योग है सबका सार। अधिकारी कोई करे विचार ॥
शब्द योग है सुगम सुहीला। और योग सब कठिन दुहीला ॥

शब्द योग में नहीं कठिनाई । बिगड़ी बात सहज बन जाई ॥
शब्द योग का साधन करना । और योग को चित नहीं देना ॥
शब्द योग साध अनजान । जीते जी पावे निरवान ॥

साखी शब्द योग संजम बना, करे कोई चितलाय ।
दुचिताई दुबिधा मिटे, भरम भ्रान्ती जाय ॥
सहज सहज का भेद है, सहज सहज की रीत ।
सहज सहज में चित लगा, उपजे प्रेम प्रतीत ॥
राधास्वामी की दया, शब्द योग कर ले ।
सहज जनम को सुफलकर, और योग तज दे ॥

(१८१-५८१)

शब्द नाम ऊँचे से आया । ताहि उलट कोई ध्यानी गाया ॥
ब्रह्म रेन्द्र की चोटी चढ़ो । चोटी चढ़चर धुन को सुनो ॥
सुन सुन धुन सुरत हुई मस्तानी । ब्रह्म शिखर चढ़ आसन तानी ॥
उलटी गंगा उलटी जमुना । सरस्वती उलट हुआ मन मगना ॥
मान सरोवर कर अस्नान । हंस रूप लिया सुरत ठान ॥
जो सन्तों के मारग आवे । उलट नाम ले संगति पावे ॥
सीधा मारग सब कोई जाय । उलटे का कोई भेद न पाय ॥
उलटे मारग घर का पन्थ । सो नहीं पावे पढ़कर ग्रन्थ ॥
सीधे मारग है प्रवृति । उलट साध कोई करे निवृति ।

साखी राधास्वामी की दया, पाया सतमत ज्ञान ।
उलटे मारग पर चले, सूझे पद निरवान ॥
सीधे तो सब कोई चले, उलट चले नहीं कोय ।
क्यों पहुँचे घर आपने, चित मन बुद्धि खोय ॥
सुरत शब्द अभ्यास कर, अन्तर धँस सुरत साध ।
दर्शन पाये रूप का, लख लख अगम अगाध ॥

[१५२-५८२]

नाम प्रताप सकल जग माना। नाम महातम फिर नहीं जाना ॥
वरण नाम सब गये भुलाई। धुन का किसी ने भेद न पाई ॥
नाम रहे त्रिलोकी पारा। यह ढूंढे त्रिलोक पसारा ॥
चौथे पद में नाम निशान। शब्द योग से कोई कोई जान ॥
जो कोई चौथे पद में जाये। तब वह नाम की महिमा पाये ॥

साखी मकर तार गति चढ़ चले, पहुँचे सत के धाम।
सतपद में सूझे उसे, धुनात्मक सतनाम ॥

॥ दोहा ॥

(१५३-५८३)

बहता था भव धार, ठौर ठिकाना नांह।
राधास्वामी पार लगा दिया, पकड़ दास की बांह ॥१॥

राधास्वामी राधास्वामी गाय, राधास्वामी राधास्वाम ध्याय।
राधस्वामी नाम से लौ लगी, पड़ेगा पूरा दाव ॥२॥
मेरा अब कोई नहीं, एक गुरु की आस।
सुख दुख जग के मिट गये, द्वन्द की हटी त्रास ॥३॥

शब्द योग की साधना, लागी सहज समाध।
सहज वृत्ति जब घट रमी, हट गये भव के व्याध ॥४॥
भँवरा लोभी कमल का, चन्द्र का लोभी चकोर।
मैं लोभी गुरु दरस का, चित्त न आवे और ॥५॥

निसदिन गुरु की चाह है, पल पल गुरु का ध्यान।
छिन छिन गुरु का भजन है, गुरु मेरे जान और प्रान ॥६॥
सिद्धि शक्ति ले क्या करूँ, ऋधि निधि से नहीं काम।
यह माया के फंद हैं, मुझे मिले गुरु नाम ॥७॥

[१५४-५८४]

जब लग बालक गिरे नहीं, तब लग उठे न जान ।
जब लग अज्ञानी नहीं, कैसे पावे ज्ञान ॥१॥
नन्दू पाप कमाय कर, आ सतगुरु के पास ।
पुन्य मिले सतसंग से, क्यों तू होय उदास ॥२॥
नन्दू पाप कमाय कर, ली सतगुरु की ओट ।
सकल पाप जल भुन गये, भाग गया सब खोट ॥३॥
पाप किया तो क्या भया, पाप पुन्य का बीज ।
बिना पाप कहो पुन्य क्या, हाथ न दुख का मीज ॥४॥
नन्दू गुरु बिन नहीं लखी, पाप पुन्य की बात ।
राधास्वामी की दया, समझ पड़ी जम घात ॥५॥
नन्दू माया जग ठगे, ठगनी अति बलिवान ।
इस ठगनी के मरम को, समझे साध सुजान ॥६॥
माया ने तुमको ठगा, ठगो उसे तुम आय ।
आँख मिचोली खेलकर, लो अब काम बनाय ॥७॥
माया बुद्धि विवेक है, माया है गुनवान ।
माया शक्ति सिद्धि है, माया है बलवान ॥८॥
माया से मिल बुद्धि ले, माया ही से विवेक ।
पहिले खेल अनेक से, पीछे एक ही टेक ॥९॥
एक नाम गुरु देव का, सतगुरु दिया बताय ।
नन्दू सोच विचार कर, राधास्वामी पद लपटाय ॥१०॥

(१५५-५८५)

नन्दू करनी सबल है, बिन करनी क्या होय ।
पहिले करनी चित्त दे, पीछे सुख से सोय ॥१॥
करनी बिन बहुतक करे, ज्ञान ध्यान की बात ।
वह कुत्ता है जगत में, सहे काल की घात ॥२॥

करनी करे सो मीत हमारा, हम नहीं कथनी के साथी ।
करनी करे सो सब कुछ पावे, घोड़े बैल और हाथी ॥३॥

बक बक करते थक गया, जिभ्या होंट सुखाय ।
करनी से सब कुछ मिले, करनी सुगम उपाय ॥४॥

वेद पढ़ा तो क्या हुआ, करम का नहीं व्यवहार ।
वह गधा है जगत में, लादे पुस्तक भार ॥५॥

चंदन लादा बैल पर, मिला न बास सुबास ।
पढ़ लिखकर कथनी करे, सो हुआ अन्त उदास ॥६॥

नन्दू वाचक ज्ञान तज, गुरु गम ले पहिचान ।
राधास्वामी की दया, ले जल्दी निरवान ॥७॥

[१५६-५८६]

तड़प तड़प में उमंग है, जीवपना है जोग ।
यह रहस्य बूझे कोई, जिसे प्रेम का भोग ॥१॥
नन्दू प्रेम में रस महा, रसिया होय सुजान ।
रस की जिसको समझ नहीं, प्रेम प्रीत क्या जान ॥२॥
प्रेम भाव मन में रमा, प्रीतम तन मन व्याप ।
जब प्रेमी प्रीतम मिले, एक रूप है आप ॥३॥
नन्दू प्रेम का स्वाद ले, फीके हैं सब स्वाद ।
प्रेम प्यार बिन जीवना, जनम गँवाया बाद ॥४॥
पढ़ा गुना लिख पढ़ मुवा, अपना आप न जान ।
नन्दू पंडित मूरखो, दोनों एक समान ॥५॥
अपने को जाना नहीं, औरों को लिया जान ।
नन्दू ऐसे जान को, नहीं कहते है ज्ञान ॥६॥
विद्या बुद्धि का सार यह, आपको ले पहिचान ।
नन्दू जिसको समझ यह, सो ज्ञानी परमान ॥७॥

(१५७-५८७)

समय अमोल न खोइये, नित करिये सतसंग।
सिर पर फन काढ़े खड़ा, काला काल भुजंग ॥१॥
एक घड़ी आधी घड़ी, और आधी में आध।
सतसंगत परताप से, छूटें सकल उपाध ॥२॥
लोक परलोक सुधार ले, भज भज गुरु का नाम।
फिर यह अवसर यह घड़ी, नहीं यह धाम न ठाम ॥३॥
जाना है रहना नहीं, जाना निस्संदेह।
त्याग सकल की बासना, बांध गुरु सों नेह ॥४॥
नन्दू भोग विलास का, चाख लिया रस आय।
अब मन राता प्रेम रस, माता भक्ति लगाय ॥५॥

(१५८-५८८)

सतसंगत सुख उपजे, सतसंगत दुख जाय।
सतसंगत से साधुवा, मोच्छ मुक्ति फल पाय ॥१॥
सतसंगत के गुन बहुत, महिमा बरनि न जाय।
लोहा पारस से मिले, सो सोना हो जाय ॥२॥
सतसंगत में पुण्य है, सतसंगत में धर्म।
सतसंगत में साधुवा, मिले सत्त का मर्म ॥३॥
पोथी पढ़ पढ़ जग मुवा, खुले न हिये के नैन।
सतसंगत प्रताप से, मिल रहा सच्चा चैन ॥४॥
वाल्मीक नारद भये, ज्ञान ध्यान की खान।
सतसंगत में कीजिये, नाम अमृत रस पान ॥५॥

(१५९-५८९)

संगत तजिये दुष्ट की, उपजे काम विकार।
कीजे संगत साध की, तत छिन हो निरवार ॥१॥

संगत तजिये दुष्ट की, मिटे हिये का मैल।
सत संगत में पाइये, प्रेम प्रीत की गैल ॥२॥
संगत तजिये दुष्ट की, कलह कष्ट को मेट।
संगत कीजे साध की, धर भक्ति की भेंट ॥३॥

पढ़ना लिखना सब भुला, जो आवे हरि नाम।
सत संगत उत्तम महा, व्यापे क्रोध न काम ॥४॥
धर्म अर्थ और मोक्ष गति, सत संगत में पाय ॥
सहजे ही सब ऊपजें, जप तप कौन कराय ॥५॥

(१६०-५६०)

एक इष्ट मन में बसे, प्रगटे प्रेम प्रचार।
कोटि इष्ट की बन्दना, है निषिद्ध व्यभिचार ॥१॥
व्यभिचारी हो खोगये, मन में प्रेम न प्रीत।
तिनको कैसे प्राप्त हो, गुरु भक्ति की सीत ॥२॥

कभी विष्णु कभी शम्भु है, कभी गनेश दिनेश।
यह व्भिचारी सदा के, भोगें कष्ट कलेश ॥३॥
एक गुरु की भक्ति है, एक गुरु का नाम।
पूजा सेवा बन्दना, मानसिक आठों याम ॥४॥

सहज रीति की भक्ति की, महिमा अगम अपार।
जप तप कठिनाई महा, कभी न बेड़ा पार ॥५॥
एक घाट पर बैठकर, कर गंगाजल अस्नान।
नीर मथन से क्या बने, मन में समझ सुजान ॥६॥

एक पुरुष का सेवका, सेवा करे निशंक।
दस पुरुषों का सेवका, रहे सदा चित भंग ॥७॥
पतिविरता का एक हैं, व्यभिचारिनि के दोय।
पतिविरिता व्यभिचारिणी, कहो क्यों मेला होय ॥८॥

(१६१-५६१)

सतसंगी कहें सत का संग। सत के संग न हो चित भंग॥
साधु वह जो साधन करे। मन को साध असाधन हरे॥
हंस जो चीर नीर अलगावें। ज्ञान लहें अज्ञान हटावें॥
सन्त जो सहे मान अपमान। निज स्वरूप का राखे ज्ञान॥
आप तरे औरन को तारे। सुधरे और को साथ सुधारे॥
सन्त पन्थ की महिमा भारी। कोई समझे उत्तम अधिकारी॥
परम सन्त सतगुरु दयाल। भव जल से लीन जीव निकाल॥
शब्द नाव सहज जीव चढ़ावे। सहज ही भव के पार लगावे॥
ऐसी रहनी जिसकी देखो। उसे सन्त सतगुरु तुम समझो॥
राधास्वामी दीन सहाई। साध संत की गति यों गाई॥
माने कोई कोई चतुर विवेकी। जो नहीं जड़ता हट का टेकी॥

(१६२-५६२)

सहसकमल में लावे ध्यान। देखे रूप विराट महान॥
पांच रंग की खिली कियारी। पंच अग्नि फुलबारी न्यारी॥
दीपवान घट भीतर निरखे। ब्रह्म विराट की सूरत निरखे।
जाग्रत ब्रह्म है रूप विराट। ब्रह्म जाग्रत का वह ठाट॥
कुछ दिन निरख विराट की लीला। आगे चले सुरत शुभ शीला॥
ओंकार का दर्शन पावे। अव्याकृत का नाम धरावे॥
ब्रह्म स्वप्न की यह गति पाई। ब्रह्म स्वप्न में रहा समाई॥
इसके आगे शून्याकार। हिरण्यगर्भ तेहि कहूं पुकार॥
ब्रह्म सुषुप्ति का अस्थान। योगी घाट में चढ़े निदान॥

॥ दोहे ॥

(१६३-५६३)

गुन का ग्राही सन्त है, औगुन गहे असंत।
गुन से लौ लागी रहे, देखेगा निज कन्त॥१॥

च्छीर नीर आगे धरे, हंसा करे विचार।
आतमच्छीर से काम है, नीर तजा सो विकार ॥२॥
गुन का साथी साध है, औगुन लहे असाध।
जो कोई गुन को गहे, ताका मता अगाध ॥३॥
चन्दन बास न त्यागई, काटे लाख कुठियार।
बास सुवासित होरहा, मुख कुठार बरियार ॥४॥
जो तुझको दुख देत है, ता को दे तू सुख।
यही साध का लच्छ है, सुन सुन हो गुरुमुख ॥५॥

[१६४-५६४]

तू क्या सोचे रात दिन, क्यों नहीं सोचे मोहि।
मुझ असोच की सोच से, सोच न व्यापे तोहि ॥१॥
तारूँ तारूँ तार दूँ, तारूँ निस्सन्देह।
तेरे देह की क्या कहूं, तारूँ कुल और गेह ॥२॥
खेल खेल में भजन कर, सहज जोग चितलाय।
जो होना है होन दे, गुरु गम चित्त बसाय ॥३॥
आसा मैं पूरन करूँ, दास न होय निरास।
जो निरास है सेवका, सो नहीं मेरा दास ॥४॥
अपनी आसा त्याग दे, कर नित मेरी आस।
एक रूप में लख पड़ें, दोनों स्वामी दास ॥५॥
क्या करता है सोच तू, करता है हंकार।
अहं भाव जो ना तजे, कैसे लहे विचार ॥६॥
सहज सहज में सहज में, सूझे पद निरवान।
सतसंगत कर आन कर, मिले शब्द का ज्ञान ॥७॥
मेरा हो मुझ सरस रह, तज आपा अभिमान।
फिर इस द्वन्द पसार में, काल करे नहीं हान ॥८॥

जाग्रत स्वप्न समान कर, गुरु के चरनन लाग।
जाग्रत में तू स्वप्न कर, और सुपने में जाग ॥६॥
मुझ जैसा तू हो रहे, त्याग मोह भ्रम मूल।
रहनी ऐसी धार ले, जैसे कमल का फूल ॥१०॥

[१६५-५६५]

घर में रहे तो भक्ति कर, बन में रहे तो त्याग।
भक्ति ग्रहण का रूप है, त्याग रूप वैराग ॥१॥
ग्रहण मार्ग है प्रेम का, प्रेम प्रीत परतीत।
प्यार बसे जिस हृदय में, गहे भक्ति की रीत ॥२॥
त्याग मार्ग वैराग का, उदासीन निश भाव।
त्याग बसे जिस हृदय में, लहे ज्ञान का दाव ॥३॥
धारे तो दोऊ भले, भक्ति और वैराग।
वैरागी त्यागी बने, भक्त करे अनुराग ॥४॥
मन मलीन को शुद्ध कर, समझ गुरु के बैन।
कुछ दिन ऐसे जतन से, उपजेंगे सुख चैन ॥५॥
मन साधे बिन कुछ नहीं, बने न पूरा काम।
समझ न आवे सन्तमत, नहीं प्रगटे सतनाम ॥६॥
पोथी पुस्तक ग्रन्थ पढ़, बाढ़े मन हंकार।
जा गुरु के सतसंग में, अनुभव ज्ञान विचार ॥७॥

(१६६-५६६)

निर्गुन गुन वाले सभी, सगुन न निर्गुन कोय।
सतसंगत करो साध की, तब विवेक चित होत ॥१॥
गुन से ख़ाली कोई नहीं, पशु पची नर रूप।
निर्गुन तो कोई नहीं, रंक भिखारी भूप ॥२॥
ऐसा जग में कौन है, जो नहीं निर्गुन मीत।
सब गुन नहीं सबमें रहें, समझ के कर परतीत ॥३॥

सगुन अगुन के बीच में, चले सन्त का पन्थ ।
यह सुखमन का मार्ग है, समझ बूझ पढ़ ग्रन्थ ॥४॥
लाख कहा समझे नहीं, समझ न आवे बैन ।
कैसे हम उपदेश दें, लखे नहीं जब सैन ॥५॥
सैन बैन के बीच में, सत मत सत पथ देख ।
सत संगत प्रताप से, सूझे अगम अलेख ॥६॥
युक्ति प्रमाण बिचार से, कर गुरु का सतसंग ।
गुरु का रंग जब हिये बसे, कभी न होय कुरंग ॥७॥

(१६७-५६७)

एक तहां से सब हुआ, सब में एक समाय ।
लीला लहर समुद्र की, समझ प्रतीत बढ़ाय ॥१॥
एक हुआ दूजा बना, दो मिल भये अनेक ।
नन्दू एक अनेक है, और अनेक है एक ॥२॥
एक न होय तो दो कहां, दो लख परखे ऐक ।
नन्दू गुरु गम ज्ञान से, मेटे एक अनेक ॥३॥
एक कहूं तो है नहीं, दूजा कहा न जाय ।
नन्दू चुप हो बैठ रह, द्वैत अद्वैत मिटाय ॥४॥
आया गुरु दरबार में, चित धर अपने एक ।
सत संगत प्रताप से, गई एक की टेक ॥५॥
ब्रह्म नहीं माया नहीं, सत नहीं असत न कोय ।
नन्दू चुप रह मौन बन, समझे ज्ञानी सोय ॥६॥
एक कहा बेहद लखा, बेहद में था हद ।
नन्दू हद बेहद तजा, रहा न नेक न बद ॥७॥

[१६८-५६८]

अपनी अपनी समझ में, सब जग रहा फँसाय ।
जब गुरु ज्ञानी कोई मिले, मूल तत्व समझाय ॥१॥

जब गुरु ज्ञान की गम नहीं, बिन गुरु नहीं विवेक ।
बिन गुरु कोई न लख सके, एक तत्व के अनेक ॥२॥
संगत कीजे संत की, अलख लखावे सन्त ।
सूझ पड़े सतसंग में, सबका आदि और अन्त ॥३॥
पक्ष अपक्ष के भेद में, सूझे नहीं अभेद ।
मुल्ला पंडित लड़ मुये, पढ़ कुरान और वेद ॥४॥
पक्ष छोड़ कर सार ले, सार तत्व पहिचान ।
मुल्ला पंडित हों दोऊ, पल में एक समान ॥५॥
हिलमिल खेलूँ शब्द में, मन का पक्ष हटाय ।
समझे का मत एक है, नन्दू कहे बताय ॥६॥
पर उपदेश में खोगये, उपदेशक हुशियार ।
निज उपदेश बिना नहीं, गया कोई भव पार ॥७॥
पर उपदेशक बहुत हैं, निज उपदेशक नाहिं ।
निज उपदेशक जो मिले, नन्दू पकड़े बांह ॥८॥
नन्दू आप चिताइये, और चिताओ नाहिं ।
आप चिताये गुरु मिलें, और के भवजल माहिं ॥९॥

(१६९-५९९)

पूरन दया गुरु जब करें । तीन ताप भव संकट हरें ।
मन में उपजे विमल विलासा । अन्तर देखे सुरत तमासा ॥
जगमग जोत की महिमा भारी । कोई निरखे विरला अधिकारी
शब्द सुहावन मंडल लावे । सुन सुन सुरत अति हरषावे ॥
आनन्द छाय रहा चहुं ओर । अनहद तूर मचाया शोर ॥
झूम झूम सुरत मस्तानी । सतगुरु चरन कमल लिपटानी ॥
ध्येय ध्याता दोउ एक समान । आनन्द हर्ष महान महान ॥
घट की अद्भुत लीला देख । सुरत सखी हुई सुखी विशेख ॥
सुख प्रगटा जाका वार न पार । सुरत चरन होगई बलिहार ॥

सुरत शब्द का साधा जोग। अब नहीं सहे कलेश वियोग ॥
ऊँचे चढ़ आपा को त्यागे। गुरु आपा के रस में पागे ॥
यह भक्ति यह प्रेम कहावे। भक्ति मिले अज्ञान नसावे ॥
ज्ञान पाय लख गुरु की मूरत। निरत रूप को धारे सूरत ॥
सुरत निरत में रूप आकार। आगे चल हुई इससे न्यार ॥
विस्माधी हैरत अस्थाना। सन्त धाम धुर पद निरवाना ॥

दोहा राधास्वामी की दया, गुरु पद की ले छांव।
चांद सूर के सीस पर, धरा सुरत ने पाँव ॥

[१७०-६००]

सुरत सखी सुन मेरी बात। माया काल को अब दे मात ॥
कर सतसंग गुरु का आय। ता से मन का भरम नसाय ॥
बिन सतसंग विवेक न आवे। बिन सतसंग काल भरमावे ॥
माया ठगिनी करे ठगौरी। माया तज चल पौरी पौरी ॥
शब्द की कर तू नित्य कमाई। धुन में मन और सुरत जमाई ॥
सहसकमलदल घंटा बजाओ। त्रिकुटी ओम् नाद गुन गाओ ॥
अजपा जाप है अनहद बानी। सुन सूरत होगी मस्तानी ॥
गुरुगम लख चढ़ सुन्न शिखर पर। घर को छोड़ अचर में चित धर
सहज समाध का कुछ सुख पावे। सुरत जमे तब समझ में आवे।
सुन्न के आगे है महासुन्न। महासुन्न की अब धुन सुन ॥
घोर अँधेरा तजकर सजनी। धार हंस गति होकर हंसनी ॥
भँवरगुफा की चौड़ी खिड़की। धँसजा जहां बंसी धुन फड़की॥
बंसी की धुन गुप्त है बानी। जो गोपी बनी वह पहचानी ॥
गोपी गोप का है यह भेद। सुन धुन गति अब धार अभेद ॥
है अभेद गति सत्त धाम में। वहां तू लगजा सत्त नाम में ॥
नहीं वहां एक न दो हैं तीन। सत धुन की बजती है बीन ॥
सत्य सत्य जहाँ सत्य संदेश। सतगुरु संत को कर आदेश ॥

जाप मरे अजपा मर जाय । शब्द धँसे उसे काल न खाय ॥
जो कोई इतने ऊँचे चढ़े । रूप रंग रेखा से टरे ॥
अलख को लख और अगम की गम ले । पद अनाम में सुरत जमावे ॥
यही है राधास्वामी धाम । गुरु ने दिया तुझे पैगाम ॥
दोहा राधास्वामी धाम में, राधास्वामी नाम ॥
नाम अनाम से मिल रहे, तब पावे विस्राम ॥

(१७७-६०१)

भाग जगा सतगुरु मिले, ले अब शरनाई ।
भाग्यवती हो सुहाग ले, भक्ति का माई ॥१॥
प्रेम प्रीत परतीत के, भूषन सज तन पर ।
चित की विरती साध ले, बस हो कुछ मन पर ॥२॥
भ्रूमध्य के बीच में, जगमग हो तारा ।
अन्तर में तेरे लख पड़े, गुरु प्रीतम प्यारा ॥३॥
आरत थाली प्रेम की, ले साज सियानी ।
दर्शन करिये नेत्र से, तज द्वन्द गिलानी ॥४॥
मस्तक में तेरे गुरु बसे, गुरु की कर पूजा ।
भक्ति भाव उर में रहे, हो भाव न दूजा ॥५॥
गुरु को सिर पर राख कर, आज्ञा में चलिये ।
चिंता दुचिता दूर कर, आनन्द सुख लहिये ॥६॥
राधास्वामी की दया, अवसर शुभ पाया ।
भक्ति साज सजाय ले, व्यापे नहीं माया ॥७॥

(१७२-६०२)

सेवक सेवा में रहे, सेवा का चित ध्यान ।
इस सेवा में नन्दुवा, भक्ति मुक्ति सत ज्ञान ॥१॥
सेवक सेवा में रहे, मन से तज अभिमान ।
यह गति मति है नन्दुवा, धुरपद सत निर्वान ॥२॥

सेवक सेवा में रहे, हो सेवा निष्काम।
इस सेवा से नन्दुवा, सहज मिले सतधाम ॥३॥
सेवक सेवा में रहे, गुरु आज्ञा चितलाय।
करता धरता बन नहीं, मन आज्ञा ठहराय ॥४॥
निरबन्धन बंध रहा, बन्ध हुआ निरबन्ध।
बुन्द सिंध के तुल्य है, वही बुन्द वही सिंध ॥५॥
हंसी खुशी निसदिन लहे, खेले खेल संभार।
इस सेवक को नन्दुवा, ज्ञान के अगम अपार ॥६॥
बोली खड़ग विचार से, घढ़ गया मुझे लोहार।
मुझ में गुन अवगुन कहां, हाथ संभार के मार ॥७॥
अपना मुझमें कुछ नहीं, जो है सो करतार।
सो है वीर के हाथ में, खड़ग छुरा तलवार ॥८॥
सेवक पहिले यों हुआ, गुरु की आसा राख।
धीरे धीरे गुरु भया, बढ़ गई उसकी साख ॥९॥
सेवक जीव का रूप है, ब्रह्म गुरु का रूप।
दोनों मिलकर एक है, नहीं परजा नहीं भूप ॥१०॥
कर्म योग सबसे सुगम, कठिन ज्ञान की धार।
ज्ञान चढ़े कट कट गिरे, करम करे वरियार ॥११॥
कोई अधिकारी ज्ञान का, समझे तत्व का सार।
करम योग से सहज में, भव जल बेड़ा पार ॥१२॥
राधास्वामी की दया, अब पाया गुरु ज्ञान।
ज्ञान करम दोऊ एक है, समझे दास सुजान ॥१३॥

(१७३-६०३)

माखन मथ कर काढ़ ले, छाछ का त्याग विचार।
माखन तो साधु गहे, छाछ पिये संसार ॥१॥

बिगड़े दूध को क्या मथे, ता में मूल विकार ।
मन बानी को सोध कर, मथ ले माखन सार ॥२॥
पानी मथना भूल है, मथ ले उत्तम क्षीर ।
माखन निकसे दूध से, त्याग जगत का नीर ॥३॥
बड़ी बड़ाई बच्छ की, गहे क्षीर निरवार ।
रक्त मास को नहीं लहे, साध का यही विचार ॥४॥
ग्रन्थ क्षीर का कुंड है, मन भांड़ा का रूप ।
चित्त मथानी हाथ ले, माखन मिले अनूप ॥५॥
क्षीर नीर का मेल है, जग का द्वन्द पसार ।
उत्तम क्षीर से काम है, हंस करे निरवार ॥६॥
मान सरोवर के निकट, रहे हंस की पांत ।
जो कोई आवे भाव से, बख्शे क्षीर की दात ॥७॥
परमहंस के दरस से, उपजे निर्मल ज्ञान ।
काग हंस पहिचान कर, तज आपा मद मान ॥८॥
परमहंस गुरु रूप है, काग रूप संसार ।
काग रूप को जो तजे, सोई साध विचार ॥९॥

(१७४-६०४)

गुरु के मत में आय कर, गुरु मत ले पहिचान ।
वह अवसर और यह समय, बहुर न देखे आन ॥१॥
गुरु मत गुरु भेदी लखे, तासों मन पतियाय ।
पढ़ा लिखा जाना बहुत, यह नहीं ठीक उपाय ॥२॥
नाम तो तेरे घट बसे, नाम से लौ रहे लाग ।
घट का परदा खोल दे, पावे पूरन भाग ॥३॥
आज कहे मैं काल करूँगा, गुरु मूरति का ध्यान ।
काल काल के करत ही, पहुँचा काल निदान ॥४॥

एक घड़ी में जग नसे, छोड़ काल का भर्म।
जो करना हो आज कर, समझ गुरु का मर्म ॥५॥
काल काल तू मत करे, काल का नहीं ठिकान।
जो चाहे सो आज कर, लेकर गुरु का ज्ञान ॥६॥

(१७५-६०५)

गुरु भक्ति दृढ़ कर भाई। तेरी बनत बनत बन जाई ॥
गुरु विराजे मन में। गुरु भाव बसे तेरे तन में ॥
गुरु शब्द रहे श्रवन में। गुरु छवि रहे नित चितवन में ॥
गुरु नाम की टेक संभारो। गुरु मूरति हृदय धारो ॥
गुरु का जस निसदिन गाओ। गुरु से लौ अपनी लगाओ ॥

दोहा सांस सांस पर गुरु कहो, प्रगटे ज्ञान विवेक।
द्वैत भाव मेटो सकल, सिष गुरु मिल रहे एक ॥

बाहर भीतर एक समान। गुरु तन मन गुरु जान और प्रान ॥
गुरु के रंग रंगे तन चोला। सो गुरु मुख जग में अनमोला ॥
गुरु मय जगत रूप जब भासे। तब अज्ञान अविद्या नासे ॥
तिमिर मिटे घट होय प्रकासा। गुरु मुख गुरु का निज कर दासा ॥
माया मोह का बन्धन छूटे। सो गुरु मुख परमारथ लूटे ॥

दोहा हर्ष शोक व्यापे नहीं, सम दृष्टि चित होय।
जाकी ऐसी रहन है, सच्चा सेवक सोय ॥

कर्म करे करता नहीं होय। धर्म धरे धरता नहीं होय ॥
बन्ध में मुक्त मुक्ति में बंधा। जो ऐसा नहीं सो नर अंधा ॥
काज बने नहीं होय अकाज। साजे प्रेम भक्ति का साज ॥
मन से सुरत रहे अलगान। यही विवेक यही निर्मल ज्ञान ॥
गुरु का रहे निरंतर ध्यान। गुरु बल पाय शिष्य बलवान ॥

दोहा गुरु बल कर्म नसाइये, गुरु बल काटिये फंद।
गुरु के बल से साधुवा, छूट जाय जग द्वन्द ॥

राधास्वामी राधास्वामी राधास्वामी ।
राधास्वामी चरन कोटि परनामी ॥
राधास्वामी राधास्वामी राधास्वामी ।
राधास्वामी घट घट अन्तरयामी ॥
राधास्वामी राधास्वामी राधास्वामी ।
राधास्वामी पद में मिले बिसरामी ॥
राधास्वामी राधास्वामी राधास्वामी ।
राधास्वामी दया उबरे खल कामी ।
राधास्वामी राधास्वामी राधास्वामी ।
राधास्वामी भजे नर आठों जामी ॥

दोहा राधास्वामी गुरु का रूप है, राधास्वामी निज धाम ।
राधास्वामी चरन में, कोटि कोटि परनाम ॥

सहसकँवल धुन राधास्वामी । त्रिकुटी ओं गुन राधास्वामी ॥
राधास्वामी सुन्न मंडल धुन ररंग । राधास्वामी महासुन्न सुन ररंग ॥
भँवर गुफा मुरली राधास्वामी । सतपद चढ़ धुर ली राधास्वामी ॥
राधास्वामी अलख अपार अरूप । राधास्वामी अगम अथाह अनूप ॥
राधास्वामी धाम है राधास्वामी । राधास्वामी नाम है राधास्वामी ॥

दोहा राधास्वामी लच्च पद, राधास्वामी वाच ।
राधास्वामी इष्ट है, राधास्वामी सांच ॥

[१७६-६०६]

सुरत रहे राधास्वामी चरननमें, देह बसे संसारा ।
करम करे करता नहीं सेवक, अंतर सबसे नियारा ॥१॥
अहंकार की दुर्मति खो, छांड़े मूल विकारा ।
ऐसा सेवक जो कोई सांचा, सो सतगुरु का प्यारा ॥२॥
सेवक करे सहज सेवकाई, जगत अविद्या नासे ।
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी, घट में सूर प्रकासे ॥३॥

(१७७-६०७)

सोरठा धन्य धन्य गुरु देव, कृपा सिंध पूरन धनी।
चित से करूँ नित सेव, मेट जगत की वासना॥

दोहे जाहि एति कहें सकल मुनि, नेति नेति कहे वेद।
गुरु की दया अपार से, पूरन मिला सुभेद॥१॥
ज्ञान समुंदर अथाह अति, सूझे वार न पार।
सुर नर मुनि सब बून्द जिमि, उठें लहर अपार॥२॥
भेद भाव सब मिट गया, दरसा अचल अभेद।
नहीं जगत नहीं करम गति, नहीं विकार नहीं खेद॥३॥
साध संग सतगुरु दया, समझ पड़ा निज रूप।
जब रूप की गम नहीं, तब लग रहे भव कूप॥४॥
आस गई मंसा गई, गया जगत का द्वन्द।
राधास्वामी गुरु की मेहर से, छूटा भव भ्रम फन्द॥५॥

सोरठा परम तत्व गुरु आप हैं, आपहि ज्ञान विवेक।
कहीं गुप्त कहीं प्रगट होय, परखावें पद एक॥

॥ छन्द ॥

गुरु एक अनादि अनंत महा। पदकमल में आन के शरन गहा॥
तू श्रेष्ठ है श्रेष्ठ बना मुझको। निज भक्ति का पंथ दिखा मुझको॥
तेरा रूप है ज्ञान तो ज्ञान मिले। तेरे चरन सरोज का ध्यान लगे॥
अविनासी है तू सुखरासी है। तू घट घट का गुरु बासी है॥
तू बिश्वम्भर जगदाधारी। सुर नर मुनि सबका हितकारी॥
मेरे मन से दूर मद मान रहे। मुझे सदा तेरा ही ध्यान रहे॥
सबके प्रानों का प्यारा है तू। दे प्रेम जो प्रेम की खान है तू॥
घट तिमिर मिटे कर उजियारी। तेरे चरन शरन की बलिहारी॥
राधास्वामी देवन के देवा। करूँ हित से सदा तेरी सेवा॥

॥ चौपाई ॥

(१७८-६०८)

मैं सेवक सतगुरु राधास्वामी । बार बार उन चरन नमामी ॥
मैं पापी राधास्वामी पुनीता । मैं माया बस स्वामी अतीता ॥
चरन शरन की ओट गही जब । दुख दरिद्र सब लोप हुये तब ॥
मैं तो किरन राधास्वामी भानु सम । राधास्वामी से अब पाऊँ शम दम
शम दम पाय जो करूँ पयाना । सूझे सहज ही पद निरवाना ॥
राधास्वामी सतगुरु कमल समान । मैं भँवरा अचेत अज्ञान ॥
राधास्वामी सिंध बूँद मेरा रूप । मैं सकार राधास्वामी अरूप ॥

दोहा मैं तो कीट महान हूं, राधास्वामी भृंगी जान ।
राधास्वामी की दया, पाऊँ भक्ति दान ॥

॥ चौपाई ॥

नहीं विवेक नहीं मन चतुराई । नहीं विद्या नहीं बल प्रभुताई ॥
धन सम्पति तज गुरु को सुमिरूँ । गुरु की कृपा सिंध भव उतरूँ ॥
सिद्धि शक्ति गुरु नाम रहाई । ले यह समझ करूँ सेवकाई ॥
नाम न बिसरूँ बिसरूँ तन मन । एक रूप लखूँ घर परबत बन ॥
पल पल रटूँ नाम अविनासी । काटूँ माया जम की फांसी ॥
गुरु मेरे समरथ पुरुष बिधाता । गुरु के चरन में मन मेरा राता ॥
रात दिवस रहे गुरु का ध्याना । यही मांगूँ गुरु से बरदाना ॥

दोहा गुरू गुरू पल पल जपूँ, राधास्वामी के गुन गाय ।
अब कुछ मुझको भय नहीं, सतगुरु हुये सहाय ॥
राधास्वामी सतगुरु, दया दृष्टि से देख ।
छुटकारा प्रभु दीजिये, छूटे जगत विसेख ॥
तुम दाता मैं दीन हूं, आया गुरु दरबार ।
शरनागत की लाज को, रख लीजे दातार ॥

अब आरत पूरन भई, मन पाया विस्राम ।
राधास्वामी चरन पर, कोटि कोटि परनाम ॥

(१७९-६०९)

दोहा प्रीतम छबि नयनों बसी, भावे नहीं संसार ।
सार असार की सुध नहीं, मन चाहे दीदार ॥

॥ चौपाई ॥

रंग रंग में रंग रंगीला । सब रंगों में उसकी लीला ॥
गुप्त प्रगट में व्यापा सोई । प्रीतम बिन कोई और न होई ॥
जहां देखूँ तहां पिया का रूप । जहां सुनूँ पिया शब्द अनूप ॥
भोग बासना सब कुछ त्यागी । मैं हूं प्रीतम छबि अनुरागी ॥
रोम रोम पिया करे निवास । घट में प्रगटा प्रेम बिलास ॥

दोहा जा हृदय प्रीतम बसे, प्रीत रीत अधिकाय ।
मन राता पिउ रंग में, माँगे मुक्ति बलाय ॥

॥ दोहे ॥

(१८०-६१०)

गुरु सम दाता कोई नहीं, गुरु है दीन दयाल ।
गुरु के चरन सरोज लग, ऋषि मुनि भये निहाल ॥१॥
मुक्ति पदारथ तब मिलें, जब गुरु होय सहाय ॥
बिन गुरु भक्ति फन्द जम, कभी न काटा जाय ॥२॥
गुरु के चरन सरोज में, कोटि कोटि दंडौत ।
गुरु की दया अपार से, छूटें भव के खोट ॥३॥
तीन ताप के भँवर में, बूड़े बारम्बार ।
गुरु समरथ ने दया की, बूड़त लिया निकार ॥४॥
गुरु समान दाता नहीं, गुरु समान नहीं देव ।
गुरु की पल पल बंदना, निसदिन कीजे सेव ॥५॥

गुरु आज्ञा में चालिये, तन मन सीस झुकाय।
काल कर्म से बचन का, और न कोई उपाय ॥६॥
गुरु से कुछ मांगूँ नहीं, मांगूँ उनसे यह।
राधास्वामी दया करो, कर चरनन की खेह ॥७॥

(१८१-६११)

आज घड़ी मंगल सुखदायक। सतगुरु पूरे भये हैं सहायक ॥
घट में सूर हुआ उजियारा। दूर मिटा सब तिमिर विकारा ॥
सुख आनन्द की शोभा भारी। देखत देखत लागी तारी ॥
अनहद राग की धुन सुन पाई। हर्ष हर्ष सूरत मुसकाई ॥
कँवल खिले भँवरा मंडलाया। बास सुबास पाय ललचाया ॥
अद्भुत लीला बरन न जाई। मन बानी रहे दोउ अलसाई ॥
लय चिंतन का मर्म पिछाना। पिया अमी रस हुआ मस्ताना ॥
झांकी निरखी अगम अनूप। रूपवान से हुआ अरूप ॥
रेखा रूप रंग सब त्यागा। सहजहि हंस बना है कागा ॥
मान सरोवर किया असनान। सुन्न गुरु का लागा ध्यान ॥
दुर्गम घाटी शिला अपार। गुरु बल पाय किये सब पार ॥
बीन बांसरी उत्तम बाजा। सुन सुन धुन सोया मन जागा ॥
राधास्वामी चरन पाय विसराम। मेटा देवासुर संग्राम ॥

दोहा गुरु मूरत हृदय बसी, उपजा निर्मल ज्ञान।
जाको ढूँढत मैं फिरा, सो अब प्रगटा आन ॥

(१८२ ६१२)

मैं चकोर तुम चन्द्र स्वरूपा। रंक दुखी मैं तुम प्रभु भूपा ॥
मैं मछली तुम सुख के सागर। मैं औगुनी तुम सब गुन आगर ॥
मैं भँवरा तुम कमल समान। वास सुबास पाय हर्षान ॥
मैं पतिंग तुम दीप स्वरूप। मैं घट तुम निर्मल जल कूप ॥
मैं पतंग तुम डोर हो स्वामी। मैं अन्तर तुम अन्तर्यामी ॥

मैं लहरी तुम सिंध अपार । कहां तुम्हारा वारा पार ॥
बुन्द रूप मैं तुम सत गंग । कभी न छोड़ूँ गुरु का संग ॥
प्रेम रंग से रहूं रंगानी । निसदिन चरन कमल लिपटानी ॥
पपीहा की गति भई हमारी । स्वान्ति बूँद तुम चित में धारी ॥

दोहा सेवा पूजा बंदना, नहीं कुछ जाने दास ।
सबकी आशा त्याग दी, धर गुरु चरनन आस ॥

[१८३-६१३]

आप ही आप आप तुम आये । आपहि आप निज भेद सुनाये ॥
आप आप को आप बताया । दुखित जीव पर कीन्ही दाया ॥
अलख लखाय लच्च जब दीन्हा । तुम ही निरख लख तुम ही चीन्हा
मुक्ति बंध का संशय त्यागा । अब गुरु चरन रहूं नित जागा ॥
अभय पाय भय दुर्मति भागे । निर्भय होय गुरु चरनन लागे ॥
नाम रतन निर्धन जब पाया । धनी भया घर निज धन आया ॥

दोहा एक तुम्हारी चाह हैं, गुरु देवन के देव ।
मुझसे बन आवे नहीं, भक्ति भाव पद सेव ॥

(१८४-६१४)

राधास्वामी राधास्वामी रटत रहूं नित ।
राधास्वामी राधास्वामी भजत रहूं नित ॥
राधास्वामी राधास्वामी छिन छिन गाऊँ ।
राधास्वामी राधास्वामी पल पल ध्याऊँ ॥
राधास्वामी राधास्वामी चित्त बसाऊँ ।
राधास्वामी राधास्वामी सदा मनाऊँ ॥
राधास्वामी राधास्वामी और न दूजा ।
राधास्वामी राधास्वामी धारूँ पूजा ॥
राधास्वामी राधास्वामी देखूँ अन्तर ।
राधास्वामी राधास्वामी निरखूँ बाहर ॥

दोहा भीतर बाहर एक रस, गुरु का दरसा रूप ।
राधास्वामी जब उर में बसे, पड़ूँ न भव जल कूप ॥

(१८५-६१५)

उगमा प्रेम न मन ठहराये । गुरु आप प्रीतम बन आये ॥
प्रेम पन्थ की डगर दिखाई । प्रेम नगर की राह बताई ॥
सुरत शब्द का भेद अनूप । बख्श दिखाया अपना रूप ॥
रूप दिखाय लिया अपनाई । छूट गया जग अगमापाई ॥
चरन ओट में दिया ठिकाना । शरन पाय मन अति विगसाना ॥

दोहा रात दिवस बिसरूँ नहीं, जिभ्या रह गुरु नाम ।
राधास्वामी चरन में, कोटि कोटि परनाम ॥

(१८६-६१६)

दोहा निराकार साकार तुम, अगुन सगुन के मांह ।
घट में घट घट रूप हो, अघट सघट फिर नांह ॥

॥ चौपाई ॥

गुरु जग में कल्यान स्वरूप । अगम अगोचर अमल अरूप ॥
ब्रह्मा विष्णु शक्ति महि देवा । सुर नर मुनि करते मिल सेवा ॥
भानु समान प्रकास प्रकासा । प्राण प्राण गत स्वांस में स्वांसा ॥
व्यापक यक रस सहज उदासी । समदर्शी अन्तर उर बासी ॥
कोई न जाने गुरु का भेद । थक रहे ज्ञानी ध्यानी वेद ॥
आप चितावे आप लखावे । आप सैन दे मर्म बतावे ॥
कीट भृंगी गति गुरु उपदेस । नीर मीन सम गुरु संदेस ॥
दोहा पारस से लोहा मिले, कंचन छिन में होय ।
सतगुरु से सेवक मिले, सन्त रूप कहो सोय ॥
चरन कमल की बंदना, निसदिन आठों याम ।
गुरुके पद में सब बसे, सत्त नाम सतधाम ॥

साखी (१८७-६१७)

साधन तो गुरु नाम है, और काम बेकाम ।
साधन ही से पाइये, सत जीवन सत धाम ॥१॥
साधन सुगम सुहेल है, जो कोई जाने साध ।
साधु जो साधन करे, बिन साधन जग व्याध ॥२॥
साधन कीजे शब्द का, कान आंख मुख बन्द ।
शब्द योग के जतन से, कटे द्वन्द का फन्द ॥३॥
बाहर पट दे नन्दुआ, अन्तर के पट खोल ।
साधन कर नित शब्द का, मुख से कछु न बोल ॥४॥
यह तो उत्तम योग है, और योग हैं रोग ।
शब्द योग योगी बने, और योग सब सोग ॥५॥
योग यतन से पाइये, साहेब का दीदार ।
बिना यतन नहीं कुछ बने, परमारथ व्यौहार ॥६॥
नाम तेरे अन्तर बसे, ता संग धार पियार ।
कान आंख मुंह बन्द कर, सुन अनहद गुंजार ॥७॥
और यतन सब कठिन है, शब्द यतन है सहल ।
यह तो फल तत्काल है, और यतन निष्फल ॥८॥

[१८८-६१८]

जब लग पिया से मेल नहीं, कैसे जागे भाग ।
भाग जगे और मेल हो, तब पूरन होय सुहाग ॥१॥
पिया की प्यारी हो गई, कर कर प्रेम पियार ।
पिया मेरा मैं पिया की, झूठा जग व्यौहार ॥२॥
पिया को ढूँढन मैं चली, चित धर प्रेम की प्यास ।
प्रेम बूँद जब मिल गया, पिया नित मेरे पास ॥३॥
पिया पिया मैं क्या करूँ, पिया प्रेम का नीर ।
पिया से लग पिया की हुई, पिया पिया व्याप शरीर ॥४॥

पिया मेरा मैं पिया की, किससे पूछूँ जाय।
मैं पिया से न्यारी नहीं, पिया जो प्रेम अघाय ॥५॥
पिया पिया करते पिया, भई पिया में धरनि अकास।
पिया मुझमें मैं पिया में, चित क्यों होय उदास ॥६॥
राधास्वामी की दया, पिया से भया संजोग।
गुरु मिले अच्छी भई, सीख शब्द का जोग ॥७॥

[१८६-६१६]

बात बनाना सुगम है, बाचक ज्ञान सहल।
अपनी आंखों देखना, यही बात मुश्किल ॥१॥
पुस्तक लेखी क्या कहे, अपनी आंखों देख।
अनुभव गम नर जब लहे, कटे करम की रेख ॥२॥
शब्द बिना अनुभव नहीं, अनुभव शब्द के साथ।
अनुभव का घर दूर है, अनुभव कीजे हाथ ॥३॥
साधन बिन साधु नहीं, साधन बिन नहीं साध।
बिन साधे अनुभव कहाँ, लगे सार नहीं हाथ ॥४॥
अपनी आंखों देखिये, अपने हृदय विचार।
निज घट में जो शब्द है, ताकी गहले धार ॥५॥
गुरु की वाणी जब सुने, मन में करे विचार।
शब्द डोर को पकड़कर, पहुँचे शब्द के द्वार ॥६॥

(१६०-६२०)

बिन गुरु ज्ञान विवेक न होई। गुरु बिन पन्थ न चाले कोई ॥
गुरु से लेना नाम रसायन। घट से भागे शंका डायन ॥
मन परतीत गुरु की लाओ। गुरु मिले तब भक्ति कमाओ ॥
गुरु बिन काम करो नहिं भाई। गुरु चरनन पर बल बल जाई ॥
राखे मन में गुरु प्रतीती। हो सुख सकल कामना जीती।

गुरु हैं दाता गुरु हैं दानी। गुरु आराधो छिन छिन प्रानी ॥
गुरु समान नहीं कोई रच्छक। कुल कुटम्ब सब जानो तच्छक ॥
सत्त नाम सत पुरुष गुरु हैं। अलख अगम राधास्वामी गुरु हैं ॥
गुरु की कीजे हरदम पूजा। गुरु समान कोई देव न दूजा ॥
गुरु चरनन पर बल बल जाऊँ। आठ पहर गुरु का यश गाऊँ ॥
गुरु को सुमिरूँ गुरु को ध्याऊँ। माथे गुरुपद रज को लगाऊँ ॥
गुरु ने गुप्त भेद दिया दान। गुरु ने सार बताया ज्ञान ॥
गुरु ने अलख वस्तु लखवाया। गुरु ने अगम रूप दरसाया ॥
जब लग नहीं गुरु भक्ति दृढ़ानी। तब लग निसदिन रहे अज्ञानी ॥
रात अन्धेरी आंख न सूझे। केहि विधि प्रेमी गुरु पद बूझे ॥
गुरु मिले गुरु पद दरसाया। आंख खुली अंधकार हटाया ॥
तेज पुंज का भया प्रकास। ज्ञान सूर ने किया उजास ॥
घन घमंड अज्ञान समान। जुड़ मिल अंधकार किया आन ॥
ज्ञान सूर गुरु बचन प्रकासा। देखत सकल अविद्या नासा ॥
सत्त सत्त का सत प्रगटाया। आतम परमातम दरसाया ॥
घट में प्रगटा सत का नूर। बाजे निसदिन अनहद तूर ॥

[१६१-६२१]

राधास्वामी समरथ दीन दयाला। काटें दुख कष्ट जंजाला।
राधास्वामी राधास्वामी छिनछिन गाऊँ। भूल भरम मन तनकि न लाऊँ
राधास्वामी कृपा दृष्टि जब करें। दुख क्लेश आपत सब हरें ॥
राधास्वामी दया करें निस वासर। हाथ कृपा का धारें सिर पर ॥
मौज निहार चलो दिन रात। राधास्वामी चरन में चित्त बसात ॥
सुमिरन ध्यान भजन नहीं त्यागे। प्रेम प्रीत रस निसदिन पागे ॥
दुख सुख हर्ष शोक में समता। धारूँ चरन कमल मन रमता ॥

(१६२-६२२)

जीव चितावन आये राधास्वामी। बार बार तिन चरन नमामी॥
जीव शरन गह ले उपदेशा। सहजहि जावे सतगुरु देसा।
जहां नहीं काल करम नहीं माया। नहीं जहां गगन अकास न छाया
बिन जल पड़े बूँद जहां भारी। नहीं तीखा मीठा नहीं खारी॥
बिन बादल जहाँ बिजली चमके। बिना चन्द्र रवि जोती चमके॥

दोहा वेद कतेब की गम नहीं, सो है गुरु दरबार।
राधास्वामी की दया, मेटे द्वन्द असार॥

नहीं वहां कर्म न धर्म कहानी। नहीं वहां सुख दुख लाभ न हानी॥
गूँगा बोले मधुरी बानी। पिंगला चढ़े शैल निरबानी॥
आवागवन का संशय मेटे। सुन्न समाध में निसदिन लेटे॥
देखे अद्भुत बिमल बिलासा। निरखे अचरज अजब तमासा॥
ऋतु बसंत चहु दिस रही छाई। कमल खिले बरसा झर लाई॥

दोहा बिना पन्थ की गैल है, बिन बस्ती का देस।
बिना नैन दृष्टा बने, यह सतगुरु उपदेस॥

हैरत हैरत हैरत होई। हैरत रूप धरा पुनि सोई॥
रंग रूप रेखा से न्यारा। बिन घोड़े वाहन असवारा॥
जा पर कृपा गुरु की होई। सत परमारथ पावे सोई॥
निराकार निरदेव निरूपम। अगम अलख अद्वैत अनूपम॥
सोई गुरु का रूप कहावे। बिन गुर दया समझ नहीं आवे॥

दोहा यह मत अगम अगाध है, क्या कोई बरने आय।
कोई गुरमुख गति पावही, गुर जब होंय सहाय॥

जीव दुखित बिलपे दिन राती। माया हृदया दया न आती॥
काल करम का विकट पसारा। कौन जीव को देय सहारा॥
बार बार भरने चौरासी। काल गजे बिच डाली फांसी॥

कोइ विद्या पढ़ हुये दिवाने । कोई ज्ञान मत रहे लुभाने ॥
कोई तीरथ कोई बरत उपासा । कोई नेमी कोई रहे उदासा ॥

दोहा सार न पाया भक्ति का, प्रेम प्रीत की रीत ।
काल निर्दई मारिया, यम किसका है मीत ॥

तब राधास्वामी दया उमगाई । धर गुरु रूप दिया शरनाई ॥
मन में राखा दृढ़ विश्वासा । गुरु मेरे पूर करें सब आसा ॥
मान न मागूँ नहीं धन दामा । मागूँ चरन शरन सतनामा ॥
जीव काज तुम जग में आये । निराकार बन रूप दिखाये ॥
इष्ट दिया ऊँचा और भारी । तुम हो बन्धु मित्र हितकारी ॥

दोहा गुरु पद में यही बन्दना, जीवहि लियो चिताय ।
राधास्वामी की दया, फँसे न अब भव आय ॥

(१६३-६२३)

मंगल गुरु का नाम है, गुरु मंगल की खान ।
मंगल गुरु के नाम में, नाम है मंगल दान ॥१॥
मंगल नाम धराय कर, तजा अमंगल भाव ।
निसदिन गुरु का नाम लो, यही है पक्का दाव ॥२॥
जा दिन गुरु दर्शन भया, कटा पाप का फंद ।
द्वन्द जाल को मेटकर, रहो सदा निर्द्वन्द ॥३॥
तुम क्यों पड़े हो भूल में, भूल है दुख अज्ञान ।
गुरु का लेकर आसरा, तजो मोह मद मान ॥४॥
मंगलमय मंगल सदन, मंगल चारों ओर ।
नाम जपो राधास्वामी का, लो सतपद में ठौर ॥५॥

[१६४-६२४]

बिन गुरु ज्ञान ध्यान नहीं आवें । गुर मिले तब भेद बतावें ॥
करम धरम डारे बहु फन्दा । बिन विवेक नहीं मिले वितंडा ॥
याते गुर चरनन चित लाओ । तब निज पद का भेद खुलाओ ॥

गुरु के चरन शरन बलिहारी। गुरु की दया सब पतित उद्धारी ॥
गुरु मिले छूटे त्रय तापा। गुरु ज्ञान से सूझे आपा ॥

(१९५-६२५)

गुरु गुरु मैं निस दिन गाता। गुरु के चरन रहे मन राता ॥
गुरु मेरे समरथ दीन दयाला। गुरु परहित गुरु हैं प्रतिपाला ॥
गुरु ब्रह्मा गुरु बिष्णु महेशा। गुरु नारद सारद गुरु शेषा ॥
गुरु नाम गुरु नाम आधारा। गुरु वार गुरु भव के पारा ॥
गुरु समुद्र शशि गुरु सुखरासी। गुरु व्यापक गुरु घट घट बासी ॥
गुरु सत चित आनंद की खानी। गुरु हैं दाता गुरु हैं दानी ॥
गुरु प्रकाश गुरु भानु महाना। गुरु समुद्र गुरु बुन्द समाना ॥

दोहा गुरु महिमा अति अगम है, गुरु का वार न पार।
जित देखूँ गुरु दृष्टि में, गुरु हैं सबके सार ॥

[१९६-६२६]

आस करो गुरु चरन की, त्याग जगत की आस।
जो कोई ऐसा दास है, कभी न होय निरास ॥१॥
गुरु समरथ की बंदगी, निस दिन आठों याम।
जो कोई यह साधन करे, ताहि मिले निज नाम ॥२॥
चिंता कीजे गुरु की, चिंता और भुलाय।
एक दिन ऐसा होयगा, बनत बनत बन जाय ॥३॥

(१९७-६२७)

जिन डरप्यो सुन्दर बरनारी। गुरु सब भांति करे उपकारी ॥
प्रेम प्रीत की रीत सुहाई। घिरहु छांड़ छल अरु कदराई ॥
भक्तिभाव हित चित्त लगावहु। अछत शरीर मुक्ति फल पावहु ॥
जा पर दया गुरू की होई। जग में भाग्यवान नर सोई ॥
कष्ट कलेश पास नहीं आवे। हंसा एक दिन निज घर जावे ॥

दोहा राधास्वामी चित्त धर, मन में राखो धीर।
समरथ सतगुरु दीन हित, सहज मिटावें पीर ॥

(१९८-६२८)

सतगुरु कहें भेद दरसाई। मारग घर का दीन बताई ॥
प्रथम शरन गहो सतगुरु की। द्वितीया शरन गहो सतसंग की
गुरु जो भेद बताऔं तुमको। धारो बचन कमाओ उनको ॥
तन मन इन्द्री सुरत समेटो। चढ़ आकाश शब्द गुरु भेंटो ॥
सुनो नित्य तुम अनहद बानी। देखो अद्‌भुत जोत निशानी ॥
जोत फाड़कर सुन्न समाओ। सुखमन होय बंक में आओ ॥
बंक पार त्रिकुटी सुन गीत। काल कर्म दोऊ लेना जीत ॥
सुन्न शिखर चढ़ी सूरत धूम। मानसरोवर पहुँची झूम।
महासुन्न जहां अति अँधियार। गुप्त चार धुन बानी सार ॥
भँवरगुफा जाय लीना चीन्ह। आगे सत्त लोक चढ़ लीन ॥
अलख अगम को जाकर परसा। शब्द पकड़ लें सूरत सरसा ॥
राधास्वामी नगर निहारा। देखा जाय अगर उजियारा ॥

(१९९-६२९)

गुरु पद परस करो अभ्यास। घट में देखो बिमल उजास ॥
सहसकमलदल सुरत चढ़ाओ। घंटा शंख धुन सुन घट आओ
निरखो अन्दर गुरु का नूर। बाजे अन्दर अनहद तूर ॥
सुन सुन तूर हुआ मन सूरा। त्रिकुटी जाय पाया गुरु पूरा ॥
सुरत ने पाया मूल कलाम। ओंकार पद का वह ठाम ॥
मेघनाद जहाँ बजत मृदंग। सुन सुन सुरत होरही दंग ॥
कुछ दिन ऐसी लीला देखो। आगे का फिर करो परेखो ॥
सुन्न मंडल में गाड़ा थाना। अजब देश अद्‌भुत मैदाना ॥
मानसरोवर किया असनान। निर्मल हुई सुरत हंस समान ॥
छीर नीर का किया निबेरा। गढ़ कैलाश किया चढ़ डेरा ॥
गंग जमन सरस्वती की धार। देखी घट में बिमल बहार ॥
नहाय धोय सूरत मुसकानी। किंगरी सारंगी सुनली बानी ॥

ठुमक ठुमक आगे को चाली । सुरत जमाई हुई जलाली ॥
भँवरगुफा का परवत देखा । सोहंग पुरुष का पाया लेखा ॥
सोहंग सोहंग बन्सी बाजी । सुन सुन सूरत मन में गाजी ॥
मधुबन में बन्सी की धूम । देख रास लीला गई झूम ॥
झूम झूम हुई अति मस्तानी । देह गेह की सुद्धि भुलानी ॥
तब सतपद में आन विराजी । साज भक्ति का अनुपम साजी ॥
बीन सुनी सत धाम ठिकान । सतपद देखा मगन मन मान ॥
सत्यम् सत्यम् उठी अवाजा । कहो आये तुम यहां केहि काजा ॥
बोली सुरत प्रेम हुलसाई । काल करम माया दुखदाई ॥
तीन ताप से अति घबरानी । गुर की दया पाई सहदानी ॥
लेकर भेद यहाँ चलि आई । दया पात्र होय शरन समाई ॥
सचखंड अलख अगम तब दरसा । राधास्वामी चरन कमल तब परसा
सुरत सहेली भई निरवानी । अब क्या कहूं यह अकथ कहानी ॥

॥ उपदेश ॥

(२००-६३०)

पहिले करो सहसदल बासा । फिर त्रिकुटी का विमल बिलासा ॥
सुन्न महासुन्न तारी लागी । तब सोई सूरत कुछ जागी ॥
भँवरगुफा चढ़ माया त्यागो । सत्त पुरुष के चरनन लागो ॥
भेद पाय ओम् पद आओ । तब तिस पद का मर्म कुछ पाओ
जो कोई इतने ऊँचे चढ़े । रूप रंग रेखा से टरे ॥
सहसकमल पहिला स्थान । जोति निरंजन रूप लखान ॥
अद्‌भुत लीला अचरज खेल । शिव शक्ती ने कीना मेल ॥
प्रगटी जोत जोत में जोती । अद्‌भुत हीरे पन्ने मोती ॥
रंग रंग के फूल खिलाने । चहुँदिस भँवर झुण्ड मँडलाने ॥

श्याम कंज फुलवारी शोभा। देख देख मन अति कर छोभा।
घंटा शंख की धुन सुन पाई। सुन सुन धुन सूरत मुसकाई ॥
ताहि छोड़ आगे को बढ़ी। त्रिकुटी छोड़ आगे को चढ़ी ॥

[२०१-६३१]

मन मन्दिर में बैठो आय। निज मन दरपन रूप लखाय ॥
सहसवृत्ति से सहसकमल में। कुछ दिन बसो तुम उसी महल में
तज उसको त्रिकुटी में जाओ। त्रिपुटीवाद में चित्त लगाओ ॥
इसके ऊपर सुन्न अस्थान। पुरुष प्रकृति जहां खेलें आन ॥
यह पद द्वैत भाव सुन लीजे। माया ब्रह्म के गुन गुन लीजे ॥
दो वृत्ति को तज दो भाई। भँवरगुफा चढ़ सतपद जाई ॥
सत में रूप अनूप तुन्हारा। वह है सुरत शब्द का सारा ॥
एक एक ताहि सन्त बखाना। तहां विचार का नहीं ठिकाना ॥
अगम अलख के पार सुनाई। नहीं वह एक न दो है भाई ॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी। जिन यह बचन सुनाया पुकारी

(२०२-६३२)

विद्या बुद्धि चतुरता, शास्त्र पुराण अनेक ॥
इन सबको तुम परिहरो, जो नहीं समझे एक।
बाद विवाद हिये दुख घना, तासों कुछ नहीं होय।
तज इनको जो हरि भजे, भक्त कहावे सोय ॥२॥
ना सुख विद्या बुद्धि में, ना सुख वाद विवाद।
सुखदायक गुरु भक्ति है, सुरत भई बिस्माध ॥३॥

[२०३-६३३]

निंदा कबहु न कीजिये, निंदा अघ की खान।
निंदा से उपजे सभी, कलह कलेश महान ॥१॥
मन दर्पन के बीच में, पर निंदा की छार।
निर्मलता पल में गई, भर गई धूल विकार ॥२॥

अपने आपको देखिये, औरन सों क्या काम।
अपने देखे गुन लहे, औरन औगुन ठाम ॥३॥
हँस हँस दोष न देखिये, मन घट अगम अनूप।
जो या में निंदा भरे, तत छिन होये कूप ॥४॥
साध बड़े परमारथी, गुन गह औगुन त्याग।
जो कोई औगुन को गहे, सो मतिमंद अभाग ॥५॥
भँवरा बैठा फूल पर, लेइ सुगंध सुवास।
मक्खी विष्टा पर उड़ी, पाय कुगंध कुवास ॥६॥
जो तू गुरु का दास है, होजा गुरु का वच्छ।
दूध सार सब खींच ले, छोड़ रक्त का पच्छ ॥
शब्द सार टकसाल है, समझ शब्द का सार।
साधू माखन चाखिया, छाछ पिये संसार ॥८॥
अपनी निंदा कीजिये, पर निंदा से लाज।
निज निंदा कारज बने, और से होय अकाज ॥९॥
ब्रह्मा ने यह जग रचा, अमृत जहर मिलाय।
अमृत देव का खाज है, असुर जहर नित खाय ॥१०॥
निंदक तो हिंसक भया, हिंसा करे उपाव।
जिभ्या की तलवार से, सदा कलेजे घाव ॥११॥
जो तू गुरु का सेवका, निंदा दोष भुलाव।
जो कोई पर निंदा करे, पड़े न पूरा दाव ॥१२॥
गुन ग्राही कोई संतजन, औगुन ग्राही असाध।
दोष पराया ना लखे, ताका मता अगाध ॥१३॥
निज निंदा सुन हरखिये, कर निंदक सन्मान।
बिन साबुन पानी बिना, शुद्ध करे मन आन ॥१४॥
निंदक सांचा मीत है, जीवे आदि जुगाद।
निंदा सुन हमने तजा, मन का विषम विषाद ॥१५॥

निज निंदा से जो डरे, सो नहीं सांचा भक्त ।
सुन सुन निंदा आपनी, तजे दोष का जग्त ॥१६॥
गुरू टेक दृढ़ कीजिये, सुन निंदा के बैन ।
जो कोई निज निंदा सहे, मन उपजे सुख चैन ॥१७॥
निंदक तों निंदा करे, हम निंदक को प्यार ।
सुनकर निंदा आपनी, त्यागा मूल विकार ॥१८॥
गुरुमत गुरु का दास है, निंदक मनमत होय ।
निंदक के प्रसाद से, दुर्मति गई सब खोय ॥१९॥
गुरु से नित यह माँग हूं, औगुन तजूँ बनाय ।
गुन दृष्टि पर गुन लहूं, राधास्वामी गुन नित गाय ॥२०॥

(२०४-६३४)

गुरु की कीजे बन्दना, कोटि कोटि दिन रात ।
गुरु कृपा से साधुवा, पाये अद्भुत दात ॥१॥
गुरु की कीजे बन्दना, निस दिन निस्सन्देह ।
गुरु कृपा से साधुवा, पावे उत्तम देह ॥२॥
गुरु को कीजे बन्दना, श्रद्धा भक्ति समेत ।
गुरु कृपा से साधुवा, जीते भव का खेत ॥३॥
गुरु की कीजे बन्दगी, रहिये आज्ञा माहिं ।
गुरु कृपा से साधुवा, तीन लोक भय नाहिं ॥४॥
गुरु मिले तब जानिये, कटे काल का फन्द ।
हिय अन्तर बिच ऊगवीं, कोटिन सूरज चन्द ॥५॥
गुरु मिले तब जानिये, छूट जांय त्रय ताप ।
सुख दुख एक समान हो, हृदय शोक नहीं व्याप ॥६॥
गुरु मिले तब जानिये, सूझे अगम अपार ।
दृष्टि खुले पर पाइये, उत्तम भाव विचार ॥७॥
गुरु मिले तब जानिये, आवागमन नसाय ।

यम की फांसी कटगई, पदवी मिली महान ॥८॥
गुरु समान रक्षक नहीं, देखा नैन पसार।
कुल कुटुम्ब सब स्वारथी, करें अधिक उपकार ॥९॥
गुरु समान दाता नहीं, दीनी दात अमोल।
क्या कोई जाने दात वह, ताको मोल न तोल ॥१०॥
गुरु समान नहिं मीत कोई, चार लोक जग माहिं।
निःकामी परस्वारथी, ऐसा कोई नाहिं ॥११॥
गुरु माता गुरु पिता हैं, गुरु भ्राता गुर मीत।
गुरु सम प्रीतम जगत में, मोहि न आवे चीत ॥१२॥
गुरु को सब कुछ जानिये, निसदिन कीजे सेव।
गुरु साहेब गुरु साइयां, गुरु हैं सच्चे देव ॥१३॥

[२०५-६३५]

पुरुष भेद नहीं पावे कोई। जब लग माया भरम न खोई ॥
छाया में सब रहे भुलान। रवि शशि का फिर मिले न ज्ञान ॥
सूरज एक आकास प्रकाश। ताका प्रतिबिम्ब आभास ॥
तत्वों का जब करे विचार। तब सूझे संसार असार ॥
त्याग असार सार तब गहे। बिन परखे कोई कैसे कहे ॥
दोहा सांख्य योग के मनन से, देखे माया रूप।
उर अन्तर अपने लखे, तब निज सत्य स्वरूप ॥

[२०६-६३६]

माया तो भई मोहनी, मोह लिया संसार।
गुरु की कृपा अपार से, कोई भया भव पार ॥१॥
माया के सेवक सभी, राजा रंक फकीर।
निसदिन मारे बान तक, बेधे सकल शरीर ॥२॥
माया तो फांसी भई, फांस लिये सब कोय।
केवल गुरु की कृपा से, मुक्ति होय तो होय ॥३॥

गुरु को माथे राखिये, सुनिये बचन विचार ।
गुरु कृपा से साधुवा, छूटं सकल विकार ॥४॥

(२०७-६३७)

दोहा जीवन मुक्त के बात में, बात बात में बात ।
ज्यों कदली के पात में, पात पात में पात ॥

॥ चौपाई ॥

सुन सतगुरु उपदेश साधु, सुन सतगुरु उपदेश ॥
पढ़ लिख के औरन समझावे । आप सांच का भेद न पावे ॥
भरम में भरमें और भरमावे । भूल भरम में सबही फँसावे ॥
उनका तज दे संग साधु, उनका तज दे संग ॥
सत्त असत्त की अकथ कहानी । भूले पंडित भूले ज्ञानी ॥
उनसे बचकर चल अभिमानी । इनकी बातें हैं मनमानी ॥
यह हैं निपट अनाड़ी, साधु यह हैं निपट अनाड़ी ॥
पढ़ा लिखा पर भेद न पाया । हाथ न उनके कुछ भी आया ॥
झूठी काया झूठी माया । इनसे क्यों नर नेह लगाया ॥
समझबूझ कर काम साधु, समझबूझ कर काम ॥
मान बड़ाई में क्यों भूला । निसदिन फिरता फूला फूला ॥
काल जाल का कठिन है झूला । सहेगा अन्त में जम का सूला ॥
मानुष जनम सुधार साधु, मानुष जनम सुधार ॥
चरन कमल प्रभु चित्त लगाओ । अपनी बिगड़ी आप बनाओ ॥
भक्ति भाव का ढोल बजाओ । प्रेम प्रीत की महिमा गाओ ॥
जासों हो निस्तार साधु, जासों हो निस्तार ॥

(२०८-६३८)

बुन्द सिन्ध का रूप है, सिन्ध बुन्द का रूप ।
बुन्द सिन्ध के रूप में, झलके अगम अनूप ॥१॥

पहिले बुन्द का मान है, पीछे सिन्ध का ज्ञान ।
बुन्द सिंध दोनो तजे, तब पावे निरवान ॥२॥

बुन्द चला सत सिंध को, समझ समझ पग धार ।
जब देखा निज रूप को, भया सार का सार ॥३॥

झगड़ा पड़ा अनेक का, लख आवे नहीं एक ।
धोके में नर तन गया, मिला न सार विवेक ॥४॥

॥ चौपाई ॥

एके एक रहा भरपूर । सबके निकट नहीं कुछ दूर ॥
सिन्ध बुन्द में रहा छुपाई । परखे बुन्द तो सिन्ध लखाई ॥
घट समुद्र में लहर अपार । लहर मध्य व्यापा संसार ॥
सतगुरु मिले लगावे पार । बिन सतगुरु डूबे मंझधार ॥
बिरला गुरु का सेवक पूरा । जो रन चढ़े वह सच्चा सूरा ॥

दोहा नाव बनाई शब्द की, चढ़ बैठे कोई साध ।
शब्द घाट जो ऊतरे, ताका मता अगाध ॥

[२०९-६३९]

सतसंगत से लाभ उठाया । गुरु से परमारथ धन पाया ॥
परमारथ स्वारथ सब त्यागी । गुरु चरनन का रहूं अनुरागी ॥
गुरु की पूजा गुरु की सेवा । गुरु सम कोई न जाने देवा ॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी । गुरु ने बिगड़ी बात सँवारी ॥

(२१०-६४०)

गुरु ने युक्ति सहज बताई । मेट दिया जग अगमपाई ॥
सुमिरन से भव का भय भागा । ध्यान बढ़ा चित्त अनुरागा ॥
शब्द से कटे मोह के जाल । सेवक फिर हुआ आज निहाल ॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी । या विधि टूटे बन्धन भारी ॥

(२११-६४१)

करम धरम है गुरु की सेवा। सतसंग ज्ञान विचार का मेवा॥
भक्ति भाव गुरु रूप का ध्यान। सुरत पाय पद अति हरखान॥
तुर्या अलख गुरु की लख है। जोति शब्द का अन्तर मुख है॥
जो कोई इन तीनों को पावे। जड़ चेतन का भर्म मिटावे॥
ग्रन्थी खुले निज रूप निहारे। जोति शब्द का भेद विचारे॥
सबको त्यागो करो विचार। राधास्वामी धामी है सबका सार॥

(२१२-६४२)

करम धरम तज शरन में आओ। गुरु चरनन से आस लगाओ॥
मेटे द्वन्द का भरम पसारा। सूझे सार असार का सारा॥
सुमिरन भजन ध्यान घट अंदर। तब प्रगटे हिय शब्द निरंतर॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी। गुरु की दया से हुआ भव पारी

[२१३-६४३]

प्रारब्ध पहले बन आया। ताके पीछे जनम रचाया॥
पेट में नर की किया संभार। दे अहार पाछे करतार॥
मां की छाती दूध उत्पावे। पाले पोसे बड़ा करावे॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी। मौज गुरु की लेउ निहारी॥

(२१४-६४४)

क्रियमान कर्म सहज ही कटे। संचित कर्म भी चित से हटे॥
प्रारब्ध में प्रबलताई। बिना भोग नहीं काटा जाई॥
ताते मौज का लेउ सहारा। भोगो भोग में करो विचारा॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी। प्रारब्ध भोग को मेटत जारी॥

(२१५-६४५)

नेकी करे तो नेकी आवे। बदी करे बद का फल पावे॥
जो औरन को खोदे कुआँ। आपहि डूबे गिरकर वहां॥

जो औरन को जहर खिलावे। उसका पुत्र बन्धु मरजावे॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी। करम भरम की बात है नियारी

(२१६-६४६)

मन बुद्धि चित में जब नहीं मेल। फिर साधन का बने न खेल॥
चंचल मन में शान्ति न आवे। भ्रान्ति भरम का दुख बहु पाये॥
आसन टिके न ध्यान लगावे। परमारथ धन हाथ न आवे॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी। गुरु ने बताई युक्ति सारी॥

(२१७-६४७)

जैसा कृष्ण राधा को कहे। राधा के मुँह वैसा सुने॥
अनुचित बानी अनुचित मन। अनुचित कथन का अनुचित सुन॥
जैसा सोचे तैसा रूप। सोच से कोई रंक नहीं भूप॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहार। जैसा ध्यान वैसा व्यौहार॥

(२१८-६४८)

द्वेष भाव से द्वेष की आंच। राग जो उपजे तब हुये सांच॥
कृष्ण असुर के काल कहावे। सुर देवता मित्र ठैरावे॥
जसोदा नन्द के नन्हे बालक। ब्राह्मण साधु के वह कुल पालक॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी। मित्र शत्रु मन अधम खिलारी॥

(२१९-६४९)

झूठ मुट खेलूँ सांचा होय। सांचा खेले बिरला कोय॥
जो कोई झूठे सतसंग आय। सांचा सतसंग का फल पाय॥
झूठ त्याग सत को दे चित। साहेब सांचा उसका मीत॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी। सतसंगत की महिमा भारी॥

(२२०-६५०)

जो कोई बोले बातें सांच। ताको कभी न आवे आंच॥
जाके हृदय सांच का बासा। ताके मन प्रभु करें निवासा॥

मौज निहार करे सेवकाई। साईं उसके सदा सहाई ॥
राधास्वामी चरन शरन बलिहारी। सांच की आप करें रखवारी ॥

(२२१-६५१)

ब्रह्म न बनो कथो नहीं ज्ञान। सीखो गुरु से साधन ध्यान ॥
कथनी छांड़ करनी चितलाओ। करनी द्वारा रहनी पाओ ॥
सुरत शब्द की लागे तारी। तब घट प्रगटे भेद अपारी ॥

(ज्ञान अज्ञान विचार)

[२२२-६५२]

दोहा चार अठारह षट पढ़े, पढ़ पढ़ जनम सिरान।
बिना योग साधे कहां, उपजे उत्तम ज्ञान ॥

रज सत तम में रहे भुलाई। मन मूरख की थाह न पाई ॥
मन के उरझे उरझे प्रानी। मन नहीं सुरझा भरम भुलानी ॥
काम क्रोध मद घाटी दुर्गम। चढ़े न जब लग कैसा शम दम ॥
बिन शम दम नहीं पूरा ध्यान। बिना ध्यान कहो कैसा ज्ञान ॥
बाहर मुखी जगत में डोलें। बिन समझे बूझे बहु बोलें ॥

दोहा योग करे जब तब लहे, घट अन्तर का भेद।
तब छूटे संसार यह, मिटे भरम भव खेद ॥

[२२३-६५३]

दोहा सिंह पड़ा भव कूप में, छाया अपनी देख।
बूड़ मरा मंजधार बिच, देखो करम की रेख ॥

छाया माया दोउ असार। छाया माया है संसार ॥
जब लग छाया माँहि रहावे। तब लग भव दुख अधिक सतावे ॥
अहं ब्रह्म हंकार निवास। अहंकार में जम का फाँस ॥
बात बनाई जग भरमाया। आप फँसा औरन फँसवाया ॥
मान ध्यान और बुद्धि विलास। ताते होय न अविद्या नास ॥

दोहा झांई में छांई पड़ी, झांई पड़ी न देख।
झांई झांई लख परे, दरसे अगम अलेख॥

(२२४-६५४)

दोहा मिथ्या जग को सब कहें, मिथ्या कथन विचार।
मिथ्या कहि मिथ्या फँसे, मिथ्या माहिं विचार॥

मिथ्या का नर करे विचार। तज मिथ्या पद पावे सार॥
मिथ्या की अति असत कहानी। सतपद मिथ्या से अलगानी॥
मिथ्या कारज मिथ्या कारन। मिथ्या है सब सूक्ष्म विचारन॥
मिथ्या अव्याकृत बिराट। मिथ्या हिरण्यगर्भ का ठाट॥
मिथ्या तेजस विश्व पराग। दोऊ तजे खुले तब भाग॥

दोहा शुद्ध भावना शुद्ध चित, शुद्ध विवेक बिराग।
घट पट से ऊँचे चढ़े, खेले सत से फाग॥

[२२५-६५५]

दोहा तीन अवस्था तीन गुन, तीन बरन तिउं काल।
इनसे जब ऊँचे चले, तब चौथा पद चाल॥

जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति माया। तुर्या चौथा पद निर्माया॥
सृष्टि स्थिति परलय माहीं। चत्री शूद्र अरु वैश रहाईं॥
तुर्या पद में सत्य समाना। सोई ब्रह्म ब्राह्मण कोई जाना॥
गृही ब्रह्माचारी बन बासी। तीनों त्याग हुये सन्यासी॥
सन्यासी में सहज उदास। सन्यासी कोई गुरु का दास॥

दोहा सगुन रूप त्रय गुन विषय, निर्गुन चौथा धाम।
निर्गुन सगुन ते ऊपरे, तुर्यातीत का ठाम॥

[२२६-६५६]

दोहा साधन से सब होत हैं, करम धरम के काम।
बिन साधन नहीं पाइये, परमतत्व का धाम॥

जेहि विधि जीव फँसा संसार । तिसि विधि ताका करे निरवार ॥
कर निरवार ग्रन्थी हिये खोले । युक्ति मिलावे न मुख से बोले ॥
जड़ चेतन की गांठी परी । शान्ति भाव सो मन से हरी ॥
मन अशान्त अज्ञान समाना । तिमिर भरम में अति अकुलाना ॥
अकुल विकुल में दुख कलेश । केहि विधि सुने गुरु संदेश ॥

दोहा श्रवन मनन निध्यासन, सतसंग में चित धार ।
गुरु की दया अपार से, उतरे भव जल पार ॥

(२२७-६५७)

दोहा गोपी गोप हैं गुप्त वृत्ती, मधु सूदन करतार ।
वृन्दावन बन तन आय के, लीला करे अपार ॥

आनन्द नन्द रूप पितु सोई । माया जसुमत माता होई ॥
निश्चर रूप अविद्या कंस । बूड़ा उग्रसेन का बंस ॥
ताहि मार दश द्वार सिधारा । राधा सुरत किया सिंगारा ॥
रुक्मिणी जाम्बवन्ती सतभामा । सुन्दर अद्भुत विमल ललामा ॥
सुरत निरत सब अति कर साधी । द्वारका फिर जा लगी समाधी ॥

दोहा जो कोई जाने भेद यह, ताको कहिये साध ।
जो नर पड़े विवाद में, करें नित्य अपराध ॥

[२२८-६५८]

गुरु के चरन जाऊँ बलिहारी । जिन यह मौज दिखाई न्यारी ॥
मन माया से पार लगाया । सब्द भेद दे सार बताया ॥
सहसकमलदल घाटी तोड़ी । सुरत निरत गुरु चरनन जोड़ी ॥
घट में भान किया प्रकाश । तिमिर अविद्या का लगा नास ॥
त्रिकुटी चढ़ सुन खंड में आया । भँवरगुफा बंसी बजवाया ॥

दोहा सोहंग धुन घट में सुनी, भँवरगुफा के पास ।
राधा सुरत निर्मल भई, कृष्ण संग किया विलास ॥

(२२६-६५६)

भान उदय हुआ कमल विकास । मोहे मधुप सरोज सुवास ॥
विगसत कँवल मगन आनन्द । सुरत निरत के खुल गये बन्द ॥
बन्द खुले सुरत ऊपर चाली । लीला देख भई मतवाली ॥
निज स्वरूप का पाया भेद । छूट गये भव के भ्रम भेद ॥
हरखत मन गुरु चरन समानी । सत्त पुरुष की सुन ली बानी ॥

दोहा बानी सुन देही तजी, पाया पद निर्वान ।
राधास्वामी चरन में, मिल गया ठौर ठिकान ॥

(२३०-६६०)

इन्द्र प्रस्थ वह देश अनूप । राजा जहां युधिष्टर भूप ॥
पाँच तत्व ले रचा शरीर । आये बसे वहाँ धीर गम्भीर ॥
अन्धा धृतराष्ट अज्ञान । ले सौ पुत्र किया अति हान ॥
भीष्म द्रोण सब साज सँवारे । भारत रन में चढ़ पद गाड़े ॥
कृष्ण सहाय भये पान्डुन के । मारे खल दल छत्री बांके ॥

दोहा गये हिमालय जाय सब, पान्डव मंगल खान ।
राधास्वामी की दया, पाया यह सत ज्ञान ॥

[२३१-६६१]

पदम पद्मनी नीर में, गगन मंडल में भान ।
दृश्य नेह स्वभाव का, देखे सज्जन आन ॥१॥
पद्म गगन की ओर दृष्टि, रवि धरती की ओर ।
दोनों मन मोहन बने, दोनों ही चित चोर ॥२॥
पदम पद्मिनी उच्च चित, नीच चित्त है सूर ।
ऊँच नीच दोऊ कल्पित, मद माया कर चूर ॥३॥
रवि दयाल का रूप है, दीन दुखी से प्यार ।
ऊँच की दृष्टि नीच पर, महिमा अगम अपार ॥४॥
सूरज की हानी नहीं, परम की ओर निहार ।

कृष्ण सुदामा की दशा, परखे परखन हार ॥५॥
राधास्वामी दीन हित, दीन दुखी के काज।
सतपद तज प्रगटे जगत, सन्त साध दल साज ॥६॥

[२३२-६६२]

पदम रहे जल जगत में, सूरज बसे आकास।
दृष्टि गगन की ओर कर, पदम सूर के पास ॥१॥
पदम रंग हैं प्रेम का, प्रेम शक्ति के संग।
प्रेम की शक्ति संग ले, धार गुरु का रंग ॥२॥
शक्ति भक्ति चित युक्ति है, युक्ति मुक्ति व्यौहार।
शक्ति भक्ति चित युक्ति धर, मुक्ति का पन्थ संवार ॥३॥
घट में प्रेम की शक्ति जब, चढ़ चल शब्द की धार।
गगन मंडल सुन्न शिखर पर, सहज समाध सुधार ॥४॥
समता संजम साध ले, हो जा साध सुजान।
सत संजोग के योग से, ले अब पद निरवान ॥५॥
जल में रह जल से अलग, पदम बतावे तोह।
यही साध की रीत है, त्याग भरम मद मोह ॥६॥
मुरगाबी जल में रहे, गोते खाये अनेक।
पर नहीं भीगे नीर से, यही पदम चित टेक ॥७॥
राधास्वामी की दया, पाया भेद अपार।
पदम भानु की दशा लख, हो रहा जग से न्यार ॥८॥

[२३३-६६३]

हनुमत कुंड अस्नान कर, देखे पदम अनेक।
पूछा तुम तो कई हो, रवि है गगन में एक ॥१॥
पदम हँसे हँस बोल कर, दृष्टि गगन की ओर।
समझ नेह की रीत कुछ, नहीं मुख से कर शोर ॥२॥
स्वामी सबका एक है, एक एक है एक।

सेवक दास समान चित, जग में रहें अनेक ॥३॥
पाल प्रेम परतीत को, धर सतगुरु का ध्यान ।
सूरज एक आकास का, घट घट में दरसान ॥४॥
एक एक है एक है, एक एक के भाव ।
एक के प्रेम प्रतीत से, मिले प्रेम का दाव ॥५॥
घटे नहीं बाढ़े सदा, पाये मेह की धार ।
सीख प्रेम यह पदम से, सहित विवेक विचार ॥६॥
भक्ति के मारग आय कर, अघट प्रेम घट धार ।
सुरत शब्द की डोर गह, जाय गुरु दरबार ॥७॥
सूरज पदम समान दोऊ, एक रूप एक ढंग ।
गुरु चेला मिल एक हों, जो चित प्रेम का रंग ॥८॥
राधास्वामी भज सदा, निसदिन आठों धाम ।
जीवन सुख है जगत में, अन्त में सत्त पद ठाम ॥९॥

[२३४-६६४]

जल में पदम का वास है, सूरज बसे आकास ।
पदम का यह इच्छा भई, करे सूर की आस ॥१॥
धरती गगन का भेद लख, मन मेरा भया उदास ।
बोला पदम प्रतीत कर, मैं सूरज के पास ॥२॥
आस आस जग है बंधा, आस सहित विश्वास ।
जो जाके मन में बसे, सो है उसके पास ॥३॥
जैसी मति गति सोई लखे, कोई गुरु का दास ।
घट धरती सुरत सेवका, गगन मंडल गुरु वास ॥४॥
दृष्टि फेरकर ऊँच सिर, घट गुरु रूप निहार ।
सुरत शब्द अभ्यास से, सतगुरु का दीदार ॥५॥
पदम भानु की प्रीत को, समझे साध सुजान ।
राधास्वामी की दया, पावे पद निरवान ॥

— इति —